भूमिका

आज तक मैंने अपनी कहानियों के विषय में न तो गम्भीरता से कुछ सोचा, न लिखा, और न लिखवाया। अपनी खुशी में किसी ने कुछ लिख दिया, किसी ने आलोचना कर दी तो हरि-इच्छा...

मुझे इतना याद है कि जब से मैंने होश सभाला तभी से कहानिया लिख रहा हू। घर में साहित्य की कोई परम्परा नहीं थी। पूर्वजों में सीधे-सादे किसान थे, या ऐसे लोग जिन्हें सेना में दिलचस्पी थी। मेरे ताऊ के देहात वाले घर में वे हथियार दबे हुए थे जिनसे हमारे बुजुर्ग अंग्रेजों के विरुद्ध लड़ते रहे। मेरे स्वर्गीय पिताजी कुछ पढ-लिखकर अध्यापक बन गए थे। उन्नति की तो हैडमास्टर बने।

कहानिया लिखने की प्रेरणा मेरे भीतर से ही उठी। न मैंने अपनी कहानिया किसी गोष्ठी में पढ़ीं, और न किसी साहित्यकार को सुनाकर उससे सलाह-मशविरा ही लिया मेरा वातावरण ही ऐसा था।

दस-ग्यारह वर्ष की आयु में मैंने कहानिया, लिखनी प्रारम्भ कर दी थीं। उन दिनों मैं चक बहलोल, जिला गुजरावाला (पश्चिमी पाकिस्तान) में रहता था। वह गाव पक्की सड़क से कई मील की दूरी पर था। इस छोटे-से गाव का कोई महत्त्व नहीं था। गारे और कच्ची ईंटों के बने हुए गाव के विषय में अब सोचता हू तो यू लगता है जैसे वह-कोई बड़ी अद्भुत बस्ती थी। वहा कुछ साहूकार, और अधिकतर किसान आदि रहते थे।

ऐसे वातावरण में मैंने कहानियां लिखनी आरम्भ कीं। सारे गांव में केवल एक व्यक्ति को मेरी कहानियों में रुचि थी, और वह मुझे महान साहित्यकार समझता था। मैं उसे चाचा कहा करता था। उसका नाम कीम अली असगर था। मेरे ताऊ बताते हैं कि यूनानी हिकमत में वह अद्वितीय था। लेकिन उसकी रुचियां हिकमत तक ही सीमित नहीं थीं। उसे औरतें भगाने और कसरत करने का भी शौक था। हर समय कोई न कोई फौजदारी खड़ी किए रहता था। आज से लगभग दस वर्ष पूर्व, यानी पाकिस्तान बन जाने के बाद अली असगर अपने जवान बेटे सहित एक लड़ाई मे कत्ल कर दिया गया। यह बात भी मुझे अपने ताऊ जी की जबानी पता चली। मुझे बड़ा दुःख हुआ।

उन दिनों कहानी लिख लेने पर मैं हकीम अली असगर के पास जाता और कहता, "चाचा, मैंने नई कहानी लिखी है।"

वह बड़ा खुश होता। अपनी दवाइयों की दुकान के आगे गोबर से लिपे चबूतरे पर मुझे बिठाकर वह कहानी सुनता। कहानी सुनता और ..र धुनता। यद्यपि उनमें से एक भी कहानी मैंने छपने के लिए नहीं .जी—वह इस योग्य नहीं थीं—लेकिन इसमें सन्देह नहीं कि अगर हकीम अली असगर ने मुझे इतना उत्साहित न किया होता तो कहानी लिखने का मेरा चाव भी समाप्त हो जाता।

मैं लगभग साढ़े तीन सौ कहानियां लिख चुका हूं, जो सबकी सब किसी न किसी पत्रिका में छप चुकी है। देश के विभाजन से पूर्व ही मैं न जाने कितनी कहानियां लिख चुका था। प्रारम्भ में कुछ समय के लिए उर्दू में लिखता रहा, परन्तु विभाजन के पश्चात् मैंने केवल हिन्दी में लिखना आरम्भ किया और मेरा झुकाव अधिकतर उपन्यासों की ओर बढ़ा। विभाजन से पूर्व मेरी कहानियों के चार संग्रह लाहौर में प्रकाशित हो चुके थे। एक संग्रह राजेन्द्रसिंह बेदी—अपने प्रकाशन से छापने जा रहे थे। दो-चार संग्रहों की कहानियां अन्य प्रकाशकों के पास थीं परन्तु, विभाजन की भगदड़ में वे पाण्डुलिपियां सदा के लिए नष्ट हो गईं, क्योंकि मैंने अपनी कहानियों की प्रतिलिपियां कभी अपने पास नहीं रखीं, और छपी हुई कहानियों की फाइल भी नहीं बनाई।

मैं अपनी कहानियों से सदा उदासीन ही रहा। आरम्भ में निस्सदेह मुझे लिखने का शौक था फिर बाद में कहानिया लिखना बोझ-सा प्रतीत होने लगा। जब मुझे कहानिया लिखने का दौरा पडता था, तो मेरी लेखनी से कहानिया यू निकलती थीं जैसे मशीनगन से गोलियाँ। फिर, महीनों तक कुछ लिखने की ओर ध्यान ही नहीं जाता था। इस विचार से ही मन ऊबने लगता था।

मेरा सारा जीवन कटी पतग की तरह रहा। बहुत पढा, बहुत लिखा लेकिन कही जड नही पकड पाया। मानसिक रूप से मैं सदैव खानाबदोश रहा। कहानी लिखकर दोबारा उस पर कभी दृष्टि नही डाली। पहले कुछ वर्षों को छोड़कर मैं कहानी किसी न किसी विवशता के कारण ही लिखता था। मैं किसी भी विषय पर कहानी लिख लेता था। कोई विशेष दर्शन या दृष्टिकोण मेरे सम्मुख कभी नही रहा। न ही कहानी के फार्म के विषय मे मैंने कोई सिद्धान्त बनाया। जीवन मे जब, जहा और जिस चीज़ ने प्रभावित किया, उसी पर कहानी लिख डाली।

चूकि मैंने कभी गम्भीरता से कहानी-कला पर ध्यान नहीं दिया, इसलिए मैं इस पर किसी विशेष ढग से लेख भी नहीं लिख सकता। मैं इस विषय पर बातें ही कर सकता हू, और बातें ही करूगा।

अब तक मेरे पाठकों के मन मे यह प्रश्न निश्चय ही उठा होगा कि कहानी-कला के प्रति मेरी इस गैरज़िम्मेदारी का क्या परिणाम निकला। क्या इस क्षेत्र मे मेरी कोई उपलब्धि भी है?

इस विषय पर मैं इसके अतिरिक्त अधिक कुछ नहीं कहूगा कि मेरी कहानिया अधिक से अधिक सराही गई। मुझे महान् कहानीकार भी कहा गया। इस समय मैं केवल उपेन्द्रनाथ अश्क के कुछ शब्द प्रस्तुत करूंगा। अपनी पुस्तक 'हिन्दी कहानी—एक अन्तरग परिचय' में अश्क जी ने लिखा है :

"बलवन्तसिंह के यहा न कृश्न चन्दर जैसा आक्रोश है, न मटो जैसा विक्षोभ और न बेदी जैसी करुणा। मानव की नियति के विचार से उनके होंठों पर सहज एक मुस्कान आती है और वही मुस्कान होंठों पर लिए हुए वे मानव को अपनी कहानियों मे उकेरते चले जाते हैं। इस

लिए कभी-कभी और कहीं-कहीं बलवन्त मुझे अपने इन समकालीनों की
अपेक्षा बड़े कलाकार लगते हैं।—पंजाब के देहातों के—यों कहें कि
सिक्ख जाटों के—चित्रण में उनका कोई सानी नहीं है।"

अश्क जी की यह राय दिलचस्प है।

कहानी के 'विषय और फार्म' की बहस बहुत पुरानी है। कुछ ही
दिनों पूर्व लोकभारती प्रकाशन में बैठे हुए हिन्दी के एक विख्यात उप-
न्यासकार मुझसे कह रहे थे कि वह फार्म पर अधिक ध्यान देते हैं।
उनकी दृष्टि में विषय का इतना महत्त्व नहीं था जितना कि फार्म का।
व्यक्तिगत रूप से मैंने कभी फार्म और विषय को अलग करके इस पर
विचार नहीं किया। मैं पहले ही बता चुका हूं कि मेरी कहानियां जंगली
फूलों के समान हैं। मैंने कहानी के सिद्धान्त को जाने बिना ही कहानियां
लिखनी आरम्भ कर दीं, और लिखता चला गया। इतने समय बाद
अब गौर किया तो इस निष्कर्ष पर पहुंचा कि प्रत्येक कहानी के विषय
का अपना एक फार्म होता है। इन दोनों में से किसी एक को अधिक
त्व देना मेरे विचार में उचित नहीं। इसमें काफी वाद-विवाद की
जाइश है, लेकिन मेरी सदा से यही भावना रही है...और अब इसमें
परिवर्तन की कोई सम्भावना नहीं है।

कहानियों का यह संग्रह 'मेरी प्रिय कहानियां' के अन्तर्गत प्रस्तु
किया जा रहा है। इस संग्रह की कहानियों का चुनाव मेरी विभाज
से पूर्व से लेकर सन् सत्तर तक की कहानियों में से किया गया है।
अभी से यह बता देना चाहता हूं कि वास्तव में मुझे अपनी कोई कहा
प्रिय नहीं है। सामान्यतः जैसे मैं अपने कपड़े को अपना समझता हूं, उ
पसन्द करता हूं या नापसन्द करता हूं, इसी तरह मैं इन कहानियों
अपनी कहता हूं, और इनमें से कोई प्रिय भी लगती है। मगर जब मैं गह
दृष्टि से देखता हूं तो अपनी कहानियों से कोई नाता नहीं जोड़ पात
मैं इस बात को तनिक और स्पष्ट कर दूं। मुझे जब कहानी लिख
होती है, तो बस मैं उसे शीघ्रता से लिख कर अपना पीछा छुड़ा ले
चाहता हूं। उस कहानी को जांचता नहीं, उसकी नोक-पलक नहीं संवा

ौर उसके समाप्त हो जाने पर उसकी भाषा या फार्म आदि मे किसी कार का परिवर्तन नही करता। कहानी लिखने बैठता हू तो ज्यो-ज्यो हानी अपने अन्त की ओर बढ़ती है, त्यों-त्यों मेरे मन मे उसके प्रति ठोरता की भावना दृढ होती जाती है। कहानी पत्रिका मे छप जाए ो उसे पढने की मुझे कोई उत्सुकता नही होती। प्रत्येक कहानी लिखकर से अनाथाश्रम में दाखिल कर देता हू। शायद इसीलिए मेरी असख्य हानिया नष्ट हो गई है। अपनी कहानियो के प्रति मेरी रुचि की छान-बीन कोई मनोवैज्ञानिक ही कर सकता है।

कहानियां लिखने का मेरा ढग भी एक-सा नहीं है। प्रत्येक कहानी अपने अदाज से आती है, और अपने अदाज से ही कागज पर उतरती है। कुछ कहानिया रगीन तितलियो की तरह होती है। वे हल्के-फुलके अदाज से चेतना मे उभरती है, और हल्के-फुलके अदाज से ही शब्दो में समा जाती हैं। परन्तु कई कहानिया बहुत परेशान भी करती हैं। मैं उनसे घबराता हू। उनका मेरा सम्बन्ध बहुत ही कष्ट दायक होता है। यू लगता है कि जैसे मैं किसी सुनसान घने जगल मे अकेला खड़ा हूं। उस निस्तब्धता मे मुझे दूर से सूखे पत्तों पर किसी के चलने की आवाज सुनाई देती है। वे कदम मेरी ओर बढने लगते है। मैं नहीं जानता कि वह कौन है। वह कोई पशु है या मनुष्य, कोई वन देवी है या कोई दैत्य! मैं उससे बचकर भाग निकलना चाहता हू। वह अनजानी वस्तु मेरा पीछा करती है। मैं जान तोड कर भागता हू, लेकिन फिर मेरे और उसके बीच की दूरी पल-पल पर कम होती जाती है। यहा तक कि जब मुझे यह अनुभव होता है कि मैं उसके चगुल मे फसने वाला हू तो मैं कोई बड़ी-सी चट्टान धकेल कर उसके मार्ग में खड़ी कर देता हू। इस तरह मैं उससे अपना पीछा छुड़ा लेता हू, और कुछ समय के लिए मुझे शान्ति प्राप्त हो जाती है'''लेकिन ऐसी मुठभेड़ एक ही बार नहीं होती। यह क्रम चलता ही रहता है।

कभी-कभी मेरे मन मे विचार आता है कि काश! मैं कोई ऐसी कहानी लिख सकता जिससे मैं पूर्ण रूपेण सन्तुष्ट हो सकता। लेकिन मैं अपनी किसी कहानी से इतना सन्तुष्ट नही हो सकता। शायद यह

मेरे लिए या किसी भी कहानीकार के लिए अच्छा ही है। मैं अपनी कहानियों में से लगभग सौ कहानियों के विषय में सरलतः कह सकता हूं कि वे गनीमत हैं, और मुझे पसन्द हैं। इसके साथ ही मैं यह बात दोहराए बिना नहीं रह सकता कि मेरी कहानियां प्रायः एक-दूसरे से बहुत भिन्न होती हैं। इसी संग्रह की कहानी 'रंग' को लीजिए। मैंने इसे विभाजन से पूर्व लिखा था। इसमें कोई प्लॉट नहीं है, नायक नहीं है, नायिका नहीं है, यहां तक कि कोई समस्या भी नहीं है। यह अपने प्रकार की एक ही कहानी है। पढ़ते समय लगता है कि यह कहानी ही है, लेकिन समाप्त होने पर ज्ञात होता है कि इसमें कहानी कला की शर्तें पूरी नहीं हुई। एक पहाड़ी स्थान पर एक रेस्टोरेण्ट में कुछ समय का चित्रण इस कहानी में प्रस्तुत किया गया है। यहां भारत पर शासन करने वाले अंग्रेज और साधारण भारतीय अफसर कुछ समय व्यतीत करने आते हैं। उनके अपने-अपने अंदाज की हल्की-फुलकी झलकियां भी हैं। सम्भवतः कुछ लोग इसे कहानी न कह कर अकहानी कहेंगे। मैंने ऐसी भी कुछ कहानियां लिखी हैं जिन्हें 'एब्सर्ड्‌ कट' कहा जा सकता है। मैंने अतियथार्थवाद के भी कुछ प्रयोग किए हैं।

इसी प्रकार 'तीन बातें' भी विभाजन के पहले की कहानी है। उन दिनों जबकि द्वितीय महायुद्ध हो रहा था, मैं लाहौर में था। सेना में भर्ती का ज़ोर था। जगह-जगह विज्ञापन के तख्ते लगे हुए थे जिनमें एक सैनिक तीन उंगलियां उठाकर लोगों को सेना में भर्ती होने का निमंत्रण देता था। वे तीन बातें आप कहानी में पढ़ लेंगे। भूखे भारत के लोगों के लिए इन बातों का बहुत महत्त्व था। यह एक व्यंग्य था कि भारतीय अंग्रेजों की सेना में देशभक्ति से प्रेरित होकर भर्ती नहीं होते थे; अपितु उनके सम्मुख केवल ये तीन बातें ही रहती थीं—विदेशी शासनकाल में भर्ती के विरुद्ध ऐसी कहानी लिखना खतरे से खाली नहीं था। परिणाम यह हुआ कि पंजाब की सी० आई० डी० काफी समय तक मेरे पीछे लगी रही।

आपने देख लिया होगा कि 'रंग' और 'तीन बातें' एक दूसरे से कितनी भिन्न हैं। अब एक और कहानी लीजिए जिसका नाम 'दीमक' है। यह

कहानी एक ऐसी स्त्री के चारों ओर घूमती है जो अब प्रौढ़ होने को है। उसके बच्चे बालिग हो रहे हैं और वह स्वयं गृहस्थी के उत्तरदायित्वों में फंसी हुई है। मगर पति को उस समय भी जीवन से कुछ और रस निचोड़ लेने की लगन है। पत्नी इस बात को समझती है। कुछ कहना-सुनना व्यर्थ है। उसे अपनी पूरी गृहस्थी को सफल बनाना है। शायद उसे यह भी आभास होता है कि कभी उसका पति भी अपने उत्तरदायित्व को स्पष्ट रूप से देख सकेगा। फिर भी उसके अपने मन में एक घुन-सा लग चुका है''' यहीं पर कहानी समाप्त हो जाती है।

यह कहानी उपर्युक्त दोनों कहानियों से भिन्न है।

'काली तित्तरी' की पृष्ठभूमि पंजाब है। इसके पात्र और वातावरण बिल्कुल पृथक हैं। इस प्रकार की मैंने कई कहानियां लिखी हैं। उपन्यास भी लिखे हैं। ऐसी कहानियों के पात्र अधिकतर बहिर्मुखी होते हैं। उनके चिन्तन में लम्बाई और चौड़ाई तो होती है लेकिन गहराई नहीं होती। इन्हें हम द्वि-आयामी (two-dimensional) चेतना के पात्र कह सकते हैं। मनुष्य होने के नाते उनके सम्मुख भी वही समस्याएं उपस्थित होती हैं जैसी दूसरों के सम्मुख आती हैं। मगर जो समाधान वे करते हैं वह दिलचस्प भी होता है और भिन्न भी।

मैंने हास्य-रस की कहानियां भी लिखीं। इसका एक नमूना आपको इस संग्रह में मिलेगा 'एक ही नाव पर'। मैं इसके विषय में अधिक कुछ नहीं कहूंगा, लेकिन मुझे विश्वास है कि पाठक इसे पढ़कर प्रसन्न होंगे।

'आत्माभिमान' भी बहुत पसन्द की गई थी। यह एक बूढ़े की कहानी है जिसने जीवन पर्यन्त कभी किसी के सामने हाथ नहीं फैलाया। मगर उसका भाग्य उसे एक ऐसे मोड़ पर ले आता है जहां अनजाने में ही उसका बनाया हुआ यह सिद्धान्त खण्ड-खण्ड हो जाता है। मैंने यह कहानी अंग्रेज़ी में भी लिखी जो बम्बई की 'इलस्ट्रेटेड वीकली' में छपी थी।

'तीसरा सिग्रेट' कहानी में हमारे समाज का एक कठोर पक्ष चित्रित है।

कहानी की कथावस्तु में अधिक जोड़-तोड़ उचित नहीं है। प्रायः बड़े-बड़े कहानीकार इस जोड़-तोड़ से बचते हैं। यहां तक कि कहानी के अन्त में एकाएक कोई आश्चर्यजनक मोड़ देना भी अच्छी बात नहीं

समझी जाती। रूस के कहानीकार चेखोव इस बात से बचकर रहते थे। लेकिन अमरीकी कहानीकार ओ० हेनरी प्रायः इसी का अवलम्ब लिया करते थे। चाहे यह बात अच्छी है या बुरी, मैंने ऐसी कहानियां भी लिखी हैं। उदाहरणतः 'ज़िन्दगी का खुशबूदार मोड़', 'अंधेरा उजाला', 'तीन देवियां', और 'वनवास'। इनमें रोमांस भी है, कथावस्तु भी है, और अन्त में चकित कर देने वाला मोड़ भी है।

'कली की फरियाद' में एक अनजान लड़की के प्रति समाज का अन्याय दिखाया गया है। लेकिन उसके मन की चीख उसके कण्ठ से बाहर नहीं निकल पाती।

यहां मैं यह भी कह देना चाहता हूं कि मैंने अपनी सभी सुप्रसिद्ध कहानियां इस संग्रह में एकत्र नहीं कर दी हैं। इसमें अलग-अलग अंदाज की कहानियां हैं, ताकि इसे पढ़ने के बाद पाठक को मेरी दूसरी कहानियों में भी कोई मनपसन्द बात मिल जाए। यही नहीं, अपितु मुझे विश्वास है कि उन्हें कुछ कहानियां ऐसी भी मिल जाएंगी जिनकी कल्पना इस संग्रह की कहानियां पढ़कर नहीं की जा सकती। मेरी एक कहानी है 'देवता का जन्म'। वह काफी लम्बी है, इसलिए इस संग्रह में नहीं दीजा सकी। उसकी पृष्ठभूमि आज से हज़ारों वर्ष पूर्व का प्राचीन मिस्र है। विषय यह है कि मनुष्य पुराने देवता छोड़ेगा तो नये देवता अपना लेगा—वह बिना देवता के रह नहीं सकता।

मैं पहले ही कह चुका हूं कि मेरी कहानियों का विस्तार इतना अधिक है जितना कि स्वयं जीवन। मैंने कभी अपने-आपको किसी सिद्धान्त या कट्टर दृष्टिकोण की सीमाओं में बन्दी बनाकर नहीं रखा। कहानियों के साथ जीवन-भर मेरा मसखरापन चलता रहा। आज से दस-ग्यारह वर्ष पूर्व लीवर ब्रदर्स ने अपने वनस्पति घी डालडा के विषय पर लिखी गई कहानियों पर पुरस्कार देने की घोषणा की। कुछ लोगों के भड़काने में आकर मैंने डेढ़ पन्ने की कहानी लिखी और तीन हज़ार रुपये का प्रथम पुरस्कार जीत लिया। अब दूसरा पक्ष यह है: विभाजन से पूर्व तीन वर्षों तक एक साहित्यिक पत्रिका में वर्ष भर की कहानियों में से आठ-दस सर्वोत्तम कहानियों का चुनाव किया जाता रहा। यह

कहानी एक ऐसी स्त्री के चारों ओर घूमती है जो अब प्रौढ़ होने को है। उसके बच्चे बालिग हो रहे हैं और वह स्वयं गृहस्थी के उत्तरदायित्वों में फंसी हुई है। मगर पति को उस समय भी जीवन से कुछ और रस निचोड़ लेने की लगन है। पत्नी इस बात को समझती है। कुछ कहना-सुनना व्यर्थ है। उसे अपनी पूरी गृहस्थी को सफल बनाना है। शायद उसे यह भी आभास होता है कि कभी उसका पति भी अपने उत्तरदायित्व को स्पष्ट रूप से देख सकेगा। फिर भी उसके अपने मन में एक घुन-सा लग चुका है'''यहीं पर कहानी समाप्त हो जाती है।

यह कहानी उपर्युक्त दोनों कहानियों से भिन्न है।

'काली तित्तरी' की पृष्ठभूमि पंजाब है। इसके पात्र और वातावरण बिल्कुल पृथक हैं। इस प्रकार की मैंने कई कहानियां लिखी हैं। उपन्यास भी लिखे हैं। ऐसी कहानियों के पात्र अधिकतर बहिर्मुखी होते हैं। उनके चिन्तन में लम्बाई और चौड़ाई तो होती है लेकिन गहराई नहीं होती। इन्हें हम द्वि-आयामी (two-dimensional) चेतना के पात्र कह सकते हैं। मनुष्य होने के नाते उनके सम्मुख भी वही समस्याएं उपस्थित होती हैं जैसी दूसरों के सम्मुख आती हैं। मगर जो समाधान वे करते हैं वह दिलचस्प भी होता है और भिन्न भी।

मैंने हास्य-रस की कहानियां भी लिखीं। इसका एक नमूना आपको इस संग्रह में मिलेगा 'एक ही नाव पर'। मैं इसके विषय में अधिक कुछ नहीं कहूंगा, लेकिन मुझे विश्वास है कि पाठक इसे पढ़कर प्रसन्न होंगे।

'आत्माभिमान' भी बहुत पसन्द की गई थी। यह एक बूढ़े की कहानी है जिसने जीवन पर्यन्त कभी किसी के सामने हाथ नहीं फैलाया। मगर उसका भाग्य उसे एक ऐसे मोड़ पर ले आता है जहां अनजाने में ही उसका बनाया हुआ यह सिद्धान्त खण्ड-खण्ड हो जाता है। मैंने यह कहानी अंग्रेज़ी में भी लिखी जो बम्बई की 'इलस्ट्रेटेड वीकली' में छपी थी।

'तीसरा सिग्रेट' कहानी में हमारे समाज का एक कठोर पक्ष चित्रित है।

कहानी की कथावस्तु में अधिक जोड़-तोड़ उचित नहीं है। प्रायः बड़े-बड़े कहानीकार इस जोड़-तोड़ से बचते हैं। यहां तक कि कहानी के अन्त में एकाएक कोई आश्चर्यजनक मोड़ देना भी अच्छी बात नहीं

समझी जाती। रूस के कहानीकार चेखोव इस वात से वचकर रहते थे। लेकिन अमरीकी कहानीकार ओ० हेनरी प्रायः इसी का अवलम्व लिया करते थे। चाहे यह वात अच्छी है या बुरी, मैंने ऐसी कहानियां भी लिखी हैं। उदाहरणतः 'ज़िन्दगी का खुशबूदार मोड़', 'अंधेरा उजाला', 'तीन देवियां', और 'वनवास'। इनमें रोमांस भी है, कथावस्तु भी है, और अन्त में चकित कर देने वाला मोड़ भी है।

'कली की फरियाद' में एक अनजान लड़की के प्रति समाज का अन्याय दिखाया गया है। लेकिन उसके मन की चीख उसके कण्ठ से वाहर नहीं निकल पाती।

यहां मैं यह भी कह देना चाहता हूं कि मैंने अपनी सभी सुप्रसिद्ध कहानियां इस संग्रह में एकत्र नहीं कर दी हैं। इसमें अलग-अलग अंदाज़ की कहानियां हैं, ताकि इसे पढ़ने के बाद पाठक को मेरी दूसरी कहानियों में भी कोई मनपसन्द बात मिल जाए। यही नहीं, अपितु मुझे विश्वास है कि उन्हें कुछ कहानियां ऐसी भी मिल जाएंगी जिनकी कल्पना इस संग्रह की कहानियां पढ़कर नहीं की जा सकती। मेरी एक कहानी है 'देवता का जन्म'। वह काफी लम्वी है, इसलिए इस संग्रह में नहीं दी जा सकी। उसकी पृष्ठभूमि आज से हज़ारों वर्ष पूर्व का प्राचीन मिस्र है। विषय यह है कि मनुष्य पुराने देवता छोड़ेगा तो नये देवता अपना लेगा—वह विना देवता के रह नहीं सकता।

मैं पहले ही कह चुका हूं कि मेरी कहानियों का विस्तार इतना अधिक है जितना कि स्वयं जीवन। मैंने कभी अपने-आपको किसी सिद्धान्त या कट्टर दृष्टिकोण की सीमाओं में वन्दी वनाकर नहीं रखा। कहानियों के साथ जीवन-भर मेरा मसखरापन चलता रहा। आज से दस-ग्यारह वर्ष पूर्व लीवर ब्रदर्स ने अपने वनस्पति घी डालडा के विषय पर लिखी गई कहानियों पर पुरस्कार देने की घोषणा की। कुछ लोगों के भड़काने में आकर मैंने डेढ़ पन्ने की कहानी लिखी और तीन हज़ार रुपये का प्रथम पुरस्कार जीत लिया। अब दूसरा पक्ष यह है: विभाजन पूर्व तीन वर्षों तक एक साहित्यिक पत्रिका में वर्ष भर की कहानियों में आठ-दस सर्वोत्तम कहानियों का चुनाव किया जाता रहा। यह

चुनाव इतना कड़ा होता था कि इन तीन वर्षों में किसी भी कहानीकार की कहानी एक बार से अधिक नहीं चुनी गई। लेकिन मेरी कहानी प्रति वर्ष चुनी गई। उस समय मंटो, कृश्न चन्दर, बेदी तथा कई और कथाकार अपनी चरम सीमा पर थे।

मेरे जीवन में एक प्रकार का उखड़ापन रहा। अब तक बिना नकेल के ऊंट की भांति इधर-उधर भटकते हुए जीवन व्यतीत हुआ है। इस भटकने का परिणाम यह हुआ कि मनुष्य और समाज के नित्य नये पक्ष नेत्रों के समक्ष आते रहे। जिस अवसर पर जिस वस्तु ने प्रभावित किया उसी पर कहानी लिख दी, बिल्कुल उसी प्रकार जैसे चित्रकार चित्र बनाता चला जाता है। उसके चित्रों में फूल भी होते हैं, कांटे भी। हसीन शक्लें भी होती हैं, और चीथड़े लटकाए दुर्भाग्य के शिकार बच्चे और स्त्रियां भी। वह सुन्दर से सुन्दर और हल्के-फुलके रंग भी लगाता है, और गहरे तथा गम्भीर रंगों से भी काम लेता है। कुछ चित्रकार ऐसे भी हो सकते हैं जिनकी रुचि केवल एक ही प्रकार के रंगों में हो। मैं उनमें से नहीं हूं।

चित्रकारी की चर्चा चली तो मेरा ध्यान अनायास ही यूरोप के एक बहुत विख्यात और महत्त्वपूर्ण चित्रकार की ओर आकर्षित हो गया। मैं उसका नाम नहीं बताऊंगा क्योंकि मैं किसी प्रकार भी इस योग्य नहीं हूं कि मेरा और उसका नाम एक ही सांस में लिया जा सके। इतना अवश्य है कि उसके विषय में लिखे गए कुछ शब्द मुझ पर भी चरितार्थ होते हैं। यह अलग बात है कि उसकी तुलना में मेरा स्थान बहुत नीचा है। वे शब्द ये हैं :

There is neither unity nor continuity nor stability in his work, as there is none in his life......He wants to be entirely free, free to remake the world to his liking, free to exercise his omnipotence—no rules, no conventions, no prejudice.

इतनी कहानियां लिख लेने के बाद भी मुझे थकान की अनुभूति बिल्कुल नहीं है। यदि इतने ही वर्षों तक मुझे और कार्य करने का

अवसर मिले तो मैं तीन-चार सौ कहानियां सरलता से लिख सकता हूं। यह भूमिका लिखते समय मैं यह बता सकता हूं कि मेरी नवीनतम कहानी 'गुमराह' सारिका, बम्बई के मार्च '७१ के अंक में छपी है, और अगली कहानी 'दूसरा हनीमून' धर्मयुग, बम्बई में मई १९७१ के अंक तक छपने की आशा है।

अन्त में मैं यह कहना चाहूंगा कि कहानी-कला में अपनी त्रुटियों की अनुभूति मुझे मन की गहराई से होती रहती है। मुझमें ऐसी लगन भी नहीं है कि मैं यह कहकर अपने मन को सान्त्वना दे सकूं कि किसी न किसी दिन मैं गन्तव्य पर पहुंच जाऊंगा। इसके विपरीत मेरी उदासीनता की यह दशा है कि किसी भी समय मैं कहानियां लिखना छोड़ सकता हूं। मेरी इन बातों का तात्पर्य यह नहीं है कि अगर मैं अपनी कहानियों के प्रति इतना उदास न होता तो मैं बहुत मार्के की कहानियां लिखता।—नहीं, उस अवस्था में भी मेरी कहानियां इससे बेहतर नहीं हो सकती थीं।

—बलवन्त सिंह

अप्रैल १८, १९७१
५१७, नेता नगर,
नई बस्ती, कीडगंज,
इलाहाबाद

क्रम

अंधेरा-उजाला

पम्मी

मेरा विवाह बडी विचित्र परिस्थितियों में हुआ। उपन्यासों, फिल्मों और कहानियों में तो ऐसी बातें चल जाती हैं, परन्तु वास्तविक जीवन में ऐसा बहुत कम होता है। इसका अर्थ यह भी नहीं कि वास्तविक जीवन में अनहोनी घटनाएं घटित ही नहीं होतीं। वरन् मैं तो कहूंगी कि वास्तविक जीवन में ऐसी घटनाएं भी हो जाती हैं, जिन्हें यदि फिल्मों या उपन्यासों में प्रस्तुत किया जाए, तो लोग विश्वास ही न करें। मेरे विवाह का मामला भी कुछ ऐसा ही है।

जब लडकियां और लडके बड़े हो जाते हैं, तो बडी अजीब और अनोखी हरकतें भी करने लगते हैं। इसी तरह जो माता-पिता अपने लडके या लडकी की पहली शादी करते हैं तो प्रायः वे भी उल्टी-सीधी हरकतें कर डालते हैं। उदाहरणस्वरूप आपको आज शहरों में कुछ ऐसे माता-पिता भी मिलेंगे जो अपनी जवान लडकियों की शादी किसी आई० ए० एस० या फौजी अफसर से करना चाहते हैं। ऐसे माता-पिता भी कम देखने योग्य होते हैं। मैं भी ऐसे ही माता-पिता की बेटी हूं।

कोई यह न समझे कि मैं आई० ए० एस० और फौजी अफसरों से शादी करने के विरुद्ध हूं, या मैंने ऐसे स्वप्न कभी नहीं देखे। परन्तु मेरे इस प्रकार के स्वप्नों का कोई अच्छा परिणाम नहीं निकला। इसमें मेरे

ागी कि मैं किसी और के प्रेम में बंध चुकी थी।

पेताजी देखने में 'जितने मर्द आदमी' नज़र आते थे, वास्तव में ही जोरू के गुलाम थे। यानि मेरी मम्मी के आगे चूं करने का नहीं था उनमें। या शायद यह बात न हो। सम्भवतः वह में महिलाओं का इतना सम्मान करते हों कि मर्दों की आवरू में डुबो देते हों। उनकी मूंछें खूब लम्बी और गुच्छेदार थीं। ाठ, फैले-फैले मर्दाना नथुने, चमकती हुई आंखें चौड़ा माथा था। ; में सिगार, या दांतों में पाइप की डण्डी दबी रहती। उनके ऊंचे और पाटदार होते थे। हर समय सेकेण्ड लेफ्टिनेण्ट या नके आसपास मंडराते रहते थे। आखिर वह चार सुन्दर लड़- बाप थे। पिताजी को फौजी अफसर बहुत पसन्द थे। उनके यही धुन सवार थी कि सबसे बड़ी बेटी की, यानी मेरी, शादी ौजी अफसर से होनी चाहिए।

। फौजी अफसर मेरे डैडी को 'बाब' या 'बॉब' कहा करते थे। का कारण नहीं मालूम। मैं तो पिताजी को डैडी कहा करती ायः अफसर डैडी की बटरिंग करने में लगे रहते। वे कहते, "बॉब, क्ल से बिलकुल ब्रिगेडियर नज़र आते हैं।"

ोई नहीं जानता था कि घर की असली ब्रिगेडियर तो मेरी मम्मी

ारी उम्र उन्नीस वर्ष की थी और उस समय मैं बीसवें वर्ष में रख चुकी थी। मुझसे छोटी बहन सोलह वर्ष की थी। बाकी और बारह के आसपास थीं। हम बड़ी बहनों को आने-जाने वाले रों से खुलकर बातचीत करने की छूट थी। परन्तु हम उनके साथ नहीं जा सकती थीं। मेरी मम्मी बड़ी होशियार थीं। वह हर बहुत ही सोच-विचार के बाद लगाती थीं। कभी-कभी मुझे किसी में जाने की आज्ञा देतीं, तो स्वयं भी साथ हो लेतीं।

लगभग सभी अफसरों का हमसे व्यवहार बहुत अच्छा था। मैं निस्सं- कह सकती हूं कि हमारी युनिवर्सिटी के लड़कों के मुकाबले में वे

देवता-से लगते थे। उनका अपनी बातचीत और हरकतों पर पूरा अधिकार था। उनके आने-जाने में केवल घर में ही नहीं, बल्कि अपने जीवन में भी मुझे अजीब-सी सहमा-सहमी का एहसास होने लगता।

विवाह का विषय उन दिनों सभी के मन को बहुत अच्छा लगता था। चाहे इसके सन्दर्भ में कुछ भी बातचीत न हो, फिर भी सारे वातावरण में शादी का विषय ही छाया रहता था। इस मेल-जोल, बातचीत, हंसी-मज़ाक के पीछे विवाह का ही लक्ष्य छिपा होता था।

हमारे यहां आने-जाने वालों में एक कैप्टेन कौल भी थे, जो मेरे उम्मीदवारों में से थे। इन्हीं के एक मित्र थे, जो न जाने क्यों 'राणा साहब' कहलाते थे। कवि न होते हुए भी बड़े मस्त किस्म के व्यक्ति थे नेपाल के शाही खानदान से सम्बन्धित लोग ही राणा कहलाते हैं, परन्तु इन 'राणा साहब' का गोरखों से दूर का सम्बन्ध भी नज़र नहीं आता था। उनके नयन-नक्श बिलकुल उत्तरी भारत के लोगों जैसे थे। कुछ निकलता हुआ कद, उभरी हुई चमकदार आंखें, बहार की तरह घने गहरे अबरू, लम्बे नथुनों वाली ऊंची नाक थी उनकी, गेहुआ होते हुए भी उनके चेहरे का रंग जगमगाता-सा था। उम्र चवालीस के इधर या उधर। देखने में भी उनकी इतनी ही उम्र नज़र आती, परन्तु इसके बावजूद उनकी शक्ल और व्यक्तित्व में अजीब प्रकार का आकर्षण था। मैंने सुना था कि उन्होंने कभी शादी नहीं की, वह असीम सम्पत्ति के मालिक थे।

कैप्टेन कौल के द्वारा राणा साहब से भी परिचय हुआ। फौजी अफसरों का जीवन और विचारों का ताना-बाना बिलकुल ही अलग होता है। सामान्य व्यक्तियों को वे किसी और ही संसार के रहने वाले लगते हैं। राणा साहब का हिन्दुस्तानी सेना से कभी किसी प्रकार का सम्बन्ध नहीं रहा था। उन अफसरों से बेहतर थी वह उन जैसी हरकतें नहीं करते थे और न उनकी बातचीत का ढंग फौजी मित्रों से मिलता-जुलता था। फिर भी वह उनमें पर्याप्त लोकप्रिय थे। कैप्टेन कौल साहब के साथ ही कभी-कभी वह हमारे यहां आ जाया करते थे। मेरे पिता या मम्मी ने कभी उन्हें सन्देह की दृष्टि से नहीं देखा। हालां-

जवाब और मज़ाकिया तबियत के होने पर भी राणा साहब चुहलबाजी से कोसों दूर रहते थे। वह आते, तो उन्हें बड़े सम्मान से एक आराम कुर्सी पर बैठाया जाता और वह आराम से पाइप या सिगरेट का धुआं उड़ाते रहते। नौजवान अफसरों की बुलबुली हरकतों और बातों का मज़ा लेते और कभी-कभी ऐसी हंसी की बात कह डालते कि हर ओर से वाह-वाह का शोर उठने लगता।

धीरे-धीरे मुझे महसूस होने लगा कि न तो मुझे, और न किसी और लड़की को उनके पास बैठने में कोई झिझक लगती थी। शायद इसलिए कि उनके व्यक्तित्व में एक विशेष आकर्षण था। सो तो था ही, परन्तु ज़्यादा गहराई में सोचने से समझ में आया कि सभी लड़कियां अपने मन में निश्चिन्त थीं कि राणा साहब से उन्हें किसी प्रकार का भी कोई भय नहीं था। इसलिए कभी-कभार ऐसा भी होता कि किसी पार्टी में लड़कियां उनकी बातों का रस लेने के लिए उन्हें घेर लेतीं। उनकी एक-एक बात पर कहकहे लगातीं। वह भी लड़कियों के मनोविज्ञान को भली-भांति समझते थे। जब वह मज़ाकिया बातें करने पर उतारू हो जाते, तो हंसते-हंसते लड़कियों के पेट में बल पड़ जाते।

एक ऐसी ही पार्टी में जब लड़कियां राणा साहब को घेरे बैठी थीं, तब सबके मनपसन्द विषय अर्थात् शादी के विषय पर बातचीत आरम्भ हो गई। राणा साहब भी जानते थे कि जो लड़कियां उन्हें घेरे में लिए हुए थीं, उनमें से हर एक के मन की यही इच्छा थी कि वह किसी न किसी फौजी अफसर की पत्नी बन जाए। परन्तु वह इतने सभ्य थे कि उन्होंने लड़कियों के इस दृष्टिकोण के सम्बन्ध में कभी कुछ नहीं कहा। उस दिन बातों-बातों में बोले, "यदि मैं लड़की होता, तो किसी ऐसे बहुत ही धनी पुरुष से शादी कर लेता, जिसकी निकट भविष्य में मृत्यु की सम्भावना होती। विवाह के बाद वह तो स्वर्ग में पहुंच जाता और मैं इत्मीनान से नया पति तलाश कर लेता···कर लेती।"

इस पर लड़कियों में खलबली मच गई। कई स्वर उठे, "ऐसा तो कोई लड़की नहीं चाहेगी कि वह किसी पुरुष से इसलिए शादी करे कि···"

इस विषय पर खूब तू-तू मैं-मैं हुई। हंसी-मजाक के साथ-साथ कुछ

लड़कियों ने इस बात को ही बुरा कहा। परन्तु कुछ ही दिनों में यह बात आई-गई हो गई।

एक बार मुझे राणा साहब के साथ अकेले में बैठने का मौका मिला, तो मैंने उनका मजाक उड़ाते हुए कहा, "आप भी बस मजे के आदमी हैं। उस दिन आपने भी कैसी बेपर की गप्प उड़ा दी।"

राणा साहब ने अपने दांतों में दबी हुई पाइप की डण्डी को बाहर निकालते हुए कहा, "गप्प!...नहीं, मिस पम्मी, मैंने वह बात पूरी ज़िम्मेदारी और गम्भीरता से कही थी।"

मुझे बड़े जोर की हंसी छूटी और हंसते-हंसते ही मैंने पूछा, "लेकिन राणा साहब, भला ऐसा पुरुष मिलेगा कहां?"

राणा साहब ने मुझे हंसने का पूरा मौका दिया और इसी बीच मेरी ओर अर्थपूर्ण दृष्टि से देखते रहे। जब मेरी हंसी सभली, तो वह बोले, "ऐसा पुरुष मैं हूं!"

अब एकदम ही गहरा मौन छा गया।

दूर के कमरे में दूसरे लोगों की बातों और कहकहों की हल्की-हल्की आवाजें हम तक पहुंच रही थीं। मेरी समझ में नहीं आ रहा था कि मैं क्या कहूं, क्या कहूं? अनजाने में ही मेरी आखें नीचे को झुक गईं।

फिर मेरे कानों में राणा साहब का स्वर सुनाई दिया, "मुझे शादी में कोई दिलचस्पी नहीं। सभी जानते हैं कि मैं कितना धनी हूं। मेरी जायदाद और धन का एक भी वारिस नहीं। न सन्तान, न कोई सगा भाई, न बहन। यदि कोई लड़की मुझसे शादी कर भी ले, तो मेरा-उसका पति-पत्नी का सम्बन्ध नहीं होगा। केवल संसार की दृष्टि में वह मेरी ब्याहता होगी। एक डॉक्टर की राय के अनुसार मैं छः महीने के भीतर ही मर जाऊंगा। इस भेद को और कोई नहीं जानता। अब अगर कोई लड़की..."

एक-दो दिन के बाद मम्मी को मेरी ज़बानी इस बात का ज्ञान हो गया। मैंने तो चुटकुले के तौर पर इसका ज़िक्र किया था, परन्तु वह काफी गम्भीर दिखाई देने लगीं।

दूसरे ही दिन उन्होंने घूम-फिरकर खोज लगानी आरम्भ की कि

राणा साहब वास्तव में कितने धनी थे। जब उन्हें विश्वास हो गया कि राणा साहब सचमुच ही लखपति थे, तो उनका सिर चक्कर खाने लगा।

एक दोपहर को जब मैं अपने कमरे में बैठी थी, तो दूसरे कमरे में मम्मी डैडी से कह रही थीं, "अजी, सुन रहे हैं आप ?...मैंने पम्मी की शादी राणा साहब से तय कर दी है।"

"ऐं ?"

मेरे डैडी इस छोटी-सी 'ऐं' के अतिरिक्त कुछ भी न कह सके। वह और हम सब जानते थे कि जब मम्मी के सिर पर कोई भूत सवार हो जाए, तो वह जल्दी से उतरता नहीं।

शादी हो गई।

मैंने अपने पति के घर में यों प्रवेश किया, जैसे कोई मेहमान कुछ दिन गुज़ारने के लिए वहां गया हो।

ज्यों-ज्यों दिन गुजरने लगे, त्यों-त्यों मुझे इस बात का आभास होने लगा कि मैंने कैसी मूर्खों वाली हरकत कर डाली है। राणा साहब अपनी बात के धनी निकले। हमारी मुलाकात केवल दिन के समय होती थी। निस्सन्देह मैं खाती-पीती, सोती-जागती, हंसती-बोलती थी, परन्तु मन की गहराइयों में मुझे किसीकी मृत्यु का इन्तज़ार था। धीरे-धीरे इस इन्तज़ार की कल्पना से ही मेरे मन में हौल पड़ने लगा।

अजीब जोड़ा था हमारा! पति ने पत्नी को कभी उंगली से भी छूने की कोशिश नहीं की, और पत्नी चुपचाप पति की मृत्यु...

राणा

जब मुझे डॉक्टर कोहली ने बताया कि मैं इस धरती पर थोड़े दिनों का मेहमान हूं और अधिक से अधिक छः महीने और जीवित रह सकता हूं, तो पल-भर को मुझे अपने हृदय में चुभन-सी महसूस हुई। लेकिन शीघ्र ही मैं सदा की भांति शान्त हो गया।

जीवन के प्रति मेरा दृष्टिकोण सदा दार्शनिक रहा है। जीवन में मुझे सभी कुछ तो मिला, केवल वही नहीं मिला, जिसकी मैंने इच्छा ही न की, जैसे पत्नी और बच्चे। मेरा सिद्धान्त यह है कि बाज पुरु

घरेलू प्रकार का जीवन व्यतीत करने के योग्य ही नहीं होते। मैं भी उन्हीं में से एक हूं।

कुछ लोग ऐसे भी होते हैं, जो जवानी में तो बड़े बोहीमियन बनते हैं, लेकिन जवानी के ढलते ही हाथ मल-मलकर पछताने लगते हैं कि काश, उन्होंने भी घर बसाया होता, बच्चे पैदा किए होते। परन्तु मेरी विशेषता यह है कि जिस चीज़ को एक बार ठुकरा दूं, उसके लिए फिर कभी नहीं पछताता। अब तक मैं जीवन की चवालीस बहारें देख चुका हूं। छः महीने में न मरता, तो अधिक-से-अधिक दस-पन्द्रह वर्ष और जी जाता। मेरे जैसे खाने-पीने वाले व्यक्ति लम्बी उम्र नहीं पाते। मैं तो कार भी मुंह-तोड़ गति से चलाता हूं। अतः मेरी मृत्यु मोटर-दुर्घटना में भी हो सकती थी···।

मुझे स्त्री-जाति से घृणा नहीं थी। मेरे जीवन में कई लड़कियां आईं और चली गईं। कभी शादी का विचार भी मेरे मन में नहीं आया। अब डॉक्टर कोहली की ज़बानी यह भविष्यवाणी सुनकर किसी अच्छी-सी लड़की के लिए अपनी सारी जायदाद और सम्पत्ति छोड़कर मरना मुझे बड़ा रोमैंटिक-सा लगा। पम्मी मेरे आदर्श पर पूरी उतरती थी। इसीलिए उसकी मां से शादी का मामला तय हो गया और फिर एक दिन पम्मी को पत्नी बनाकर मैं अपनी विशाल कोठी पर ले आया।

जब मैंने लड़कियों की टोली में बैठकर यह सुझाव दिया था, तो मैंने कल्पना भी नहीं की थी कि सचमुच ही पम्मी से मेरा विवाह हो जाएगा। शादी के बाद की स्थिति मुझे बड़ी दिलचस्प लगी और मैं इसमें रस भी लेता रहा। हम दोनों सच्चे मित्रों की तरह एक छत के नीचे दिन गुज़ारने लगे। अलग-अलग कमरों में सोते थे, लेकिन दिन-भर के कामों में हम एक साथ रहते। नाश्ता, लंच, सैर-सपाटा, सिनेमा आदि सभी में हमारा साथ नहीं छूटता था। धीरे-धीरे जब मुझे पम्मी ज़रूरत से अधिक ही अच्छी लगने लगी, तो मैं बहुत घबराया। पहले मेरा विचार था कि स्त्रियों के सम्बन्ध में मेरी जानकारी बहुत गहरी है। शादी के बाद पता चला कि मेरा वह ज्ञान उथला और अधूरा था। परन्तु अब क्या हो सकता था···।

छः महीने बीत गए। मैं मरा नहीं, और न ही मरने के कोई चिह्न दिखाई दे रहे थे। बेटी ने अपनी मां को मेरे बारे में सब कुछ बता दिया होगा, इसलिए मुझे हट्टा-कट्टा देखकर वह भी बौखला गई। दो-तीन बार उसने मुझे जतलाया कि आपका स्वास्थ्य खराब हो रहा है। इसी बहाने से सास ने दो-तीन अच्छे डॉक्टरों से मेरी जांच करवाई। पता चला कि मेरे शीघ्र मरने की कोई सम्भावना ही नहीं थी। डॉक्टरों ने यह भी कहा कि अगर मैं खाने-पीने के मामले में ज़रा-सा सावधान हो जाऊं, तो काफी लम्बी ज़िन्दगी पा सकता हूं। यानि (बिना सास को मारे) मैं जल्दी मरने वाला नहीं था।

जब मैंने डॉक्टरों को बताया कि डॉक्टर कोहली ने मुझसे क्या कहा था, तो उन्होंने हंसकर टालते हुए बताया कि कभी-कभी डॉक्टर कोहली पर ऐसी झख सवार हो जाती थी कि वह अपने रोगियों के बारे में उल्टी-सीधी भविष्यवाणी करने से भी नहीं चूकते थे।

यह सारी जांच-पड़ताल पम्मी के घर में ही हुई। डॉक्टरों के इस निर्णय पर सास तो सन्नाटे में आ गई। मैं सास को उसी दशा में छोड़कर पत्नी सहित अपनी लम्बी-चौड़ी कार में बैठा और कार हमारे निवास-स्थान की ओर चल दी।

ड्राइवर कार चला रहा था, हम दोनों पिछली सीट पर बैठे थे। मैंने कनखियों से पम्मी की ओर देखा, तो वह संगमरमर की मूर्ति-सी लग रही थी। आखिर मैंने धीरे-धीरे कहना शुरू किया, "सच मानो, पम्मी, मैं अपने-आपको बड़ा अपराधी महसूस कर रहा हूं। तुम समझती होगी कि मैंने तुम्हें बड़ा घटिया धोखा दिया है। लेकिन सचमुच ही डॉक्टर कोहली ने मुझसे यही कहा था। चूंकि मुझे जीने-मरने में ज़्यादा दिलचस्पी नहीं थी, इसलिए मैंने किसी और डॉक्टर से मशविरा ही नहीं लिया। आज इन डॉक्टरों की ज़बानी पता चला कि कोहली साहब कितने गैरजिम्मेदार आदमी हैं। जो कुछ भी हो, मुझे तो मरना ही चाहिए। मैं तुमसे वायदा करता हूं कि मैं आत्महत्या कर लूंगा।"

इतने में ही हम हनुमान जी के मन्दिर के सामने पहुंचे, तो पम्मी के [illegible] पर ड्राइवर ने कार रोक दी। वह उतरी और मन्दिर में चली

गई। थोड़ी देर बाद वह लौट आई, तो कार फिर चल दी।

मैंने पूछा, "तुम किस काम से गई थी वहां ?"

पम्मी की मम्मी

हाय ! हाय !···यह क्या मुसीबत खड़ी हो गई। मेरी लाडली का जीवन बर्बाद हो गया। राणा ने तो हम सबको अच्छा उल्लू बनाया। छः महीने इन्तजार करने के बाद डॉक्टरों ने कह दिया कि वह तो अभी हट्टा-कट्टा है। यह सुनकर मेरे तो हाथ-पांव फूल गए। डॉक्टर विदा हुए, तो मैं बेचैनी से इधर-उधर टहलने लगी।

बार-बार यही ख्याल आता था कि न जाने मेरी बच्ची का रो-रोकर कितना बुरा हाल हो रहा होगा। आखिर मुझसे न रहा गया। मैं अपनी खटारा गाड़ी में बैठकर सीधी पम्मी की कोठी पहुंची। दबे पांव जाकर चुपके से देखा, तो पिछले बरामदे में रंगीन फूलों की बेल के नीचे वे दोनों घुल-मिलकर बातें कर रहे थे। राणा ने पूछा, "पम्मी, तुमने यह नहीं बताया कि तुम मन्दिर में क्या करने गई थी ?"

पम्मी ने अपनी आंखें राणा की आंखों में डाल दीं और फिर प्रेम में कांपते हुए स्वर में बोली, "मैंने एक मन्नत मान रखी थी···।"

"कैसी मन्नत ?"

इस पर पम्मी ने दोनों हाथ अपनी आंखों पर रखकर चेहरा राणा की गोद में छिपा लिया···

यह देखकर मेरे पांव के नीचे से धरती निकल गई। मैं बिना उनसे बात किए उल्टे पांव लौट आई।

घर पहुंची, तो पम्मी के डैडी पहले तो अजीब नजरों से मुझे देखते रहे, फिर पूछने लगे, "क्या बात है ? इतनी बौखलाई हुई क्यों हो ?"

न जाने मैं क्या कहना चाहती थी, परन्तु मेरे कानों ने अपने ये शब्द भी सुने, "··· वे एक-दूसरे से लिपट रहे थे, प्यार कर रहे थे···।"

उन्होंने मेरी ओर यों देखा, जैसे मुझे पागलखाने में भेजने की सोच रहे हों। उन्हें बीच की बात का कुछ पता नहीं था। वह पाइप का धुआं नाक में से उड़ाते हुए बोले, "इस पर तुम क्यों बौखला रही हो ?"

तीन बातें

खैलसिंह गुरुद्वारा डेरा साहब के आंगन में सोया होता, तो उसे मुंह-अंधेरे ही जागना पड़ता। चूंकि गुरुद्वारे में सुबह-ही-सुबह 'शब्द कीर्तन' शुरू हो जाता था, और आंगन की सफाई के लिए मुसाफिरों को जगाना पड़ता था, इसलिए उस दिन वह छत पर सोया, और देर तक सोया रहा। यहां तक कि सूरज निकल आया, और तेज़ धूप में शेरे-पंजाब महाराज रणजीतसिंह की समाधि का कलश जगमगा उठा।

कीर्तन शुरू हो चुका था, और गुरु-प्रेम के मतवाले नर-नारी जमा हो रहे थे। खैलसिंह को अपनी गफलत पर बड़ी शर्म महसूस हुई। जब वह गांव में था, तो कभी इतनी देर से नहीं उठता था। लेकिन जब से वह लाहौर में आया था, दिन-भर आवारागर्दी करने के बाद इतना थक जाता था कि सूरज निकलने तक खर्राटे भरता रहता था।

लेटे-लेटे उसने अपने पांव पर निगाह डाली। उसके पांव बड़े-बड़े थे, और टखनों की हड्डियां किसी बैल की हड्डियों से कम न थीं। उसकी टांगें बहुत लम्बी थीं, और लम्बी दौड़ों में हिस्सा लेने की वजह से वे मज़बूत और सुडौल भी हो गई थीं।

कुछ देर इसी तरह लेटे रहने के बाद वह एकदम उछलकर उठ बैठा। इधर-उधर नज़र दौड़ाई। जो लोग रात को उसके साथ छत पर सोए थे, उनमें से अधिकतर जा चुके थे। उसने आंगन की ओर झांककर देखा, जहां औरतें छोटे-छोटे घूंघट निकाले, हाथों में दोने और कटोरियां

पामे इधर-उधर घूम रही थी।

अपने घर मे भी वह इसी तरह उछलकर उठ बैठता था। यहा उसे कोई काम न था। पहाड़-सा दिन काटे नही कटता था। चार दिनो से वह गुरुद्वारे के लगर से रोटी खा रहा था। थोड़ी-सी नक़दी जो उसके पास थी, शरवत और लस्सी पीने में खर्च हो रही थी। उसके पास अब सिर्फ चन्द आने बाकी रह गए थे। और वह नही जानता था कि इसके बाद उसका गुजारा कैसे होगा। वह शराफत का कुछ ऐसा कायल भी न था। वह लटके हुए गल्लो वाले बनियो को बड़ी खौफनाक नजरो से घूरा करता था। लेकिन यह लाहौर था। वह गहमागहमी, यह लगातार आमद-रफ्त! कोई इक्का-दुक्का मिल जाए, तो वह एक-दो धौल जमाकर कुछ हथियाले। उसे याद आया कि'''पाच-छ महीने पहले वह और उसके साथी गाव के एक साहूकार के घर मे आधी रात के वक्त जा घुसे। जब कुछ हाथ न आया तो जल्दी मे उन्होने तेरह बोरिया गेहू की उड़ा ली। लेकिन पकड़े गए। तीन साथी तो सजा पाकर बड़े घर पहुच गए, मगर उसका और उसके एक साथी का जुर्म साबित न हो सका। आइन्दा के लिए उसने तौबा तो न की, अलबत्ता सभल गया। एहतियात की चन्द वजहे और भी थी। एक तो गिरफ्तारी की सूरत मे उसे बचानेवाला कोई न था—बाप मर चुका था, और मा बेचारी लाचार थी। दूसरे अमरकौर ने, जिससे उसे बहुत ज्यादा मोहब्बत थी और जो कोमल शरीर और धार्मिक विचारो की लड़की थी, उससे कहा, "अगर तुम जेल चले गए, तो मैं कुछ खाकर मर जाऊगी।"

खैरासिह जानता था कि वह जिद्दी लड़की जो कुछ कहती है, उसे पूरा कर दिखाती है। चुनाचे उसकी प्रेमिका और उसकी मा ने मिल-जुलकर उसे इस बात पर राजी कर ही लिया कि वह शहर मे जाकर कोई नौकरी तलाश करे, ताकि वे लोग आराम से जिन्दगी बसर कर सकें।

उसकी प्रेमिका, अमरकौर, उम्र के विचार से कही ज्यादा सयानी और दूरदर्शी थी। उसने खैरासिह के दिल मे बजाय आवारगी के, घर का प्यार पैदा करने की कोशिश की। उनका एक घर होगा। वे दोनो

खूब मज़े में वड़े प्यार से रहा करेंगे। उनके यहां नन्हे-मुन्ने वच्चे पैदा होंगे, फिर उनकी गृहस्थी में कितना आनन्द होगा। खैलसिंह की कुन्द खोपड़ी इन वातों को मुश्किल से समझती थी। उसका अक्खड़ दिल घर के खिचाव से दूर ही रहा। लेकिन जब शाम के धुंधलके मे कस्सी की पटरी पर अमरकौर गीली मिट्टी का तसला सिर पर जमाए, हंस-हंसकर इस किस्म की वातें करती, तो उसकी तेज़ी से घूमनेवाली चमकदार आंखें और पतले-पतले होंठ उसे बहुत ही भले मालूम होते, और उसकी वाछें खिलने लगतीं जैसे अमरकौर मिठाई का दोना हो। अगर वह अमरकौर का ऐसा शैदाई था, तो घर, घर का प्यार और वच्चे तो मामूली वातें थीं। लेकिन जव अमरकौर देखती कि वह उसकी वातों की तरफ ध्यान देने की वजाय लालच-भरी नज़रों से उसके गालों और होंठों की तरफ देख रहा है, तो सिटपिटाकर टूटे हुए स्प्रिंगवाली घड़ी की तरह खामोश हो जाती। "ओ···हो···हो···हो······" खैलसिंह उसे दोनों वाजुओं में भर लेता। उसकी छोटी-छोटी मूंछें हिलने लगतीं।

"भई अमरो, देखो, मुंह मत फुलाओ। धरम से, जो तुम कहोगी वही करूंगा।"

"तो मैं क्या कह रही थी···तुमसे ?" अमरकौर चमककर पूछती।

"सुनो, अमरू, मेरी मोटी अक्ल इन वातों को नहीं समझ सकती। तुम मुझे समझाने की कोशिश मत करो। वस मुझे इतना वता दो कि मैं क्या करूं।"

फिर वह उसके तमतमाते हुए गालों पर होंठ रख देता। अमरू उसे प्यार करने की इजाजत भी दे देती, और साथ ही अपनी झिड़कियां भी जारी रखती—"देखो···कोई आ रहा है···कोई देख लेगा···अब कभी नहीं आऊंगी इस जगह।···वस देख लेना, हां···"

उनके घर के करीव ही अमरू की गाय वंधी रहती थी। शाम के वक्त अमरू वहां दूध दुहने के लिए आती थी। जव वह उधर से गुज़रता, तो उचककर एक नज़र इधर ज़रूर डाल लेता। अगर अमरू दिखाई देती, तो पहले इधर-उधर देखकर इत्मीनान कर लेता, और गुनगुनाने लगता—

'नी''''''लच्छिए वदाम रंगिए,
तैनूं लैन कबूतर आया''''''

'जो बोले सो निहाल !' गुरु के मतवालों ने नारा बुलन्द किया। खैलसिंह चौंक उठा। अब 'प्रसाद' बाटा ही जानेवाला था। उसने इधर-उधर देखकर, अपना कंघा सभाला, और बिखरे बालों को समेटने के बाद जल्दी से पगड़ी बांधी, और चादर कंधे पर डालकर तहमद की सिलवटें दुरुस्त करता हुआ सीढ़ियों से नीचे उतरा। मुह पर पानी के छींटे दिए, और पगड़ी के शमले से चेहरा पोंछा। गुरुद्वारे के दरवाजे पर निहंग सिक्खों को खड़े देखकर, बड़ी पवित्रता के भाव से पांव भी धो डाले, और दरवाजे की चौखट फलांगकर अन्दर दाखिल हुआ। पहले एक मर्तबा उसने गलती से चौखट पर पांव रख दिया था, तो सेवादार ने आखें दिखाकर टोक दिया था।

प्रसाद बाटा जा रहा था। उसने पहले तो सामने से हाथ बढ़ाकर प्रसाद लिया, फिर पैंतरा बदलकर दूसरी तरफ हाथ बढ़ाकर प्रसाद ले लिया। प्रसाद देनेवाले को जरा शक हुआ। जब जरा चक्कर काटकर उसने तीसरी मर्तबा हाथ बढ़ाए, तो प्रसाद बांटनेवाले को गुस्सा आ गया। बोला—"सरदारजी, बड़े अफसोस की बात है !"

वाकई बात अफसोस की थी। लेकिन वह सुबह इसी हलवे से नाश्ता किया करता था। और ऊपर से पाव-भर दही की लस्सी पी लेता था। गाव में तो हर शख्स को पाव-भर हलवा दिया जाता था, लेकिन यहां''' ये शहरी लोग छः माशा हलवा देकर रह जाते थे। चुनाचे खैलसिंह ने कहा—"ज्ञानी जी, इतना-सा हलवा तो हमने जिन्दगी में पहली मर्तबा देखा है।'''यह तो बस हथेलियों से चिपककर रह जाता है।"

प्रसाद बाटनेवाले के तेवर बिगड़ गए। "सरदार साहब, प्रसाद आखिर प्रसाद है।'''इसका यह मतलब नहीं कि प्रसाद ही से पेट भर लिया जाए।"

खैलसिंह इस किस्म के तर्क से वाकिफ नहीं था। चुपचाप एक तरफ सरककर खड़ा हो गया। जब सभी मतवाले चले गए, तो वह एक कोने में सीमेण्ट के ठंडे फर्श पर पालथी मारकर बैठ गया। इतने में ज्ञानी जी

सामने दिखाई दिए, और एक वड़े दोने में पाव-डेढ़ पाव हलवा डालकर उसे दे गए। खैलसिंह हैरान रह गया। जब हलवा खाकर वह बाहर निकला, तो पाव-भर दही में सेर-भर पानी डलवाकर लस्सी पीने लगा।

लस्सी पीने के बाद, वह सीधे बुड्ढ दरिया की तरफ चल दिया। दो दिन पहले वह सरदार बुधसिंह लकड़ीवाले के यहां गया था। वे उसके गांव के रहनेवाले थे। उन्हें एक मुलाज़िम की ज़रूरत थी, और वह खैलसिंह को नौकरी देने को राज़ी हो गए थे। लेकिन यह बात बुधसिंह के बेटे हरनामसिंह के साथ हुई थी। इसलिए वह बुधसिंह से मिलने के लिए आज फिर वहां आया था। बुधसिंह को काम में लगे देखकर, खैलसिंह कोने में पड़ी हुई चारपाई पर बैठकर ऊंघने लगा।

खैलसिंह कुछ पढ़ा-लिखा भी था। दो जमातें पास कर चुका था। तीसरी जमात में एक मर्तबा जब मास्टर ने उसे ज़्यादा देर तक मुर्गा बनाए रखा, तो उसने पढ़ना-लिखना छोड़ दिया। इसके अलावा उसने अंग्रेज़ी पढ़ने की कोशिश भी की थी। चुनांचे वह 'ए' से 'जेड' तक सारे हरफ पढ़ लेता था, और उनमें से कुछ को लिख भी सकता था।

काम से निबटकर बुधसिंह ने उसकी तरफ ध्यान दिया। उसकी नज़र कमज़ोर थी, और ऊंचा भी सुनता था। चुनांचे खैलसिंह को उसके करीब पहुंचकर और चिल्ला-चिल्लाकर अपना मकसद बयान करना पड़ा। बड़ी मुश्किल से बुड्ढे ने बताया, कि उनके पहले मुलाज़िम का खत कल ही आया है, और वह दो-चार रोज़ तक वापस आनेवाला है। इसलिए वे उसे नहीं रख सकते।

इधर से जवाब पाकर खैलसिंह ने सबील से पानी पिया, और शहर की तरफ चल दिया। अब वह बिलकुल निराश हो चुका था। उसने सोचा कि आज सैर करके कल गांव वापस चला जाए। वह बड़ी-बड़ी उम्मीदें लेकर शहर आया था। अब क्या मुंह लेकर वापस जाएगा। वह एक बेफिक्र और आवारा मिज़ाज नौजवान था। इस किस्म की पाबन्दियों और मजबूरियों से कभी पाला नहीं पड़ा था।

घूमते-घामते वह शाही मोहल्ले के नज़दीक एक धर्मशाला में पहुंचा। वह दिन में एकाध मर्तबा इस धर्मशाला में चला आया करता था। यहां

का ग्रंथी अलबेली तबियत का नौजवान शख्स था। इन दोनों में कुछ बेतकल्लुफी पैदा हो गई थी। मगर खैलसिंह ने उसे कभी अपना राज-दार नहीं बनाया था। ग्रंथी उसे अभी तक एक खाता-पीता जमींदार समझता था।

वक्त काटने के लिए खैलसिंह दोपहर को वहां पहुंच जाता। वे दोनों फर्श पर ठंडे पानी का छिड़काव करते, बिजली के पंखे तले ईंटों के बने हुए ठंडे फर्श पर लेट जाते, और इधर-उधर की गप्पें हांकते रहते। नींद आती तो सो भी जाते।

आज वह वक्त से कुछ पहले ही पहुंच गया था। जब सीढ़ियां चढ़-कर हाल में दाखिल होने लगा तो देखा कि बगलवाले कमरे में ग्रन्थी रीठों के पानी से सिर धो रहा है। उसे देखकर ग्रन्थी ने कहकहा लगाया। दो-चार बातों के बाद खैलसिंह अन्दर चला गया। उसने सुराही में गिलास में पानी उडेला और आहिस्ता-आहिस्ता पीने लगा। दरअसल उसे सख्त भूख लग रही थी। कई दिनों से वह लंगर की रोटियां खा रहा था। अब उसे शर्म महसूस हो रही थी। उसने सोचा, कि अब वह कम-से-कम एक वक्त का खाना वहां न खाएगा।

पंखा खोलकर उसने पगड़ी उतारी, और फर्श पर लेट गया। ग्रन्थी नहाने के साथ-साथ बातें भी किए जाता था। उसकी बेतुकी बातों में खैलसिंह अपनी भूख को बहलाने लगा। थोड़ी देर बाद ग्रन्थी अपने लम्बे-लम्बे बाल निचोड़ता हुआ अन्दर दाखिल हुआ, और एक बड़े मजे की बात शुरू कर दी।

इतने में एक शख्स उन्हें खाने पर बुलाने आया। श्राद्धों के दिन थे। खैलसिंह दिल में बहुत खुश हुआ, कि आज पेट-भर खाना मिलेगा। मामूली से तकल्लुफ के बाद खाने में शरीक हो गया। खाना खा चुकने के बाद, उसपर ऐसी गहरी नींद छाई, कि शाम तक उसकी आंख न खुली।

उठते ही उसने नल के ठंडे पानी से स्नान किया तो तबियत खुश हो गई। ग्रन्थी ने शक्कर के ठंडे शर्बत में सत्तू घोल रखा था। उसने आगे बढ़कर दो लोटे पिए। वह सत्तू का बड़ा शौकीन था।

दुबारा पगड़ी बांधकर, उसने ग्रन्थी से विदा ली। उसने बताया कि

उसका काम खत्म हो चुका है, और वह कल अपने गांव लौट जाएगा। इसपर ग्रन्थी ने बड़े तपाक से हाथ मिलाया, और ताकीद की कि वह जब कभी लाहौर आए, तो उससे ज़रूर मिले।

यहां से वह बाज़ार की सैर करने के लिए चल खड़ा हुआ। अनारकली में घूमता हुआ, वह नीलागुम्बद जा निकला। वहां उसने लकड़ी के बड़े-बड़े तख्तों पर तरह-तरह की तस्वीरें देखीं। एक तस्वीर में पहाड़ का दृश्य दिखाया गया था। पहाड़ में जगह-जगह बिल बने हुए थे। इधर-उधर पत्थरों पर बड़े-बड़े चूहे दौड़ते हुए दिखाए गए थे। नीचे लिखा था—"जापानी चूहे हैं ! इन्हें मार भगाओ !" यह तस्वीर देखकर, खैलसिंह बहुत खुश हुआ। खासकर चूहों की सूरतें देखकर उसे बड़ी हंसी आती थी। यानी जिस्म तो चूहों की तरह, और सिर आदमियों के। बाज़ चूहों ने ऐनकें भी लगा रखी थीं। वह सोचने लगा कि जब वह गांव में जाकर अमरकौर से इन चूहों का ज़िक्र करेगा, तो वह किस कदर खुश होगी, कितनी हैरान होगी। फिर उसने दिमाग पर ज़ोर दिया, कि आखिर ये जापानी कौन हैं। ये किस किस्म के चूहे होते हैं ? उसने आज तक इस किस्म के चूहे नहीं देखे थे। उसने पगड़ी सरकाई, सिर खुजाया, गौर किया, लेकिन कुछ न समझ सका।

इतने में किसी ने उसके कन्धों पर हाथ रख दिए। उसने घूमकर देखा। यह उसका एक पुराना दोस्त हरसासिंह था। धूप में उसका चेहरा काले बूटों की तरह चमक रहा था। आधी पगड़ी सिर पर बंधी हुई थी, और आधी इधर-उधर झूल रही थी। खैलसिंह उछलकर उससे लिपट गया।

हरसासिंह भाड़ों के खानदान से था। खैलसिंह को उससे विशेष स्नेह था। हरसासिंह मजबूत जिस्म का, शेरदिल आदमी था। उसे ऐसे-ऐसे हथकंडे याद थे, कि बड़े-बड़े उस्ताद उसके सामने कान पकड़ते थे। दोनों बचपन ही से बहुत गहरे दोस्त थे। हरसासिंह कबड्डी खेलने में उस्ताद था। उसका जिस्म मछली की तरह चिकना और खरगोश जैसा फुर्तीला था, और वह भेड़िए की तरह खूंखार और मक्कार था। जवान

ते ही, उसने बड़े पैमाने पर डाके डालने शुरू कर दिए थे। उसने लाके के एक नामी डाकू, सुन्दरसिंह, से भी साठ-गाठ कर ली थी, और न दोनों ने मिलकर बड़े-बड़े मैदान मारे थे।' बाद में सुन्दरसिंह को सी हो गई, और हरसासिंह फ़रार हो गया। आज उसे अपने सामने खकर खैलसिंह को बहुत खुशी हुई। दोनों एक हलवाई की दुकान में ाखिल हुए। मिठाई खाने के बाद दोनों ने पेट भरकर लस्सी पी।

हरसासिंह ने उसे बताया कि उसने ज़िला अमृतसर में दो ऐसे घर ाड़ रखे है, जहा से माल उड़ाना कोई बहुत मुश्किल नहीं है। यह सुन-र, खैलसिंह बहुत खुश हुआ। इस किस्म की बातों में उसे गहरी दिल-स्पी थी। उसके मन में आने वाले ज़माने की एक बहुत ही दिलफरेब स्वीर खिंच गई। दोनों ने आपस में वादे कर लिए कि वे कल फिर सी जगह मिलेंगे। यह तय करके वे दोनों एक-दूसरे से अलग हो गए।

हरसासिंह के चले जाने के बाद, थोड़ी देर तक खैलसिंह को यों मह-सूस हुआ जैसे उसके दिल पर से भारी पत्थर हट गया हो। लेकिन जब उसे अमरू का ख्याल आया, तो वह कुछ उदास-सा हो गया। अगर उसे मालूम हो गया, कि उसने फिर डाके डालने शुरू किए हैं, तो वह ज़रूर-ज़रूर बिगड़ जाएगी। उसे चोर की बीवी बनना पसन्द न था। इसपर उसने दिल ही दिल में अमरू को दो-तीन गालियां भी दीं। लेकिन वह उससे मोहब्बत करता था, इसलिए उसकी बात को मन से टाल नहीं सकता था। उसने फिर गंभीरता से सोचना शुरू किया। अगर यह मुम-किन हो सके, कि वह सिर्फ एक बार डाका डाल ले, और फिर इस पेशे को तिलांजलि दे दे'''लेकिन अगर वह गिरफ्तार हो गया, तो उसकी ज़िन्दगी बर्बाद हो जाएगी, और अमरू से भी हाथ धोने पड़ेंगे। मां को अलग दुःख होगा। और वह खुद जेल में पड़ा सड़ेगा।

इसी उधेड़-बुन में वह चला जा रहा था। यह काम बहुत मुश्किल था, लेकिन वह तन्दुरुस्त और मज़बूत होने के बावजूद मक्कार न था। वह नहीं जानता था, कि आखिर क्या करे। सड़कों पर बेशुमार मोटरें, बेशकीमत कपड़े पहने हुए अमीर लोग, आला से आला दुकानें, और ऊंचे-ऊंचे मकान देखकर वह हैरान हो रहा था। आखिर इन सबके लिए इस

कदर रुपया कहां से आता है ? वह क्यों अपनी प्रेमिका के साथ शान्ति का जीवन विताने से लाचार है ? इसी तरह के ख्यालों में डूवा हुआ वह एक वाग में जा निकला। एक क्यारी के किनारे पर वड़े से वोर्ड पर मोटे-मोटे शब्दों में लिखा था—

'वहादुरी के सिले में'

वह सोचने लगा, कि 'सिले' क्या होता है। फिर वह गौर से उस नक्शे की तरफ देखने लगा, जिसके नीचे लिखा हुआ था, 'विक्टोरिया क्रास ! मंगलसिंह, आठवीं राजपूताना राइफल्स, को वहादुरी के सिले में विक्टोरिया क्रास दिया गया।'

वह नहीं जानता था कि विक्टोरिया क्रास होता क्या है, और कैसी वहादुरी पर दिया जाता है, और फिर विक्टोरिया क्रास मिलने के वाद क्या होता है। उकताकर, वह परे एक वेंच पर जाकर वैठ गया। उसे अपनी कमअक्ली पर वहुत ही अफसोस हुआ। वह फिर अपने ख्यालों में खो गया, और अपने माथे को उंगलियों से वजा-वजाकर सोचने लगा, कि वह क्या करे, और क्या न करे। वह हरसासिंह से दोवारा मिले या न मिले ?

वह घास पर लेट गया। एक वाज़ू सिर के नीचे रख लिया, दूसरा माथे पर। और अधखुली आंखों से दूर-दूर तक नजर दौड़ाने लगा। सामने ठंडी सड़क के परले सिरे पर वहुत लम्वा-चौड़ा तख्ता लटकाया गया था। उसपर एक खूवसूरत औरत की तस्वीर वनी हुई थी। उस औरत का चेहरा उसके पूरे कद के वरावर था। वह वड़ी-वड़ी आंखों और सुर्ख-सुर्ख गालों वाली एक वहुत हसीन औरत थी। वह हैरान हुआ कि आखिर यह किस औरत का फोटो है। नीचे अंग्रेज़ी के मोटे-मोटे शब्दों में कुछ लिखा था। उसने सोचा कि शायद यह किसी मेम की तस्वीर हो, हालांकि उसने देसी कपड़े पहन रखे थे। मगर उसने सुन रखा था कि अव मेमें भी देसी कपड़े पहनने लगी हैं। लेकिन इस तस्वीर को वीच वाज़ार में दिखाने की क्या ज़रूरत थी ? गैर मर्दों के सामने उसके हुस्न की नुमाइश क्यों की गई थी ? फिर वह तस्वीर की लम्वाई-चौड़ाई को देख-देखकर हैरान होने लगा। "वल्ले ! वल्ले !" इस वोर्ड के सा

एक ओर छोटा-सा तख्ता था। उस पर मोटे-मोटे शब्दों में कुछ लिखा था। उसने माथे से हाथ हटाकर आंखें और भी ज्यादा खोल ली। देर तक गौर करने के बाद वह पढ़ सका।

'इंडियन आर्म्ड कोर को आप जैसे नौजवानों की ज़रूरत है।'

वह उछल पड़ा। यह इंडियन आर्म्ड कोर नया ही नाम है। हरबंस-कौर, प्रेमकौर, जीतकौर तो उसने सुन रखे हैं, लेकिन इंडियन आर्म्ड कोर बिलकुल नया नाम है। शायद किसी अंग्रेज औरत का नाम है। इधर-उधर कुछ लोग घूम रहे थे। उसके दिल में आया कि किसीसे इस औरत के बारे में पूछ-ताछ करे। लेकिन औरत का मामला था। इस किस्म की बात बेझिझक पूछते हुए उसे शर्म-सी महसूस हुई। चुनांचे उसके दिल की बात दिल ही में रह गई।

आखिर उसने अपनी चादर को तह करके सिर के नीचे रखा, और लेट गया। ठंडी-ठंडी हवा चल रही थी। हवा में एक लतीफ-सी नमी थी। उसके विचार धुंधले-से होने लगे। लेटे-लेटे वह इंडियन आर्म्ड कोर के बारे में फिर सोचने लगा। धीरे-धीरे कुछ-कुछ उसकी समझ में आने लगा कि इस औरत की तस्वीर यहां लगाने का क्या मकसद है। उसने सुना था, कि लाहौर में बड़ी-बड़ी बदमाशियां होती हैं। लेकिन क्या कोई औरत इतनी हिम्मत कर सकती है, कि अपनी तस्वीर इस तरह बीच बाजार खड़ी करके दूसरे तख्ते पर लिखवा दे, कि 'इंडियन आर्म्ड कोर को आप जैसे नौजवानों की ज़रूरत है?' उसने परियों की कहानियों में एक खूबसूरत मलिका का किस्सा सुना था। उसकी जवानी वह एक कयामत थी। जो भी उसकी तरफ नज़र उठाकर देख लेता, होश-हवास खो बैठता। वह बराबर नये-नये जवानों से गठजोड़ करती रहती। और जब वे बेकार हो जाते, तो उन्हें मगरमच्छों के तालाब में फेंकवा देती। मगर वह तो कहानी थी। लेकिन यह औरत? आखिर इसे नौजवानों की क्या ज़रूरत है? क्या इसका चाल-चलन भी खराब है? क्या यह भी नौजवानों को बेकार करके परे फेंक देती होगी? क्या गवर्नमेंट ने कोई ऐसा कानून नहीं बनाया, जो ऐसी बदकार और नौजवानों को बर्बाद कर देनेवाली औरतों पर लागू हो सके?

रंग

इस पहाड़ी स्थान पर साल-भर में प्रकृति नित्य नये रूप भरती है, लेकिन बरसात के मौसम की तो बात ही न पूछिए। मौन और स्थिर पहाड़ों के पीछे से घटाएं उमगों और तरंगों की तरह उठ खड़ी होती हैं। बादल सड़कों पर उड़ते-फिरते हैं। बगैर इजाज़त के मकानों में घुस पड़ते हैं। जब रिमझिम-रिमझिम बारिश होने लगती है—छोटी-बड़ी इमारतें ऊपर-नीचे बनी हुई इस तरह दिखाई देती हैं जैसे खड्डों की गहराई में गिरने से बाल-बाल बच गई हों। मूसलाधार बारिश के रेले में देखने वालों को लगता है कि जैसे ये इमारतें लुढ़कनियां खाती हुई खड्डों के अंधेरे में डूब जाएंगी···लेकिन वे जहां-की-तहां टिकी रहती हैं। बादल बरस-बरसकर थक जाते हैं, और आखिर बड़ी-बड़ी गुफाओं में मानो हांफते हुए दुबक जाते हैं। लोग अच्छे-अच्छे कपड़े पहनकर घरों से बाहर निकल आते हैं। ये बादल जो सिर पर गरजते, कड़कते और बरसते थे, अब पालतू जानवरों की तरह मिस्कीन सूरतें बनाए खड्डों में लोटते नज़र आते हैं···यह दृश्य देखने वालों को वही आनन्द प्राप्त होता है जो किसी शत्रु के हार जाने पर होता है।

एल्बर्ट बाजार बड़ी ढलान पर बना हुआ है, और कैवेण्डर रेस्टोरेन्ट दूर ही से नज़र आने लगता है। सन्ध्या के समय जब लोग एल्बर्ट बाजार की ओर बढ़ते हैं तो ढलान पर बनी हुई इमारतों की छतों में कैवेण्डर होटल की सुर्ख रंग वाली छत स्पष्ट दिखाई देने लगती है। छत पर लिखे

कुछ देर बाद लोगों ने देखा कि बादल पानी में तर स्पंज के टुकड़ों की तरह भरे बैठे हैं। लगता है कि किसी समय भी मूसलाधार बारिश होने लगेगी। कुछ लोग जल्दी-से-जल्दी घर लौट जाना चाहते हैं, और कुछ, जिन्हें किसी प्रकार की जल्दी नहीं है, बड़े इत्मीनान से ग्रॅन्ड्ज़ा के पिछले बरामदे में कुर्सियों पर पसरे हुए हैं। सामने से एक बहुत बड़ा काले रंग का बादल पानी के बोझ से दबा हुआ नीचे की ओर उतर रहा है। वह उस काले चीते की तरह दिखाई देता है जो ऊंचे पेड़ की शाखा पर दुबक-कर बैठा जंगल के भोले-भाले हिरनों की ओर देख रहा हो ताकि मौका मिले तो वह उन पर झपट पड़े।

रेस्टोरेण्ट में कई प्रकार की मूरतें नजर आ रही हैं। इनमें चीनी भी हैं, जिन्हें बाज अनाड़ी हिन्दुस्तानी यूरोपियन समझते हैं। दूसरी ओर बेफिक्रे, मोटे-ताजे खिलंदड़े अमरीकी सिपाही नजर आ रहे हैं। ऐंठी हुई गर्दनों वाले अंग्रेज, वह नाक चढ़े टॉमी हैं जो नेटिव लोगों से कुछ ज्यादा ही बचकर रहते हैं। उनके साथ काली-पीली नौजवान लड़कियां हैं जिन्होंने यूरोपियन औरतों का स्वांग रचा रखा है। यान्की (अमरीकन) और टॉमी इन्हींको गनीमत समझकर इन्हें बाजुओं में जकड़े बैठे रहते हैं। लड़कियां भी मेमों की नकल उतारती हुई 'आउ !'''आउ !''' करके चोंचें मारती, बात-बेबात पर कहकहे लगातीं, और कभी-कभी टांगें घुमा-घुमाकर अपनी पिंडलियों का जायजा लेने लगती हैं।

इस समय एक कोने में एक मद्रासी हल्के स्वर में प्यानो बजा रहा है। आम तौर पर कोई व्यक्ति उसकी ओर ध्यान नहीं देता। वह आप-ही-आप मुस्कराता है, और कभी मस्ती में आकर सिर हिलाता है और कमर झटकता है। कुछ देसी साहब मौज आने पर बैठे-बैठे प्यानो की नई धुन पर एड़ियां फर्श पर पटकने लगते हैं। ऐसे मौकों पर उनकी आंखों की चमक बढ़ जाती है, मुंह ज्यादा फैल जाता है, और गहरी सांस लेने के कारण उनकी बड़ी-बड़ी छातियों में उतार-चढ़ाव दिखाई देने लगता है।

कुछ हिन्दुस्तानी महिलाएं और मर्द एक मेज के चारों ओर बैठे हैं। सब अंग्रेजी भाषा बोलने पर तुले हुए हैं, चाहे बोल पाएं या न बोल पाएं। उनमें से एक आगे को झुककर दूसरे से पूछता है, "मिस्टर चावला!

मिस्टर चावला ! यस्टरडे आई वेण्ट टू सी यू···वट यू···आई···गुड···"

मिस्टर चावला मिस्टर चौहान की मुसीवत को भांपकर जल्दी से वोले "ऐम सारी···ऐम सारी···यू सी, आई वॉस···आई वॉस···"

अव मिस्टर चौहान समझ गए कि मिस्टर चावला की स्थिति खराव हो रही है, वोले "इट इज़ ऑल राइट···आई एक्सेप्ट योअर···वॉट टू कॉल···एक्सक्यूज़···एक्सक्यूज़—यू मैन ! हा-हा-हा—"

उन दोनों की पत्नियां अंग्रेज़ी भाषा नहीं जानती थीं। वैसे उन दोनों ने घर पर ए-बी-सी पढ़नी शुरू कर दी थी। वे अपने मर्दों को अंग्रेजी में वातचीत करते हुए ईर्ष्या और गौरव से देख रही हैं। वह वगैर तकल्लुफ के कहकहे लगा रही हैं जैसे वह सव कुछ समझती हैं।

अंग्रेज़ी से फुर्सत पाकर मर्द एक-दूसरे की ओर ध्यान देते हैं। मिस्टर चौहान की पत्नी गोरी, चिट्टी, मोटी, नर्म और गर्म है। मिस्टर चावल मुंह का स्वाद वदलने के लिए दूसरों की पत्नियों की ओर ध्यान देने कुछ भी हर्ज नहीं समझते···विशेपकर इस समय जवकि श्रीमती चौह सिर नीचा किए अपनी सुर्मीली आंखों मे मिस्टर चावला की ओर अ नज़र से देख रही है···

वाहर, पहले आहिस्ता-आहिस्ता फुहार पड़ने लगती है, फिर मोटे रोयेंदार गलीचे की भांति एक वादल कहीं से आ निकलता है। वादल इस तरह फट-फटकर पीछे हटने लगते है जैसे सैनिकों की वड़ी सेना में भीम गदा घुमा रहा हो—वह वादल ब्रैगेन्ज़ा हो ऊपर पहुंचकर न केवल गरजता है, वल्कि वरसता भी है···

कामरेड टिपटिप जो गरजते हैं वरसते नहीं, और जिनकी ट्र लेनिन की तरह की दाढ़ी है, इस समय पाइप का धुआं उठाते एनी को सम्वोधित करते हुए कहते हैं, "मिस एनी ! हैव यू र्यूमर (अफवाह) है कि ब्रैगेन्ज़ा सिर्फ गोरों का होटल व जाएगा···"

लेकिन मिस एनी का ध्यान दूसरी ओर है। वह हाथ में ब्रनियां यानि नये आने वालों की ओर देख रही है। उसके वा अन्दाज़ से पीछे की ओर उड़ाए हुए हैं, और एक ढेर का अ

हुए हैं। शायद रूस की ज़ारीना अपने बाल इसी तरह बाँधा करती थी—मिस एनी का चेहरा अण्डे के आकार का है, होंठ पतले, आँखें मद-भरी लेकिन नाक कुछ लम्बी है। उसके दुबले-पतले चेहरे पर यह नाक जचती नहीं। जब कोई नया व्यक्ति नज़र आता है तो मिस एनी की कमर में हल्की-सी लचक पैदा हो जाती है। वह 'जाति' की प्रतियाँ लेकर उस आदमी के पास जाती है और सपाट स्वर में पूछती है, 'विल यू बाई वन ?'

वह आदमी पहले उन प्रतियों को देखता है, और फिर मिस एनी के चेहरे की तरफ। वह मुस्कराने लगती है और मुस्कराए चली जाती है। यहाँ तक कि वह एक प्रति खरीद लेता है। एनी आँखें फेरकर वापस अपनी सीट पर आ जाती है तो उसे मजबूरन 'जाति' के पन्नों पर नज़र दौड़ानी पड़ती है। हिटलर के साथ रूस, अमरीका और इंग्लैण्ड का युद्ध ऐसा ही था जैसे पहले ज़माने में देवताओं और असुरों के बीच हुआ था... इन्सानियत का बोल-बाला ! ज़ालिमों का मुँह काला !...

काले बादलों के टुकड़े उचक-उचककर पहाड़ों से नीचे घाटी की ओर उतरते-उतरते यों लगते हैं जैसे भूकम्प आ जाने पर पहाड़ों से चट्टानें लुढ़कती जा रही हैं। स्याह बादलों के हट जाने के बाद कत्थई रंग का एक बादल झूमता और लड़खड़ाता धम से पहाड़ की चोटी पर आ गिरता है। दूसरी ओर से लाल और पीले रंग की हसीन बदली कुछ लचकती और कुछ घबराई हुई-सी आगे बढ़ती है। लगता है जैसे महादेव और पार्वती का मिलन हो रहा है। बादल गरज रहे हैं, मानो गणेश जी जोश में आकर मृदंग बजा रहे हैं। कई नीले-हरे चम्पई और जामुनी रंग की बदलियाँ नृत्य करती हुई नज़रों से गायब हो जाती हैं, जैसे बारूद-भरी हवाइयाँ आसमान का सीना चीरती हुई सितारों में खो गई हों...

सितारों की तरह झिलमिलाती हुई सफेद-सफेद बुन्दियों वाला पर्दा हिलता, और एक यूरोपियन जोड़ा भीतर प्रवेश करता है। वे दोनों नौजवान हैं और हसीन हैं। औरत ने मर्द की बगल में हाथ दे रखा है, और मर्द ने उसका नाज़ुक हाथ अपने हाथ से छिपा रखा है। औरत ने पहले तो अपने नमदार बालों को हल्का-सा झटका दिया, और फिर अपने निचले होंठ पर ज़बान फेरी तो होंठ शबनम में भीगी हुई पंखुड़ी की भाँति

तरोताज़ा नज़र आने लगा। वे एक मेज़ के निकट बैठने को ही हैं कि फिर उनकी राय बदल जाती है, और वे बाहर के बरामदे की ओर चले जाते हैं। एक क्रिस्टान मुंह खोले मस्ती में आकर प्यानो की लय के साथ-साथ ज़मीन पर पांव पटक रहा है। उसका चेहरा पालिश किए हुए बूट की तरह चमक रहा है। नौजवान और हसीन जोड़ा जब बरामदे के परले सिरे पर पहुंचता है तो लड़की एक मेज़ के निकट पहुंचकर रुक जाती है। मर्द हाथ बढ़ाकर उसकी पीले रंग की बरसाती उतार देता है। हसीना की मक्खन की भांति सफेद और मुलायम गर्दन पर हरे रंग के मोटे-मोटे मनके झिलमिलाने लगते हैं। युवक फिर उसका हाथ बड़े आशिकाना अन्दाज़ में अपने दोनों हाथों में थाम लेता है। जब वे बैठते हैं तो वह लड़की की आंखों में आंखें डाल देता है। लड़की की आंखें गहरे नीले रंग की हैं··· जैसेकि सामने थोड़ी-सी जगह से बादल हट जाने पर उजले नीले रं... का आसमान! लेकिन आसमान का वह हिस्सा ज़्यादा देर तक नंगा न... रहता। दो घड़ी बाद वह बादल जो कुछ देर पहले यों नज़र आते थे ... वे दम साधे बिलकुल स्थिर से वातावरण में लटके हुए हैं, अनायास ... आगे बढ़ते हैं और आसमान के उस टुकड़े को अपने दामन में छिपा... हैं। साबुन के रंगीन बुलबुलों की तरह चन्द बादल गहरे रंग वाले ब... में गुम हो जाते हैं··· बिलकुल ऐसे ही जैसे रंगदार पत्थरों के टुकड़े... की सतह पर गिरते ही डूबते हैं और फिर तह में बैठ जाते हैं··· ...

एकाएक पूर्व की ओर से मानो प्रकाश का एक सैलाब-सा आ... है। लेकिन गहरे रंग के बादल इस प्रकाश पर छा जाते हैं। ... चम्पई, बादामी, तूतिया और नारंगी रंग के बादलों के टुकड़े छो... रंग-बिरंगी मछलियों की भांति हल्की गति से तैरते हुए, दिख... या उन्हें कमउम्र नर्तकियां समझिए जो कूल्हे मटकाती, गर्दने... हाथ मटकाती, हंसती-बोलती, नृत्य करती चली जा रही... बादलों का रंग और गहरा हो जाता है।

गहरे कत्थई रंग की पगड़ी वाला एक सिक्ख फौजी अ... बैण्ड में आता है। यों लगता है जैसे उस बड़े बादल का एक... सिर पर आकर टिक गया है। उसकी पगड़ी के बीचोंबीच ...

सा सरकारी तमगा चिपका हुआ, मुझीसे मिलने के लिए आया था।
एक घोड़ा अगले पाव ताज पर टिका-सा आराम करने के लिए पलग
शेर बब्बर अपने पाव रखे खड़ा है—उस नाथ का कार्ड लाकर दिया।
की तरफ घूमकर उस तमगे की ओर इशारा नौकर की जबानी मालूम
उसके होंठो का आकार स्पष्ट रूप मे दिखाई दे रहे भिजवा दिया कि
भवों के तले उसकी आंखें यों लगती हैं जैसे दो बटन। वह
की तरह स्थिर और ऐंठा हुआ-सा है। भीतर पहुंचते ही किताब लेने
सबसे पहले खाली नज़र आती है वह उसीके निकट बैठ जाता है, वरक
हुए वातावरण मे कहकहों का संगीत गूंज रहा है। वह जेब मे से रूमाल
निकालकर अपने सूखे होंठो को खूब रगड़-रगड़कर पोंछता है और फिर
इधर-उधर देखकर आवाज़ देता है—"बॉय !"

बॉय एक अधेड़ उम्र का शख्स है और वह जी भरकर काला है। उसकी आंखों की सफेदी खूब चमक रही है। उसकी कमर कुछ झुकी हुई है। फावड़े की भांति उसकी बड़ी-बड़ी मूछें नीचे को गिरी हुई हैं जिनमे से उसके होंठ दिखाई नहीं देते···बॉय आवाज़ सुनता है और सीधा अंग्रेज जोड़े के निकट पहुंच जाता है। उस जगह वह बार-बार अपने सिर को झुकाता है जब लौटता है तो फौजी सिक्ख फिर आवाज़ देता है, 'बॉय !"

बॉय सुनी अनसुनी कर देता है और लपकता हुआ किचन की ओर चला जाता है। एक सत्रह-अट्ठारह वर्ष का हिन्दुस्तानी लड़का अलग-अलग बैठा कॉफी पी रहा है। उसके शरीर की खाल खूब तनी हुई और चिकनी है। अभी उसकी मसें भीग रही है। उसके चेहरे का रग निखरा हुआ, हल्की सुर्खी लिए गेहुंआ-सा है। उसकी मद-भरी आंखों में फैला हुआ सुर्मे की हल्की-सी धूल बड़ी ही आकर्षक नज़र आती है···बिलकुल उन बादलों की तरह जिनकी ओर वह खोई-खोई नज़रों से देख रहा है··· और वे बादल समुद्री पानी के पहाड़ जैसी लहर की तरह होटल की ओर बढ़ते आ रहे हैं। ठण्डी और नमकदार हवा को रोकने के लिए खिड़किया बन्द कर दी जाती हैं। खिड़कियों के शीशों के उस पार गहरे-गहरे रगों के ये बादल बड़े-बड़े समुद्री जानवरों की भाति दिखाई दे रहे हैं। निकट जितने गहरे रग के बादल है, उतने ही दूर के बादल हल्के रग के हैं।

मीलों परे आकाश में सात रंगों का इन्द्रधनुप दिखाई दे रहा है। उस रंग-विरंगी मेहराव के नीचे नन्हे-नन्हे वादल वच्चों की तरह खिलवाड़ करते फिरते हैं। देखने वाला कल्पना में महसूस करता है जैसे इन्द्रधनुप दोनों ओर से धरती की ओर झुकता हुआ एक हरे रग की झील के पानी में डूव जाता है। उस झील के पानी में सात रंगों के इन दो स्तम्भों के प्रतिविम्व झिलमिलाते नज़र आते हैं। झील के किनारे पर खड़े हुए रंग-महल में से महकी हुई पंखुड़ियों की भांति जलपरियां निकलती हैं औ हिचकोले लेती हुई पानी में उतर जाती हैं। वह वहुत ही हल्की गति तैरती हुई सात रंगों वाले स्तम्भों के चारों ओर चक्कर काटने लगती और अपने मद-भरे गले से मीठे गीत गाने लगती हैं। उन परियों के पी पीछे वहकर आई हुई हरी-भरी पत्तियां और फूलों की रंग-विरंगी ड़ियां भी जलपरियों के साथ-साथ चक्कर लगाने लगती हैं। सुनहले और स्वप्नमय प्रकाश में इन कुंवारी जलपरियों की अछूती, चिकनी उजली छातियां आधी पानी के अन्दर डूवी हुई, और आधी वुलवु भांति पानी की सतह से ऊपर···हल्के नृत्य के कारण लरजती हु

···एकाएक कोने में वैठा मद्रासी मशीनकार प्यानो पर पलटा लेता है—और देखते-ही-देखते पांच-छः जोड़े हाथों में उठते हैं और वे एक-दूसरे के सीने से सीना मिलाए रंग और भंवर में खो जाते हैं···

आत्माभिमान

जिन दिनों बिहार में भूकम्प आया, मैं आसाम की एक मामूली-सी रियासत में इंजीनियर था। भूकम्प के बाद रिलीफ का काम शुरू हुआ, तो मैंने भी वहां नौकरी के लिए हाथ-पांव मारे। रियासत के मंत्री की दूर तक पहुंच थी। उनके साथ मेरे अच्छे सम्बन्ध थे। चुनांचे मुझे नौकरी मिल गई। मेरा काम बहुत सन्तोषप्रद था। जल्द ही एग्जेक्यूटिव इंजीनियर बनाकर मोतिहारी भेज दिया गया।

इस जगह अपने जीवन में पहली बार प्रकृति के ध्वंस-कार्य देखने का अवसर मिला। दफ्तर मेरी कोठी के निकट ही था। दफ्तर की इमारत अभी पूरी बनी नहीं थी। तीन-चार कमरे हमारे काम में आ रहे थे। सिवाय मेरे कमरे के बाकी कमरों में सफेदी भी न हुई थी। फर्श की भद्दी ईंटों को छिपाने के लिए दरी बिछा दी गई थी। मेरे कमरे में दो बड़ी खिड़कियां और दो दरवाजे थे। एक दरवाजा बड़े कमरे में खुलता था। यहां क्लर्क काम करते थे। इस वक्त आठ के लगभग अमले थे। चपरासी उनके अलावा थे।

भूकम्प ने जहां एक ओर परिवार-के-परिवार तबाह और बरबाद कर दिए थे, वहां बेकारों के लिए रोजी के दरवाजे भी खोल दिए। अनेक लोगों के लिए यह दुर्घटना दौलत और सुख-समृद्धि का सुसमाचार लेकर आई थी। जब शाम के समय हम लोग सैर के लिए बाहर निकलते, तो जगह-जगह धरती माता को अजगरों की तरह मुंह खोले पाते।

बच्चे स्तम्भितासे इन अथाह सागरों में झांकते ।

सर्दियों की एक सुबह को जब मैं दफ्तर में पहुंचा, तो कागजों का बड़ा-सा पुलिन्दा मेरे सामने रख दिया। पिछ मैं दौरे से वापस आया था। तीन-चार दिन के कागजात थे।...पहले रघुनाथ कागजात रखकर फौरन दूसरे कमरे में था। लेकिन आज वह हाथ सहलाता हुआ मेरी मेज के पा रहा। यह सोचकर कि शायद वह मुझसे कुछ कहना चा उसकी तरफ देखा। उसके चेहरे के उतार-चढ़ाव से मालू कि वह किसी गहरी मानसिक उलझन में पड़ा हुआ था।

इससे पहले कि वह कुछ कहे, चपरासी खबर ला देवीदयाल अन्दर आने की इजाजत चाहते हैं। मैं इस चा से मिलना न चाहता था। लेकिन मेरी गैरहाजिरी में वह क कोठी के चक्कर लगा चुका था। बच्चों के लिए फल अ भी दे गया था।...मैंने उसको बुलवा लिया। इसपर रघुना में चला गया।

देवीदयाल सिनेमा के पास लाया था। वह शहर का दार रईस था। इसके बावजूद वह मेरी इतनी अधिक रहा था कि जी चाहता था, धक्के देकर बाहर निक बेरुखी पर ध्यान न देते हुए, उसने इशारों में ही कुछ अपना मकसद बयान किया। वह चाहता था कि मैं ठेके भट्ठे के ईंटों की सिफारिश करूं।

मेरा ध्यान रघुनाथ की तरफ था। रघुनाथ हमारे अ ज्यादा उम्र का था। बल्कि दूसरे तो सब-के-सब नौजव पास, स्टेनोग्राफर, अदब-कायदे में सलीका बरतने वाले होशियार। लेकिन मुझको रघुनाथ पर ही भरोसा था। क रुक रुक के, धीमी आवाज में बात करना। उसको देख लगता था, कि वह एक जिम्मेदार आदमी है। इसी व काम भी ज्यादा करना पड़ता था।

नौकरी के लिए वह सीधे मुझीसे मिलने के लिए आया था। दोपहर के वक्त खाना खाने के बाद जरा-सा आराम करने के लिए पलंग पर पांव रखा ही था, कि नौकर ने रघुनाथ का कार्ड लाकर दिया। मैंने उसके बेवक्त आने को महसूस किया। नौकर की जबानी मालूम हुआ, कि मुलाजमत के लिए आए हैं। मैंने जवाब भिजवा दिया कि दफ्तर में मिलें।

इत्तफाक की बात कि उस वक्त मैं ड्राइंग-रूम में एक किताब लेने के लिए गया। सोने से पहले किसी मासिक पत्र या किताब के वरक पलटना मेरी आदत-सी हो गई थी। खिड़की में से मुझको रघुनाथ वापिस जाता हुआ दिखाई दिया। खद्दर का एक नील लगा हुआ पायजामा, इंग्लिश ट्वीड का एक पुराना गर्म कोट, सिर पर काले रंग की गोल टोपी। घुटने के पास उसके पायजामे में एक उभार-सा पैदा हो गया था। उसे देखकर मुझको ख्याल आया कि बेचारा बूढ़ा आदमी है। उसको बुला लेना चाहिए। चुनांचे नौकर भेजकर, मैंने उसे बुलवा लिया।

जब मैंने उसके चेहरे पर, खासकर उसकी नीचे को लटकती हुई सफेद मूंछों पर निगाह डाली, तो मुझको अपना जवाब याद करके अफसोस हुआ। उसने बेमौके आने के लिए माफी चाही। उसने कहा, कि वह मेरा ज्यादा वक्त खराब नहीं करेगा। वह नौकरी के लिए आया था। टाइप करना जानता था, हर किस्म के कारोबारी तथा दफ्तरी पत्र-व्यवहार में उसको काफी तजुर्बा हासिल था।

मैंने उसको शाम तक बिठाए रखा। वह इसी जगह का रहने वाला था। मैं उससे तरह-तरह की बातें पूछता रहा। उसके आंखों देखे वाकयात का हाल बड़ी दिलचस्पी से सुनता रहा। बातों-बातों में मैंने उसके निजी हालात भी मालूम कर लिए। पहले वह एक धनी आदमी था। उसने अपने बच्चों को ऊंची शिक्षा दिलवाई। सबसे बड़ा बेटा बैरिस्टरी डॉक्टरी पास करके, सरकारी नौकरी करने लगा। उसकी नौकरी लग जाने पर, घर वालों को कुछ तसल्ली हुई, क्योंकि उसकी कमाई का अधिकांश हिस्सा उन्हींकी शिक्षा और लड़कियों की शादियों पर खर्च हो चुका था। लेकिन जब बुरे दिन आते हैं, तो आंख झपकने में तकदीर

का पांसा पलट जाता है। भरा-पूरा घर बुरी तरह तबाह हुआ। लड़के छुट्टियों में घर आए हुए थे। शादी-शुदा लड़कियां भी मां-बाप से मिलने के लिए आ गई थीं। मालूम होता था, कि कुदरत ने ही यह जाल रच रखा था, कि उनके घर के सब आदमियों को एक जगह बुलाकर कुचल दिया जाए। कुदरत का खेल देखिए, अब घर में रघुनाथ की आधी पागल बीवी, उसकी विधवा बहन, उसका तीन साल का पोता, ये ही रह गए थे। सिर्फ बड़ा लड़का बचा था, लेकिन वह भी क्षय का रोगी होकर घर पहुंचा। बाप ने रही-सही पूंजी उसपर खर्च कर दी, लेकिन उसको मौत के चंगुल से न बचा सका।

उसकी आपबीती सुनकर, मन को विश्वास न होता था, कि प्रकृति इतनी क्रूर भी हो सकती है। लेकिन यह वास्तविकता थी।

शाम की चाय के बाद जब वह जाने लगा, तो मैंने कहा—"रघुनाथ जी, इतनी मुसीबतें झेलने के बाद भी आपके कदम डगमगाए नहीं! आपका हौसला देखकर, मैं आपकी बहुत इज़्ज़त करने लगा हूं।"

वह अपनी छड़ी से ज़मीन कुरेदने लगा। कहा—"कृपा है आपकी!···" कुछ देर के मौन के बाद, मुझसे नज़र मिलाने से कतराते हुए, बोला—"लेकिन मेरी याददाश्त कमज़ोर हो गई है कुछ।···मैं भूल जाता बहुतेरी बातें।···"

उसके चले जाने के बाद, मैं देर तक उसके बारे में सोचता रहा।

मेरी सिफारिश पर वह दफ्तर में हेड क्लर्क मुकर्रर हो गया। उ आने से मुझे बड़ा इत्मीनान हो गया था। मुझको तसल्ली इस बात थी, कि दफ्तर में कम-से-कम एक ज़िम्मेदार आदमी मौजूद था। मैं खुद मेहनती और ज़िम्मेदार आदमी हूं, इसलिए इस तरह के आद को पाकर हमेशा खुशी महसूस करता हूं। गैरज़िम्मेदार क्लर्कों बहुत कड़आ अनुभव था। कई बार मुझको रघुनाथ से परामर्श भी पड़ा। कितनी ही बार ऐसा हुआ, कि जरूरी काम पड़ने पर, मैं इ के साथ दौरे पर चला जाता। लेकिन मेरी गैरहाजिरी में द काम में गड़बड़ी न होती।

अपनी मेज के आगे बैठे-बैठे मेरा दिन रघुनाथ की तर

रहता। उसकी बाज़ हरकतों से मेरे दिल पर बड़ा असर होता। मसलन, उसके कोट का कॉलर गर्दन के पास फट गया था। वह कमीज़ के कॉलर को उसपर चढ़ाकर उसको छिपाए रखता। कभी ऐसा भी होता, कि फाइल लिये मेरे कमरे की तरफ बढ़ता। पर्दे के पास पहुंचकर एकदम रुक जाता। मुझको मालूम हो जाता कि इस वक्त वह कोट के कॉलर पर कमीज़ का कॉलर चढ़ा रहा है। कभी-कभी उसकी कमीज़ के फटे कफ कोट की बांह से बाहर निकल आते। वह ज़ख्म छिपाते हुए कबूतर की तरह उंगलियों से कफ को कोट की बांह के अन्दर कर देता। चाहे जितना ही वह यह हरकतें इस ढंग से करता कि मुझको पता न चले लेकिन मेरी तेज़ निगाहों से उसकी कोई हरकत छिपी न रहती थी।

देवीदयाल बातें किए जा रहा था लेकिन मेरा ध्यान दूसरी तरफ था। चुनांचे जितनी जल्द हो सका, मैंने उसको टाला। फिर थोड़ी देर तक मैं रघुनाथ का इन्तज़ार करता रहा। लेकिन वह अपने काम में व्यस्त था। दो-तीन मर्तबा बिना प्यास चपरासी से पानी मंगा कर पिया। खिड़की के आगे खड़ा होकर, सिगरेट के लम्बे-लम्बे कश लेता रहा ताकि रघुनाथ को मालूम हो जाए कि मैं इतना व्यस्त भी नहीं। वह चाहे तो आकर मुझसे बात कर ले। इसके बाद मैं कुछ देर कागज़ात देखता रहा।'''खाना भी दफ्तर में ही मंगवा लिया। लेकिन वह न आया।

शाम को दफ्तर का वक्त खत्म हो जाने पर, अमले मेरी रवानगी का इन्तज़ार कर रहे थे। मैंने चपरासी की ज़बानी कहला दिया कि वे मेरा इन्तज़ार न करें। खिड़की में मैं उन लोगों को टूटी-फूटी ईंटों के ढेरों के पास से होकर जाते हुए देखता रहा। वे स्कूल के लड़कों की तरह एक-दूसरे पर लपकते-झपकते चले जा रहे थे। लेकिन उनमें रघुनाथ शामिल न था। चपरासी ने बताया, कि बाबू रघुनाथ अभी काम कर रहे थे। मैंने सिगरेट सुलगाया और कागज़ात पर झुक गया।

दस पन्द्रह मिनट के बाद रघुनाथ अन्दर आया। मैंने कलम एक तरफ रखकर उसकी तरफ देखा। वह मुस्कराकर बोला—"क्या आपका काम खत्म नहीं हुआ? आज आपने दोपहर के वक्त आराम भी नहीं फरमाया। ''अगर मेरे लायक कोई खिदमत हो तो फरमाइए।"

"मुझको…"

वह कुछ घबरा-सा गया। मैंने इशारा करते हुए कहा—"रघुनाथ जी, आप कुर्सी पर तशरीफ रखिए। कोई हर्ज नहीं, तशरीफ रखिए।"

वह बैठ गया। मुझको इन्तजार में पाकर, वह आहिस्ता से बोला—"मैं बहुत शर्मिन्दा हूं।"

मैं खिलखिलाकर हंस पड़ा। "रघुनाथ जी, आज तो आपने तकल्लुफ की हद कर दी।…तौबा!"

छड़ी से फर्श को बजाते हुए, वह बड़े साहस से काम लेकर बोला—"मुझको एक रुपया दरकार है।"

"एक रुपया?" आश्चर्य से मैंने साधारण से कुछ ऊंची आवाज में पूछा।

उसने फिर मेरी तरफ उचटती हुई नजर से देखा। शायद वह मेरे चेहरे पर अपनी बात की प्रतिक्रिया देखना चाहता था।

उसने धीमी आवाज में कहा—"शायद आपको याद होगा, आपने मुझसे एक दफा एक रुपया लिया था। यह तीन, साढ़े तीन महीने पहले की बात है।"

"एक रुपया? कब?" मैं दिल ही दिल में सोचने लगा।

मेरे चेहरे पर हैरानी देखकर उसने फिर कहा—"एक दिन बैंक का चपरासी आया था। आपके पास दस से कम का नोट नहीं था। आपने मुझसे एक रुपया लिया। आपने यह भी हिदायत की थी, कि अगर आपको याद न रहे, तो मैं आपको याद दिलाकर रुपया वापस ले लूं।" वह फीकी हंसी हंसा। "और मैंने जवाब में कहा था कि एक रुपया भी कोई बड़ी रकम है, जो मैं याद दिलाता फिरूं।…सच पूछिए, तो मैं भूल चुका था। आप जानते ही हैं, मेरी याददाश्त कमजोर हो चुकी है।…लेकिन कल शाम को मुझे न मालूम किस तरह यह बात याद आ गई। मुझको उम्मीद है, कि आप भूले न होंगे।"

हां, मुझको याद आ गया। रघुनाथ पर मुझको वे एतबारी न थी। लेकिन अफसोस इस बात का था, कि मैं रुपया वापस करना भूल गया। वह रुपया…लेकिन मेरा ख्याल था, कि मैंने रुपया वापस कर

कहकर, उसने मेरी तरफ ऐसी नज़रों से देखा, जो मैं उम्र भर न भुला सकूँगा।

"मैं एक उसूल वाला इज़्ज़तदार आदमी हूं। अगर्चे यह गुस्ताखी है, कि आप मुझपर इतनी कृपा करना चाहें, और मैं इन्कार करूं, लेकिन चूंकि मैंने आज तक न किसीके सामने हाथ फैलाया, न कभी एक कौड़ी का कर्ज़दार बनना स्वीकार किया, इसलिए आखिरी उम्र में अपने उसूल से गिरना नहीं चाहता।..."

मैंने चुपके से एक रुपया निकालकर मेज पर रख दिया। उसने कांपते हाथों से रुपया उठाकर अपनी मुट्ठी में भींच लिया। फिर माथे से पसीना पोंछते हुए, बन्द पर्दा हटा कर, लड़खड़ाते कदमों से दरवाज़े से बाहर निकल गया।

हँसकर आगे को झुका। उसकी टेढ़ी कमज़ोर टांगें उसका बोझ न संभाल सकीं, बैलेंस खराब हो गया, वह सिर के बल गिरा, तो दो-तीन थालियां भी लुढ़क गईं और कोलाहल मच गया। मज्जो ने मृदंग बजाना बन्द करके अंग्रेज़ी नाच शुरू कर दिया। जब वह पतली-पतली टांगें उठा-उठाकर नाचता, तो उसके घुटने गले में अटके हुए कनस्तर में टकरा-टकराकर कानों के पर्दे फाड़ देने वाला शोर पैदा करने लगते—

'ट्विंकिल्-ट्विंकिल् लिटिल स्टार,
हाउ आई वंडर, वॉट यू आर।
ट्विंकिल् ट्विंकिल्..........'

मां की ललकार सुनाई दी। बच्चों को शोर करने से बाज रखने के लिए वह खुद उनसे भी ज़्यादा ज़ोर से चिल्लाने लगती थी।

"मैं कहती हूं, तूने मेरी रीडर कहां रख दी, नाजी की बच्ची।"—सबसे बड़ी बहन नजमी आकर चिल्लाई। उसके नथुने फड़क रहे थे। गर्दन की रगें बोलते वक्त उभर आती थीं।

नाजी को मां पुचकारने लगी। उसके होंठ से खून बह रहा था। वह रोए जाती थी। मां ने दिलासा देते हुए, दो आने का लालच दिया, ताकि वह चुप हो जाए। लेकिन वह रज़ामन्द न हुई। "नहीं, मैं दो आने नहीं लूंगी। मैं तो वह लाल-लाल फूलों वाला फ्राक पहनूंगी।"

गोया यह नाच न था, एक ठग चाल थी, जिससे अम्मा को फंसाकर दरअसल फूलदार फ्राक ऐंठने का इरादा था।

"नजमी मरदूद, तू सारस की तरह लम्बी-लम्बी टांगें निकाले, बेशर्मी से इधर-उधर भागी फिरती है। तुझको अक्ल कब आएगी?"

"हाय रे! मैं कहां जाऊं? मेरी रीडर जो छिपा दी है नाजी की बच्ची ने।"

बच्चों के अब्बा आए। "पानी गर्म हो गया क्या?"

"हो रहा है। देखिए न! बच्चों ने क्या गदर मचा रखा है।"

"अरे कमबख्तो! तुमको आज पढ़ने के लिए नहीं जाना है क्या? ऐं! क्यों बे खालिद, तू जितना ही छोटा, उतना ही खोटा! अपनी मां को काम नहीं करने देता। हर वक्त उसका आंचल पकड़े रहता है। गधे के

करे। चुनांचे इस तरफ से मज्जो कमरे के अन्दर दाखिल हुआ और दूसरी तरफ से चचा कमरे के बाहर। "चचा, अम्मा कहती हैं कि खाना खा लो।"

"अब इतना वक्त कहां है? खाना ला दीजिए अब..." उसने अपनी सूरत ऐसी दुखियारे की-सी बना ली, मानो इस घर में हफ्ते-भर से उसको खाना न मिला हो और न आइन्दा सप्ताह-भर मिलने की आशा थी।

मज्जो खबर लाया—"चचा चले गए। वे कहते थे, कि अब वक्त नहीं है।"

"हाय, मैं मर गई! बेचारा भूखा चला गया! सारे दिन भूखा रहेगा! अच्छा, नौकर के हाथ खाना कालेज ही भिजवा दूंगी।"

"कालेज क्या करोगी भिजवा कर? उसने सौ मर्तबा कहा है कि उसको खाना कालेज न भेजा करो। सबके सामने खाने में उसको शर्म महसूस होती है। लाओ मुझे पानी दो। कहीं मैं दफ्तर से न रह जाऊं।"

"यह लीजिए, पानी तो हो गया गर्म।...अच्छा, मैं कहती हूं, दोस्त को बुला लो। खाना खा लें। उसे भी जाना होगा।"

"बहुत अच्छा। पकाओ रोटी।"

वह उठा, स्टूल अन्दर के बरामदे में रखा, और एक कुर्सी खिसका दी।

"मज्जू, मेरा अच्छा बेटा, जा नाजी को साथ ले जा। अपना मुंह भी धो, और छोटी बहन का मुंह भी धो डाल। फिर आकर खाना खा लो। तब मैं तुमको अच्छे कपड़े पहनाऊंगी।"

"कमबख्त नौकर कहां है?"

"वह दूध लेने गया है। जहां जाता है, बैठा रहता है। आप नहा चुके क्या?"

"साबुन का पता नहीं। तौलिया मिलता नहीं।"

"ठहरिए, मैं निकाले देती हूं नया तौलिया।" खालिद को छाती से हटाया, तो वह ठुनकने लगा। "अरे हट, बेटा! मां को नोचकर खा ही जाएगा क्या?"

पति को साबुन और तौलिया देने के बाद वह फिर चूल्हे के आगे आ बैठी। मज्जो और नाजी भी मुंह धोकर आ गए।

"शावाश, शावाश ! कितने अच्छे बेटे हैं । लो बैठो, अब खाना खा लो।...मज्जू बेटा, तुम्हारी आया कहां है ?"

"आया नजमी अन्दर के कमरे में कपड़े सीने की मशीन से लिपटी रो रही है ।"

जैनू ने जल्दी से उनके आगे खाना रखा ।

"मज्जू, छोटे भैया को भी बिठा लो, अपने पास । इसको बहुत छोटा लुक्मा (कौर) शोरबे में खूब भिगो-भिगो कर देना । झगड़ना नहीं। रोटी की ज़रूरत हो, तो प्लेट में से ले लेना ।"

अन्दर वाले कमरे में, जहां 'आया नजमी' कपड़े की मशीन से लिपटी रो रही थी, कुछ अधिक अंधेरा था । वहां बहुत बड़े-बड़े ट्रंक पड़े थे, जो जैनू को आज से लगभग चौदह बरस पहले शादी के मौके पर दहेज में मिले थे । इन सबके अलावा कीमती कपड़ों के ट्रंक, लोहे की पेटी, गहने, नकदी वगैरह, सब-कुछ इसी कमरे में रखा जाता था । आया नजमी वकील मज्जो के सिसकियां भर-भरकर रो रही थी । उसकी गदराई हुई टांगें फैली हुई थीं । वह औंधे मुंह पड़ी थी । चेहरा बालों की घटाओं में छुपा हुआ था । उसने अम्मा के पांव की चाप सुनी, लेकिन सिर ऊपर न उठाया, और न रोना मन्द किया । वह लगातार हिच-कियां लेती रही । जब वह गहरी-गहरी सिसकियां लेती तो उसके बाजुओं और कमर में कम्पन पैदा हो जाता । जैनू चुपचाप उसके पास खड़ी हो गई । कुछ देर इसी तरह खड़ी रहने के बाद वहीं बैठ गई, और उसका सिर उठाकर अपनी गोद में रख लिया । वह और तेजी से रोने लगी । जैनू उसके सिर पर हाथ फेरती रही ।

"नजमी रानी, क्या बात है ? मेरी बच्ची, तू मेरे कहे का बुरा मानेगी ? तू तो मेरे जिगर का टुकड़ा है, मेरी आंखों का नूर है । पगली, तुझे इतना भी मालूम नहीं, कि तेरी अम्मा तुझे कितना प्यार करती है। मेरी रानी, तेरे ही दम से तो इस घर की रौनक है । तुझे क्या तकलीफ है ? तेरे पास अच्छे-अच्छे कपड़े नहीं, या खर्च करने के लिए पैसे नहीं या खूबसूरत गुड़िया नहीं ? कोई लड़की है अड़ोस-पड़ोस में, जिसके पास तुझसे ज्यादा कपड़े हों ? तू मेरी सयानी बेटी है । तू उस दिन फ़ातमा की

अम्मा से कह रही थी कि 'हमारी अम्मा जी हमको फिजूल प्यार नहीं करतीं। वह दिल में हमसे मोहब्बत करती हैं।' बता तो मेरी लाडली, आज तुझपर क्या वहम सवार हो गया, कि तेरी अम्मा तुझको प्यार नहीं करती ? क्यों तू इस काल-कोठरी में पड़ी फूट-फूटकर रो रही है ? तेरे दुश्मन रोएं। तेरी बला जाने, यह रोना-धोना क्या होता है। क्या अब तू यह समझने लगी है कि तेरी अम्मा बेइन्साफ है, तुझपर इतनी सख्त है, बेरहम है ?"

नजमी सिसकियां भरती रही।

जैनू ने घसीटकर बेटी को गोद में ले लिया। "मेरी लाडली, अब तू सयानी हो गई है। जानती है अब तेरी उम्र क्या है ? अब तेरा तेरहवां बरस शुरू हो चुका है। मैं पन्द्रह बरस की उम्र में ब्याही गई थी। तुझे क्यों कर समझाऊं ? तू खुद ही समझ ले। अब तू दूध पीती बच्ची नहीं रही, अच्छा तू ही बतला, कि तेरी उम्र की लड़की एक तंग-सा फ्राक और एक जांघिया पहने, रानों तक नंगी टांगें निकाले घूमती अच्छी मालूम होगी ? माना कि तू अपने घर में ही रहती है, लेकिन अब तेरी उम्र इस तरह घूमने की नहीं है। मेरी बच्ची, ये बातें बालदैन को इशारे से ही बतानी पड़ती हैं। अक्लमंद और सुघड़ बेटियां थोड़े कहे को बहुत समझती हैं। आबरू के इशारे से मतलब को पा लेती हैं।"""अपने बाल देख, रानी ! बालों की देख-भाल किया कर। कितने लम्बे, कितने काले, कितने घने और किस कदर बोझिल हैं तेरे बाल ! मैं तुझको दो चोटियां गूंथने से मना नहीं करती, और न मैं इसको बुरा समझती हूं। सुन मेरी लाडली, यह भी तो ठीक नहीं, कि तेरे बाल बिल्कुल आज़ाद होकर हवा में लहराते रहें और तू सर पर चिंदरिया तक न रहने दे। तू कुआरी है। अब तू कमसिन नहीं कि तेरी हरकतों का कुछ ख्याल न किया जाए। इतनी-सी बात थी, जो मैंने तुमसे कही। मैं समझती थी कि मेरी बेटी मेरा कहना मान जाएगी। लेकिन तू बजाय मेरी नसीहत पर अमल करने के, रोने लगी !"

नजमी ने अपनी बांहें मां के गले में डाल दीं।

"अरी देख तो, अब तू मेरे बराबर की होने को है। अब तो तेरे बोझ

तले मेरी टांगें दुखने लगती है। जब बेटी मां के बराबर हो जाए, तो वह बेटी नहीं रहती, बल्कि बहन बन जाती है। मेरी नाज़ो पली बिटिया, तुझको चाहिए कि अब तू हर काम में मेरा हाथ बटाए, घर के मामलों में अपनी राय दे। मैं अब थक गई हूं। मेरा जिस्म खोखला हो चुका है। तू पराई दौलत है। लेकिन जब तक मेरे पास है, उस वक्त तक तो मेरा सहारा बनकर रह। मैं तो तुझसे इन बातों की उम्मीद रखती हूं, और तू न मालूम कौन-सी दुनिया में बसती है। अब तू सयानी बेटी बन!"

जैनू की रानें सचमुच दुःखने लगीं। नजमी को देखकर उसे खौफ मालूम होता था। किस कदर बढ़ गई थी कमबख्त! डील-डौल में पूरी औरत मालूम होती थी। और दो-ढाई बरस बाद तो उसपर नज़र ही न ठहर सकेगी। वह नजमी के जिस्म को गौर से देखने लगी। किस कदर भरा हुआ लचकदार, बेऐब, बेदाग, तनी हुई त्वचा, महका हुआ जिस्म, जैसे खेत की साफ-सुथरी नमदार मिट्टी की बू, या जैसे जंगल में हरी-हरी घास की सोंधी-सोंधी खुशबू! वह उसके जिस्म पर आहिस्ता-आहिस्ता हाथ फेरने लगी। किस कदर खूबसूरत, पूरे बढ़े हुए, दिलफरेब नज़र को अटका लेनेवाले बाल, बलखाते और लहराते हुए, जैसे सिर की खाल में से फौव्वारे की तरह फूटकर लावे की-सी तेज़ी के साथ वह निकले हों, जैसे आगे ही बढ़ते चले जाएंगे! उसके बाज़ुओं में जकड़ा हुआ नजमी का जिस्म किस कदर जानदार, कसमसाया हुआ, बल खाया और लचकता हुआ-सा था। इस बात को महसूस करके, कि यह जिस्म उसीके खून का पोसा हुआ है, उसको अजीब किस्म की शान्ति-सी महसूस होने लगी। जब उसने नजमी के आधे के लगभग बाल मुट्ठी में लिए, तो उसकी मुट्ठी भर गई। वह उनको मुट्ठी में आहिस्ता-आहिस्ता दबाती रही। उसने नजमी का मुंह ऊपर उठाया, और उसके गालों पर अपने होंठ रख दिए। कितनी लज्जत थी। वह फख्र करने लगी कि उसीने उस जिस्म को अपनी कोख से जन्म दिया था। वह नजमी को नये सिरे से देखने लगी, जैसे उसने उसको जिन्दगी में पहली मर्तबा देखा हो। उसके लिए वह एक अजूबा थी, एक तिलिस्म थी। ज्यों-ज्यों नजमी जवान होती जा रही थी त्यों-त्यों अपनी मां के हृदय के निकट होती

जा रही थी। वह अपनी कुआरी बेटी के अछूते जिस्म को चूमने लगी। जब उसने उसकी गर्दन पर अपने होंठ रखे, तो वह कसमसाकर हंसने लगी। "उई! मुझे गुदगुदी लगती है।"

"शरीर कहीं की! ले अब उठ। मैं और काम भी कर लू।"

"नहीं, मैं नहीं!" यह कहकर, नजमी मा के गले से लिपट गई, और जैसे मां के कान मे जादू फूक रही हो। "अम्मी, अब मैं कभी न रोऊगी, न कभी सारस की तरह टागें निकाले फिरूगी, और न सिर को नगा रहने दूगी।"

"मेरी लाडली बेटी! मेरी लाडली बेटी।"

"और अम्मी, आप नाजी और मज्जो के कपड़े निकाल दें। मैं ही उनको कपड़े पहनाऊगी।"

"मेरी सयानी बेटी! अच्छा तो चल, मैं तुझको कपडे निकाल दू।"

"और अम्मी," नजमी ने और भी लिपटते हुए कहा—"आज मेरे लिए दो अण्डे मगवा लेना। जब मैं स्कूल से वापस आऊगी, तो अण्डो की सफेदी मे दूध मिलाकर अपने बालो को घुघराले बनाऊगी।"

घर के बीसियों छोटे-छोटे कामो मे निबटकर, दोपहर के वक्त जैनू दस्ती, धागा और पिटारी सभाल, ड्राइग-रूम मे कोच पर जा बैठी। दस्ती पर झुके-झुके वह रोने लगी।

"चची, आप रो रही हैं? क्यो?"

उसने आंसू पोछ डाले। "आ सलमा, मेरे पास बैठ जा। तू कब आई चुपके से दबे पाव?...मुझे तो पता भी न चला।"

"आप रोने मे इस कदर खोई हुई थी कि मेरे आने की आपको खबर भी न हुई।"

"ओह, मैं छोटी बहन की याद करके रो रही थी। बेचारी..."

सलमा के चेहरे की सबसे ज्यादा दिलकश चीज उसकी आखें थी। वह आखो से हंसती, आखो से रोती, आखो से सुनती और आखो ही से बातें करती। चुनाचे अब उसने आखें झुका ली।

जैनू ने बात का रुख बदलना मुनासिब समझा।

"तुम्हारी अम्मा क्या कर रही थी?"

"कुछ भी नहीं । बस लेटी थीं ।"

"हमारे यहां क्यों नहीं चली आईं ?"

"न जाने ।"

कुछ देर मौन रहा ।

"सलमा, अब मेरा जी नहीं लगता ।"

"क्यों ?"

"न मालूम ।"

सलमा फर्श की तरफ देखने लगी जैसे उससे कोई पाप हो गया हो।

"मेरा जी चाहता है, कि···"

"क्या जी चाहता है आपका ?"

"यही कि तुम जल्द दुल्हन बनकर हमारे यहां आ जाओ !"

सलमा ने शरमाकर बुर्के के आंचल में चेहरा छिपा लिया, सिवाय आंखों के, हालांकि उसको चाहिए था कि आंखें छिपा लेती, बाकी चेहरा चाहे खुला रहने देती । जैनू के देवर से उसकी मंगनी हो चुकी थी ।

जैनू हमेशा की तरह सलमा को दुल्हन की हैसियत से जांचने लगी। सलमा और जैनू को एक-दूसरे से मोहब्बत थी । सलमा ने अपनी अम्मा को जता दिया था कि वह जैनू चची ही के यहां दुल्हन बनकर जाएगी ।

"जब तू मेरे पास आ जाएगी सलमा, तो मेरे आधे दुःख खत्म हो जाएंगे । तू आकर इस घर को संभाल ले । फिर मैं आराम से खाट पर पड़ी रहा करूंगी । रानी अपने घर की आप देख-भाल कर लिया करेगी ।"

सलमा को चची की बातचीत का यह अन्दाज़ बहुत पसन्द था । उसकी इस मीठी ज़बान और मन को मोह लेने वाली बातों पर वह फिदा थी

कुछ देर रुककर सलमा बोली—"चची, अब तो नजमी भी जल्द ही दुल्हन बनेगी ।"

"देख तो कितनी बढ़ गई है, कम्बख्त ! खुदा मेरी लाडली को नज़रे बद से बचाए । उसकी जवानी है या ज्वार-भाटा ? अल्लाह सबकी आबरू रखने वाला है । सलमा बेटी, अब तू भी जवान है, तन्दुरुस्त है । लेकिन वह मुई हाथ-पांव की कितनी मजबूत, किस कदर तेज़ और तुन्द मिज़ा

है ! उसके लिए तो कोई ऐसा दूल्हा चाहिए, जो उसको हर तरह से काबू में रख सके, वर्ना वह सबके नाक में दम कर देगी। लेकिन मेरी बेटी दिल की बुरी नहीं।"

"हाँ चची। यों तो बात-बेबात पर मुझसे उलझ पड़ती है, लेकिन चची, सच कहती हूँ, अगर कभी मैं खफा हो जाऊं तो फिर सौ-सौ तरह से मनाती है मुझको।"''हम दोनों साथ-साथ खेली है। शादी हो जाने पर न जाने कहां जाएगी हमारी नजमी।"

"बेटी, यही दस्तूर है दुनिया का। कैसी-कैसी सहेलियां थीं मेरी ! मैं ध्यान से सबकी सूरतें देख सकती हूं। कैसी शोख, हसमुख, अलबेली ! हाय, एक दफा बिछुड़कर हम सब एक मर्तबा भी पहले की तरह इकट्ठा न हो सकीं। अपने-अपने घरों में फंसकर रह गईं सब। उनको याद करती हूं तो दिल में एक हूक-सी उठती है। वह झूले, वह चर्खे'''"

"एक बात और कह दूं चची। आप अभी बिल्कुल नौजवान दिखाई देती हैं। नजमी ने तो यों ही बढ़कर आपको आन लिया। सच्ची बात तो यह है कि आप उसकी मां तो मालूम ही नहीं होती। आप तो उसकी बड़ी बहन दिखाई देती हैं।"

जैनू हजार गम्भीर और सुदृढ़ सही, लेकिन यह बात सुनकर फूल गई। उसका चेहरा कानों तक सुर्ख हो गया। उसने अपनी प्रसन्नता को छिपाने की कोशिश भी नहीं की। "भई, मेरी उम्र भी क्या है ? जरा हिसाब तो लगाओ। पन्द्रह वर्ष की उम्र में मेरी शादी हुई।'''और भई, एक साल बाद नजमी पैदा हुई। यानी मैं उस वक्त सोलह वर्ष की थी। और अब नजमी सात महीने ऊपर बारह बरस की है अब हिसाब लगाओ तो हुई न मैं अट्ठाईस बरस की ?'''पहले तो शादियां भी छोटी उम्र में हो जाया करती थीं। बेटी, अब तेरी उम्र भी पन्द्रह से ऊपर की है। तीन बरस से पहले तेरी शादी क्या होगी ? क्या तू समझती है कि शादी के सात-आठ साल बाद तू बूढ़ी भी हो जाएगी ?"

बार-बार अपनी शादी का जिक्र सुनकर सलमा खुश भी होती थी और झेंपती भी थी। अब फिर बेचारी को थोड़ी देर के लिए जमीन की तरफ देखना पड़ा। "'''चची, एक बात और भी है। मुझे ऐसा मालूम

होता है जैसे आपकी तबीयत नासाज़ रहती है। आप कुछ गम करती रहता हैं।"

"गम क्या सलमा ! यही छोटी बहन के मरने से दिल दुःखी रहता है। बेचारी की याद आती है तो बेअख्तियार रो देती हूं।"

"नहीं चची, यह तो एक महीने पहले की बात है न ? लेकिन मैं आपको करीबन ढाई महीने से यों ही देख रही हूं। आप खोई-खोई-सी रहती हैं। अच्छा बताइए, चचा ने अपना पुराना मकान क्यों बेचा ?... मैं कोई गैर तो नहीं हूं। आप छिपाती क्यों हैं ?"

"नहीं बेटी, मैं अकेली जान और इसपर इतनी परेशानियां। छोटे-छोटे बच्चे, देवर, बच्चों के अब्बा, सभीकी देख-भाल करनी पड़ती है। घर के बीसियों छोटे-मोटे काम रहते हैं। तुमसे कुछ छिपा नहीं। हमदर्दी में झूठ-मूठ भी ज़बान हिलाने वाला कोई नज़र नहीं आता। अलबत्ता मेरी बोटियां नोचने को सब तैयार ! यह गृहस्थी भी जान-जोखिम का काम है। और तो और, नौकर तक नहीं, कि हाथ ही बंटाएं। ले-देकर वह चुंधी आंखों वाला छोकरा है। नौकर हैं, कि टिकते ही नहीं। कम्बख्त फाके करते, चीथड़े लटकाए आते हैं। अच्छा खाने को मिलता है, अच्छा पहनने को। बस आंखों पर चर्बी चढ़ जाती है। फिर तो ऊंचे उड़ने लगते हैं। कहां याद रहती है उनको अपनी हैसियत ?"

"कम्बख्त नौकरों का भी काल पड़ गया है। हमारे घर में भी यही हाल है। तभी तो हमने भैंस बेच डाली। अब कौन करे देख-भाल ?... चची, आप दोपहर के समय हमारे घर आ जाया करें। हमारे बंगलों के दरम्यान एक बाड़ ही तो है। कौन-सा काले कोसों का फासला है ? देखिए ना, मैं दिन-भर में एक-दो चक्कर जरूर लगाती हूं।...अगर आप वहां आ जाया करें तो आपका दिल बहला रहेगा। अकेले में आप रोने लगती हैं। मुफ्त में सेहत बर्बाद होती है।"

"मेरा निकलना भी तो हो। अकेला घर छोड़कर कहां जाऊं। जब तक बच्चे घर में रहते हैं, सिर खुजाने तक की फुर्सत नहीं मिलती।... ऐ लो ! आ गया गरीब कालेज से। आज सुबह खाना भी नहीं खा गया था। उठूं, अब दूं कुछ बेचारे को।"

इधर तो सलमा के होने वाले पति भूखे मुर्गे की तरह चोंच खोले लडखड़ाते अन्दर दाखिल हुए, उधर उनकी होने वाली बीबी बुर्का लपेट, बगुले की तरह कमरे से बाहर झपट गई।

सुबह के हंगामे के बाद शाम के हंगामे का दौर शुरू हुआ। रोना-धोना, चीखना-चिल्लाना, मारना-पीटना, खाना-पीना, नाचना-गाना, प्यार, दिलासा, सब कुछ हो चुका तो बच्चे पड़कर सो गए।

काली रात! जैनू बड़ी-सी लम्बी-चौड़ी खिड़की की चौखट पर कुहनी टेके और हथेली पर ठुड्डी रखे थकी-मांदी-सी खड़ी थी। साथ के कमरे से बच्चों के हिलने-डुलने की आवाज़ें आ रही थीं। सबसे परले कमरे मे कत्थई रंग के सिमटे हुए पर्दे में से उसको अपना देवर नज़र आ रहा था। जो खाना खाने के बाद बड़े इत्मीनान के साथ बेंत की बनी हुई आराम कुर्सी पर बैठा रेडियो सुनने मे लीन था। जैनू ने अभी तक खाना न खाया था। वह पति का इन्तज़ार कर रही थी।

"अभी-अभी देहली से आप उस्ताद अब्दुसत्तार से ठुमरी सुन रहे थे। इस वक्त ग्यारह बजने को हैं। हमारा आज का प्रोग्राम खत्म होता है। हम कल सुबह आठ बजे तक आपसे रुखसत चाहते हैं। आदाब अर्ज़।"

जवाब में "आदाब अर्ज़" कहकर उसके देवर ने रेडियो बन्द करके रोशनी गुल कर दी और कम्बल लेकर सो गया।

यह आखिरी आवाज़ थी। इसके बाद खामोशी ही खामोशी, अंधेरा ही अंधेरा। किस कदर बेछोर फैलाव आसमान का! कितना गहरा फैला हुआ अंधेरा! परे खेतों के सिलसिले। अंधेरे में ईंटों के टूटे-फूटे भट्ठे के खंडहर। उससे भी परे गारे के बने हुए मकानों वाला गांव तारों की छाव मे एक धब्बे की तरह दिखाई दे रहा था।

पांवों की चाप सुनाई दी—वह इस आवाज़ से परिचित थी। उसका पति आ रहा था। भीतर पहुंचते ही उसने कुछ फाइलें मेज़ पर पटक दीं। उसने बताया कि वह खाना बाहर ही खा आया था। उसे ज्यादा बातचीत करने की फुर्सत नहीं थी, क्योंकि आज उसे एक मित्र के यहां ब्रिज खेलने के लिए जाना था। इस समय वह बहुत खुश था, अपने-आप ही चहक रहा था…

कपड़े बदलकर वह फिर बाहर चला गया। इधर यह ज्यों की त्यों स्थिर-सी बैठी रही। दिमाग में उलझन थी। थकान से बोझिल ऊब महसूस हो रही थी।

खिड़की में से ऊपर को उठी हुई हरी-हरी भंग के पौधों की नाजुक कोपलें दिखाई दे रही थीं···मटमैले वातावरण में हल्के नीले रंग के फूल! ···स्थिर! मौन!

ब्रिज?

क्या वाकई उसके पतिदेव उसे दूधपीती बच्ची समझते थे? क्या उनका ख्याल यह था कि वह कुछ नहीं जानती थी?

आसमान किस कदर विशाल था! —झपझपाते हुए-से तारे कितने धुंधले, गंदले, फीके, मटमैले···

कली की फरियाद

जिस समय सखियों के रुपहले कहकहे जलतरंग के संगीत की भांति वातावरण में गूंज रहे थे, स्नेह अपनी सुडौल बाहों में घुटने दबाए और उनमें अपना चेहरा छुपाए बैठी थी।

कोमल डाल पर खिले महकते और लहकते मनमोहक रंगों वाले पुष्पों की भांति सखियां लटक-मटककर चुहल कर रही थीं। उनकी महफिल में स्नेह सबसे अलग-थलग मौन धारण किए हुए अनजान-सी बैठी थी, परन्तु वास्तव में उनका प्रत्येक शब्द उसके कान में गुजरकर मस्तिष्क का आलिंगन कर रहा था। उसका दिल जल की सतह पर कांपते हुए कमल की भांति हिचकोले खा रहा था, और उसका अंग-प्रत्यंग पिया-मिलन के गीत गुनगुना रहा था।

बड़ी-बड़ी सीपियों के-से पपोटों तले उसकी काली पुतलियां, अंगूरी शराबकी चादर ताने, प्रत्येक वस्तु को स्वप्निल दृष्टि से निहार रही थीं''' खरगोश के बच्चों के-से सफेद पांव ! यौवन के कारण गदराए हुए टखने, और टखनों में से गुलाबी बादलों की तरह झूमकर उठी हुई पिंडलियां और रानें, समुद्र की सतह पर नृत्य करती हुई लहरों की भांति उसके मखमली पेट पर कुछ सुन्दर बल'''और वह झेंप गई। उसका दिल जोर-जोर से धड़कने लगा, इतने जोर से कि सीने में ज्वार-भाटा आ गया। उसने शरमाकर आंखें मूंद लीं।

वह मधुर क्षण निकट से निकटतम आ रहा था, जिसकी उसके विरही

हृदय को वर्षों से प्रतीक्षा थी।

उसने वाहरी आंखें मूंद लीं तो आन्तरिक नेत्र खुल गए। उसने देखा कि वह स्वर्ग के एक ऐसे भाग में पहुंच गई है, जहां किसी पहाड़ की लम्बी-चौड़ी ढलान पर दमकती हुई घास की हरी चादर बिछी हुई है। प्रकाश के वृक्षों की शाखाएं आकाश की ऊंचाइयों में विलीन हो रही हैं। रंग-बिरंगे पुष्प झिलमिला रहे हैं, और वह अकेली इन पेड़ों की रंगीन छाया तले खड़ी है। उसके शरीर पर एक महीन चुनरी लिपटी हुई है। उस समय उसे अपने नग्न शरीर को देखकर लाज नहीं आई, वरन् रोएं-रोएं से विस्तृत नीलाकाश में उड़ने की उमंग उत्पन्न हुई। किन्तु यौवन से वोझिल उसका कोमल शरीर उड़ने योग्य ही कहां था! अलवत्ता जब वह कदम ब-कदम आगे बढ़ने लगी, तब उसे यों अनुभव हुआ मानो उसका शरीर एक अनोखा नृत्य कर रहा है।

इस तरह धीमी चाल चलती हुई वह न जाने कहां से कहां निकल गई। एकाएक आहट पाकर उसके पांव रुक गए···उसकी बड़ी-बड़ी आंखों की पुतलियां भय और आश्चर्य से प्रभावित होकर दायें-बायें, ऊपर-नीचे घूमने लगीं। उसने निचला होंठ दांतों तले दबा लिया और बुत बनकर खड़ी हो गई।

···पुरुष!···अवश्य ही कोई पुरुष उसका पीछा कर रहा है। यह विचार आते ही वह कांप उठी और जंगली हिरनी की भांति कुलांचे मार-कर भाग निकली। उसका शरीर इतना हल्का था कि वह ढलान से आगे हरे-भरे खेतों में बेथकान फर्राटे भरने लगी।

वह भयभीत ज़रूर थी, लेकिन बहुत प्रसन्न भी थी, क्योंकि वह बड़ी सरलता से, तीव्रता के साथ भाग सकती थी। इस गति से तो वह बड़े आराम से आकाश के दूसरे छोर तक भागती चली जाएगी, और वह निगोड़ा पुरुष उसकी धूल को भी न पा सकेगा···लेकिन अभी तो वह उसका पीछा कर रहा था···धमा धम्···धमा धम्···उसके कदम आगे बढ़ रहे थे और कभी-कभी तो वह उसके इतना निकट मालूम होता था कि अगर चाहे तो हाथ बढ़ाकर उसे दबोच लें। परन्तु सम्भवतः वह जान-बूझकर उसे पकड़ने से टाल रहा था, जैसे वह शरारत से मुस्करा-

कर वह रहा हो—भाग ले, जितना भागना चाहती है ! कभी तो थककर स्वयं ही मेरे प्रेम के आलिंगन में आन बंधेगी'''वास्तव में अब वह थकान का अनुभव करने लगी थी। खेतों के सिलसिले पार करके अब वे लोग एक घने जंगल में प्रवेश कर चुके थे, जहां के वृक्ष वातावरण में कुछ ऐसी विचित्र-सी सुगन्ध फैला रहे थे कि मनुष्य पर ख़ामख़ाह नशा-सा छाने लगता था'''चुनांचे वह थककर निढाल-सी हो गई, हाफ-हाफकर वह कभी इस पेड़ के पीछे छुप जाती, और कभी उस झाड़ी के'''लेकिन अजनबी पुरुष ने उसका पीछा नहीं छोड़ा। इस तरह भागते-छिपते उसने सोचा कि अगर वह जरा साहस से काम लेकर इस घने जंगल में छिप जाए तो वह पुरुष उसे कभी भी नहीं पा सकेगा। उसका विचार सही निकला, अब कदमों की आहट बन्द थी। बहुत दूर पहुंचकर वह एक वृक्ष के तने के चारों ओर अपनी बाहें लपेटकर झूल गई। यद्यपि वह छिपने में सफल हो गई थी, तथापि वह निश्चय नहीं कर पा रही थी कि वह हंसे या रोए।

क्षण-भर के लिए वह स्थिर खड़ी रही। उसे यों प्रतीत हुआ जैसे उसका मस्तिष्क भावना-रहित हो गया हो। अचानक तने से लिपटी उसकी बाहों में सनसनी पैदा हो गई, उसकी उंगली को किसीने अपनी उंगली से स्पर्श किया था। उसके हाथ-पैर निढाल होने लगे। जब उसने धीरे से अपने हाथ खींचे तो देखा कि दो मर्दाने हाथ उसका पीछा कर रहे हैं। उसने नजरें झुका लीं। उसकी बारीक चुनरी उसके शरीर से अलग होकर पृथ्वी चूमने लगी, लेकिन एक कोना उसकी चूड़ियों में उलझ गया। अपने को इस दशा में देखकर वह लाज से जमीन में गड़ गई। परन्तु अब उसके शरीर में हिलने की शक्ति नहीं थी।

कनखियों से उसने पीछा करने वाले पुरुष का चेहरा निहारा'''

यही वह बेचारा था, जिसे एक बार पुरुषों की भीड़ में उसने एकाएक अपना लिया था। हमेशा-हमेशा के लिए अपना लिया था।

उसे पहली नजर में ही मुहब्बत नहीं हुई थी, बल्कि स्कूल आते-जाते समय रास्ते में वह उस चेहरे को अपना मुन्तज़िर पाती थी। पहले तो उसे यह अनुभव ही नहीं हुआ कि वह उसकी प्रतीक्षा करता है, फिर जब उसे इसका पता चला तब वह बहुत परेशान हुई। उसे इतनी तसल्ली

ज़रूर थी कि वह केवल इन्तज़ार करता है, मुंह से कुछ नहीं कहता। वह उस चेहरे से इतनी ज़्यादा परिचित हो गई कि अगर एक दिन वह दिखाई न पड़ता तो वह उदास हो जाती। धीरे-धीरे उसे यह सोचकर उलझन होने लगी कि वह सिर्फ देखता ही रहता है, कुछ कहता क्यों नहीं? आखिर एक दिन उसने आंखों ही आंखों में उससे कहा कि अगर तुम मुझसे दो वात कर लो तो मैं हमेशा-हमेशा के लिए तुम्हारी हो जाऊंगी। लेकिन जिस दिन प्रीतम ने बात करनी चाही तो उसकी जुवान ही वन्द हो गई और इतनी ज़्यादा घबरा गई वह कि वड़ी मुश्किल से हांफती-कांपती घर पहुंची। वहां उसकी आंखें डबडबा आईं।

यह थी उसकी प्रेम-कहानी!

जव स्नेह की शादी की वातचीत चली तो उसने अपनी वुआ को अपना सहयोगी वना लिया।

वुआ अनपढ़ ज़रूर थी, लेकिन ज़माने की हवा को खूव समझती थी। उसने स्वयं लड़के के वारे में समस्त वातें मालूम कीं और फिर एक दिन भाई से टक्कर ले ली।

स्नेह के पिताजी किसी थियेट्रिकल कम्पनी के पारसी मालिक दिखाई देते थे। खूव लम्वे-चौड़े, गोरे-चिट्टे, वड़ी-वड़ी मूंछें...यद्यपि उनका नाटक या एक्टिंग से कोई सम्वन्ध नहीं था, तथापि उनकी वातें और हरकतें थियेटर के एक्टरों से मिलती-जुलती थीं। आवाज़ गरज़दार थी और लहज़े से रोव टपकता था। अतः वहन की वात पर वे सिटपिटाकर वोले "स्नेह क्या जाने इन वातों को। क्या अव वह हमसे भी ज़्यादा समझदार हो गई है? क्या वह भूल गई है कि इन वातों को सोचने-समझने और फैसला करने वाले उसके माता-पिता अभी ज़िन्दा हैं...क्या...?"

हवा में हाथ उछाल-उछालकर थियेट्रिकल अन्दाज़ में न जाने वे और क्या-क्या कहते कि वड़ी वहन ने वात काट दी—"वस, अव रहने दो। तुम तो यों ही विना वात के युद्ध छेड़ देते हो। वातें ज़माने-भर की करते हो पर ज़माने की हवा को नहीं समझते।"

इसपर स्नेह के पिता ने वहन की ओर अपनी उंगली से कुछ इस अन्दाज़ में इशारा किया जैसे भाला तानकर मारने जा रहे हों—"तुम

तो सठिया गई हो। मैंने जो घाट-घाट का पानी पिया है···मैं जमाने को नहीं समझता।···तुम घर बैठी-बैठी जमाने की हवा को समझने लगी। सुभान तेरी कुदरत, सुभान तेरे खेल। छछून्दर के सिर में चमेली का तेल।"

लोग जहां भाई के जोर-कलाम के कायल थे, वहां बहन की दलील-बाजी के भी कायल थे। यों तो बहन जानती थी कि लोग चोरी-छिपे उसे पिद्दी के नाम से बुलाते हैं। लेकिन भाई के मुंह से छछून्दर वाली बात सुनकर वह आपे से बाहर हो गई। हाथ पर हाथ मारकर ठेंगा दिखाती हुई बोली—"सूरत तो देखो, घाट-घाट का पानी पीने वाले की। आज तो मुझे छछून्दर बनाकर पीछा छुड़ा रहे हो, लेकिन याद रखो कि वह दिन भी दूर नहीं जब तुम सिर पीट-पीटकर रोओगे।"

इसपर भाई एकदम पलटकर तेजी से चलता हुआ दीवार के निकट पहुंचकर ऐसे रुक गया जैसे अगर आगे दीवार न होती, तो वह सदा बढ़ता ही चला जाता। वहां रुककर उसने दो-तीन घूंसे दीवार पर मारे और बहन की ओर देखे बगैर बोला—"अच्छा वह है कौन, जो तुम्हें इतना पसन्द आ गया?"

"आदमी है, और कौन है!" बहन ने चमककर जवाब दिया।

भाई ने पुतलियां घुमाकर क्षण-भर को आकाश की ओर देखा और बोला—"भगवान् का हज़ार-हज़ार शुक्र है कि वह आदमी है, घोड़ा, गधा या बैल नहीं है।"

इसपर कमरे में थोड़ी देर के लिए शान्ति छा गई।

"नाम क्या है?"

"प्रेम।"

"अहा! प्रेम का सागर, प्रेम की नैया! प्रेम के चप्पू, प्रेम ही खिवैया··· हां, तो काम?"

"नौकरी।"

"कैसी नौकरी?"

"सरकारी।"

"क्लर्क होगा?"

"हां।"

"मैं पहले ही जानता था।"

"क्या कहने।"

"बाप क्या करता है ?"

"बाप नहीं है।"

"मां ?"

"मां भी नहीं है।"

"गोया प्रेम ही प्रेम है।"

"लड़का हीरा है हीरा !"

"अजी छोड़ो।"

"वह कहता था कि वह मुकाबले के इम्तहान में बैठा है, उसके बहुत अच्छे नम्बर आए हैं, अब वह बड़ी नौकरी पाएगा।"

"कौन-सी बड़ी नौकरी ?"

"अब मैं यह क्या जानूं, तुम पूछ लेना।"

"बुढ़िया देखकर बेवकूफ बनाया है उसने तुम्हें।"

इसपर बहन जरा-सा रुकी और फिर हाथ का पंजा दिखाते हुए बोली, "देखो भैया, माना तुम सयाने और समझदार हो, लेकिन मैं तुम्हें एक नसीहत किए देती हूं, वह यह कि अगरचे दुनिया में इन्सान को होशियार रहना चाहिए, लेकिन बहुत ज़्यादा चालाकी नुकसान भी पहुंचाती है···।"

बहन की यह बात सुनकर जिस अन्दाज से स्नेह के पिताजी सीना फुलाकर गुर्राए, उसकी नकल उतारने में श्यामा को कमाल हासिल था। अतः वह बड़े मजे-मजे में इन बातों को दोहरा रही थी।

श्यामा का रंग सांवला था, नक्श-नैन साधारण, लेकिन इसके बावजूद उसके व्यक्तित्व में बला की खूबी थी। बात करती तो मुंह में फूल झड़ते थे। इस तरह नाचते-कूदते जब उसने ऊपर वाली बात सुनाई तो उसकी सहेलियां मारे हंसी के लोटन कबूतर हो गईं।

"अच्छी श्यामा, बताओ फिर क्या हुआ ?" एक सहेली ने प्रश्न किया।

[illegible] अपनी लम्बी चोटियां लहराकर दो कदम पीछे हटी और

बिना कुछ कहे आंखें मटकाने लगी तो सबकी सब सहेलियां बड़ी उत्सुकता से बोलीं—"हां-हां, अच्छी श्यामा, कहो न फिर क्या हुआ ?"

इसपर श्यामा हंसी और उसके मुसकाने से गाल तमतमा उठे—"फिर···पिद्दी ने पिद्दे को कर दिया चित।"

शरीर श्यामा ने हाथ से भाव बनाकर इस तरह से बात कही कि महफिल में शोर मच गया और कहकहों पर कहकहे उड़ने लगे।

केवल स्नेह इनकी गुफ्तगुओं से बहुत दूर थी। वह अब भी स्वर्ग से वृक्ष के तने के साथ लगी खड़ी थी। पुरुष के चेहरे को एक बार देखकर उसे फिर आंखें मिलाने की हिम्मत न हो सकी। उसके पांव जमीन में गड़ गए थे। वह अजीब कशमकश में पड़ी हुई थी। आखिर वह ऐसी हालत में साजन के काबू कैसे आ गई। एक नजर फिर अपने शरीर पर डालकर उसने आंखें मूंद लीं।

"स्नेह !"—बिलकुल नई आवाज में अपना नाम सुनकर उसका बदन थर्रा गया।

"स्नेह !"—फिर वही आवाज आई, "तुम मुझसे दूर भाग रही हो, तुम मुझसे परे जा रही हो, मैं बहुत दुखी हूं। मैं बेहद परेशान हूं···।"

"नहीं, नहीं, मैं आपसे दूर होकर भला जिन्दा भी रह सकती हूं।"

स्नेह अपने स्वप्नों की दुनिया में डूबी हुई आगे बढ़ी और प्रीतम के गले से लिपट गई—"मुझे छिपा लीजिए···मुझे छिपा लीजिए···।"

इसके बाद 'बारात आ गई, बारात आ गई' के शोर से वह चौंकी। उसने सिर उठाकर देखा तो उसकी सहेलियां दूल्हा देखने के शौक में एक-दूसरे पर गिरती-पड़ती भागी जा रही थीं।

बाजों का शोर और भी करीब सुनाई देने लगा। बारात दम-ब-दम बढ़ती चली आ रही थी।

अब स्नेह बिल्कुल अकेली रह गई थी। एकाएक कुछ आवाजें सुनाई दीं—"अरी, दूल्हा तो कोई और ही आदमी है, घोंचू-सा।

जब पिद्दी ने पिद्दे से कहा—"तुमने मुझे धोखा दिया। अब न जाने मासूम लड़की क्या करेगी ?"

इसपर पिद्दे ने शरारत से घनी मूछों को उंगलियों से छूते हुए

जवाव दिया, "रानी वनकर राज करेगी मेरी वेटी।"

स्नेह ने कोमल कलियों की भांति अपने अधखुले होंठों को, जिन
से मोती झलक रहे थे, आंसू पी जाने के असफल प्रयास में ज़ोर से भीं
कर वन्द कर लिया।

तीन देवियां

उस युवती का चेहरा यों नजर आता था जैसे मक्खन का बना हुआ हो···असली नमकीन मक्खन का।

उसके उज्ज्वल और समतल माथे पर एक बल चमकती हुई छुरी की तरह उभरा। उसने दुबारा सूटेड-बूटेड युवक को सिर से पांव तक देखा, फिर मीठे स्वर का संगीत वातावरण में फैलाते हुए पूछा, "कहिए, कैसे आना हुआ आपका ?"

सुन्दर युवती की आंख में चमकती हुई बिजली से चुंधिया कर युवक ने सिर झुका लिया और अपने लोफर शू की चमकदार नोक पर दृष्टि जमाते हुए उत्तर दिया, "मेरा नाम सतीश है, मैं अल्पना जी को देखने···मेरा अर्थ है कि मैं उनके दर्शन करने आया हूं।"

अनायास ही वह हसीना चौंक पड़ी और फिर उसने चहककर पूछा, "ओह ! तो आप अल्पना के लिए रिश्ते के विज्ञापन के सम्बन्ध में आए हैं ?"

सतीश ने छिपी नजरों से युवती की ओर देखते हुए स्वीकार किया, "जी हां, परन्तु यहां आकर मैं कुछ हड़बड़ा गया हूं।"

"क्यों ?" युवती ने बरामदे में पड़ी कुर्सी पर बैठने का इशारा करते हुए पूछा।

सतीश अपनी पतलून को धोती की तरह सभालता हुआ कुर्सी में धंस गया और झेंपकर बोला, "विज्ञापन में यहां का असली

दिया नहीं गया था…अब जज साहब की कोठी में आकर हड़बड़ा गया हूं।"

"आप तो जानते ही हैं कि शादी के विज्ञापन में असली पता नहीं दिया जाता।"

सतीश सिर हिलाकर अपनी अंगुलियों की ओर देखने लगा। युवती ने नौकर से कॉफी तैयार करने को कहा और सतीश को बताने लगी, "मुझे खेद है कि अल्पना घर पर नहीं है। उसे ज़रूरी काम से कहीं जाना पड़ गया। वह मुझसे दो वर्ष बड़ी है। हमारे नयन नक्श और रंग-रूप बिल्कुल एकसमान हैं। मुझे देखकर आप अल्पना की शक्ल-सूरत का अनुमान लगा सकते हैं।"

"अरे! कॉफी पीकर जाइएगा। क्या मैं इतनी बदसूरत हूं कि आप…"

"ओह! नहीं, नहीं, भगवान् के लिए ऐसा मत कहिए…मैं…"

नौकर कॉफी ले आया। वह चला गया तो युवती ने प्याला सतीश की ओर बढ़ाते हुए पूछा, "हां, तो आप मैं-मैं करके क्या कहने जा रहे थे?"

"मेरा मतलब था कि आप अति सुन्दर हैं।"

युवती का चेहरा खिल उठा। वह कुर्सी आगे को खिसकाकर बोली, "तब तो हम हार्ट-टू-हार्ट बातचीत कर सकते हैं।"

कॉफी चलती रही। इसके साथ हार्ट-टू-हार्ट बातचीत भी होती रही। युवती ने अपना नाम सपना बताया। उसने सतीश को अपने पिता यानी जज साहब से भेंट करने को कहा तो वह फिर मिलने का वचन देकर भाग निकला।

जब से सतीश को साढ़े तीन सौ मासिक की नौकरी मिली थी, उसने ब्याह-शादी के विज्ञापन देखने आरम्भ कर दिए थे। सपना के शानदार बंगले में पहुंचकर पहले तो वह सचमुच ही घबरा गया था, परन्तु विदा होते समय उसे लगा कि उसकी भेंट सफल रही। उसने सोचा कि आजकल कमाऊ, स्वस्थ और भले वरों का अकाल पड़ गया है

तभी तो ऊंचे लोग मध्यम श्रेणी के युवकों को लडकियां देने को तैयार हैं।

इन मुलाकातों का चक्कर चल चुका था। दूसरे दिन साढे दस बजे जब सतीश ने अपने-आपको सुप्रसिद्ध सिविल सर्जन नय्यर की कोठी के निकट पाया तो उसे खुशी ही हुई, आश्चर्य नहीं। कुछ अलसेशियन कुत्तों ने भौंक-भौंककर उसका स्वागत किया। इसपर एक काली-कलूटी बन खाती जवान दासी ने बाहर निकलकर कुत्तों को डांटा और सतीश को ड्राइंग-रूम में बिठा दिया। उसने अपना उद्देश्य बताया तो नौकरानी कूल्हे मटकाती दूसरे कमरे में चली गई।

थोड़ी ही देर में नौकरानी ड्राइंग-रूम में आई और दरवाज़े के निकट ही रुक गई। पर्दे की ओर से सुरीला स्वर सुनाई दिया, "आप किससे मिलना चाहते हैं?"

सतीश आदरपूर्वक कुर्सी से उठकर बोला, "मैं प्रीतिजी से मिलने आया हूं।"

अब उसने पूरी समस्या पर प्रकाश डाला। पर्दे के पीछे से आवाज़ आई, "तो क्या आपको आज ही बुलाया गया था?"

"जी नहीं···परन्तु मुझे सूचित किया गया था कि मैं जब जी चाहे चला आऊं।"

"ओ!···परन्तु मुझे खेद है कि इस समय घर पर कोई नहीं है···"

अब वह चंचल नौकरानी बोली, "परन्तु प्रीतिजी, वह तो आपसे मिलने आए हैं। मिल लीजिए न।"

सतीश को पर्दे के नीचे से दो पांव दिखाई दिए, जिनके पंजे हल्के-हल्के रंग-रंगीले नागरों में छिपे हुए थे। सांवले रंग के होने पर भी पांव बड़े खूबसूरत लग रहे थे···नौकरानी के सुझाव पर वे पांव पहले तो झिझककर एक कदम पीछे हट गए फिर आगे को बढ़े। सतीश ने नज़र उठाकर देखा कि उसके सामने इकहरे बदन की लम्बी, गेहुंए रंग वाली युवती खड़ी थी। रंग गोरा न होने पर भी उसके अंग-अंग से सौन्दर्य के स्रोत फूट रहे थे।

चाय आई, बातें हुईं। दासी ने सफेद दांत दिखाते हुए सतीश से कहा, "हमारी छोटी मालकिन को रंग गोरा न होने का बड़ा दुख है।"

प्रीति की घुड़की पर दासी चंचलता से हंसती हुई चली गई। सतीश बोला, "अजी ! गोरे रंग से क्या होता है ! अभी कल ही मेरी मुलाकात एक गोरी-चिट्टी लड़की से हुई थी। सच पूछिए तो वह आपके जूते साफ करने योग्य भी नहीं है।"

प्रीति आश्चर्य में डूबी अपनी मोटी-मोटी आंखें उसके चेहरे पर गाड़े बातें सुनती रही।

मुलाकात समाप्त हो जाने पर वही दासी सतीश को कुत्तों से बचाकर फाटक तक छोड़ आई।

इतने बड़े खानदानों की दो लड़कियों से मुलाकात कर लेने के बाद सतीश के मन की हीन भावना बिल्कुल गायब हो गई। वह समझ गया कि लड़कियां चाहे कितने भी ऊंचे खानदान की हों, अन्त में उन्हें पुरुष की दासी बनना ही पड़ता है।

तीसरे दिन सतीश तीसरी लड़की से मुलाकात करने गया। वहां पहुंचकर उसे लगा जैसे वह किसी राजा के महल में पहुंच गया हो। उसका यह विचार गलत भी नहीं था। रानी, यानी तीसरी लड़की के पिताजी किसी जमाने में इतने बड़े ताल्लुकेदार थे कि राजा कहलाते थे।

पहले तो सतीश लोहे के बड़े फाटक के निकट खड़ा लम्बी-चौड़ी कोठी का जायजा लेता रहा। कोठी के बाहर दूर तक फैले हुए लॉन पर कुछ कुर्सियां इधर-उधर बिखरी पड़ी थीं। विदा होती हुई धूप में हर वस्तु जगमगा उठी थी, परन्तु वहां बिल्कुल मौन छाया हुआ था… जब सतीश को इत्मीनान हो गया कि आसपास कुत्ते नहीं हैं तो उसने फाटक के अंदर कदम रखा।

तब उसने एक झाड़ी के पीछे से गोरखे चौकीदार को बाहर निकलते देखा। सतीश उससे कुछ कहने को ही था कि अनायास ही वातावरण में मीठे स्वर का संगीत गूंज गया, "आप कौन हैं ?"

चुस्त कमीज और चुस्त सलवार पहने लाल-लाल गालों वाली एक गोरी लड़की उससे यह प्रश्न पूछ रही थी। उसके कुछ कहने से पहले ही लड़की फिर बोली, "मेरा नाम रानी है…यह मेरा असली नाम नहीं

है, परन्तु माता-पिता मुझे लाड से रानी कहकर ही बुलाते हैं।"

"बहुत स्वीट नाम है···मैं सतीश हूं।"

अब रानी ने अंग्रेज़ी में कहा, "तो आप भी मेरे उम्मीदवारों में से हैं? जब से मेरे रिश्ते का विज्ञापन निकला है, तब से लड़कों का तांता बंध गया है। मैंने शादी से साफ इंकार कर दिया है। मैंने तो डैडी से यहां तक कह दिया था कि मैं किसी भी ऐसे उम्मीदवार से मुलाकात नहीं करूंगी···"

उस चंचल लड़की के तीखे शब्दों ने सतीश को निराश कर दिया। रानी मुस्करा दी, "आप तो इतने बुरे नहीं हैं···चले आइए।"

कोठी की ओर बढ़ती हुई रानी फिर कहने लगी, "डैडी मुझसे निराश होकर मम्मी और मेरे दूसरे भाई-बहनों के साथ सिनेमा देखने गए हैं। अपनी नाराज़गी जताने के लिए मैं उनके साथ नहीं गई। मैं चौकीदार से कहने आई थी कि किसी नये आदमी को भीतर मत घुसने देना···परन्तु आपको देखा तो···।"

लज्जा से रानी का चेहरा लाल हो गया।

जब वे लॉन पर कॉफी पी रहे थे तो रानी ने आंखें झुकाकर पूछा, "क्यों जी! आपका मेरे विषय में क्या विचार है?"

सतीश ने रानी की उंगलियों को अपनी उंगलियों से छूते हुए कहा, "आपको हुस्न का शोला कहा जाए तो गलत नहीं होगा···सच पूछिए तो जितनी लड़कियां मैंने देखी हैं वे सब आपके जूते···।"

कुछ दिन बाद सतीश को सपना का पत्र मिला। लिखा था; "आप कल्पना से मिलने आए तो मैं आपके गले पड़ी। परन्तु मैंने आपकी इतनी प्रशंसा की कि वह आपसे मिलने के लिए उत्सुक हो रही है। कल सुबह केवल हम दोनों बहनें ही घर पर रहेंगी। अवश्य आइए। नाश्ता साथ ही करेंगे।"

दूसरे दिन सतीश बन-ठनकर जज साहब के यहां पहुंचा तो नौकर ने उसे एक साफ-सुथरे बड़े कमरे में बिठा दिया। कमरे की खिड़कियों से से फुलवारी की भीनी-भीनी सुगन्ध भीतर आ रही थी।

सतीश ने मेज़बान की ओर देखकर पूछा, "अल्पना जी कहां है?"

"अरे ! मैं ही तो हूं अल्पना !···क्या आप मुझे सपना समझ रहे हैं ? उफ ! हम दोनों वहनों की शक्ल भी कितनी मिलती है ? वह अभी आ जाएगी ।"

सतीश चकित रह गया—अल्पना ज़रा चंचलता से बोली, 'आप चुप क्यों हैं ? पुरुष स्त्रियों से कैसी-कैसी बातें किया करते हैं ? क्या आप मुझसे यह नहीं कहेंगे कि आपने जितनी भी लड़कियां देखी हैं, वे मेरे जूते साफ करने के योग्य भी नहीं हैं ?"

सतीश भी उसी चंचलता से बोला, "आप चाहती हैं तो अवश्य कहूंगा···।"

अल्पना खुश होकर बोली, "धन्यवाद ! पर ज़रा रुकिए, मेरी कुछ सखियां भी ये शब्द सुनना चाहती हैं ।"

प्रीति और रानी बगल वाले कमरे में से भीतर आ गई तो अल्पना बोली, "घबराइए नहीं, पुरुष तो सदा से अपना मन बहलाने के लिए स्त्रियों को बेवकूफ बनाते रहे हैं । अब हमने भी पुरुषों को उल्लू बनाना अपनी हॉबी बना ली है···आप हॉबी का अर्थ तो समझते हैं न···?"

बनवास

१२७, सुभाष रोड,
ऋषि नगर,
२२ दिसम्बर, १९६६

प्यारी रत्ना, प्यारी सखी,

बड़ी प्यारी सुबह है। बिल्कुल तुम्हारी मुस्कुराहट की तरह। मैं अपनी बहन के मकान के बाहर वाले कमरे में बैठी तुम्हें यह पत्र लिख रही हूं, बल्कि तुमसे बातें कर रही हूं।

यह छोटा-सा कस्बा है। साफ-सुथरा, खामोश-सा। यह मकान छोटी-सी फुलवारी में घिरा हुआ है। मकान भी छोटा है, परन्तु यों लगता है, जैसे इसके बनते ही भगवान् ने हरियाली, ताजगी और आनन्द का मन्त्र इसपर फूंक दिया। बच्चे स्कूल जा चुके हैं। मेरे कानों में अब भी उनके स्वरों का संगीत गूंज रहा है।

मैं यहां आकर बहुत खुश हूं। तीन दिन पहले की बात है, जब मैं तुम्हारे साथ अपने क्वार्टर में बैठी थी। बाहर मूसलाधार बारिश हो रही थी। सामने वाले मकान की एक गज ऊंची चहारदीवारी के ऊपर, बारिश में नहाता हुआ वह हरा-भरा पेड़ दिखाई दे रहा था, जिसकी चमकती ताजी पत्तियों में से गहरे लाल रंग के फूल सिर उछाल-उछाल-कर नृत्य कर रहे थे। हम दोनों अभी बाहर से आई थीं। हमारे कपड़े भीगकर हमारे शरीर से चिपके हुए थे। वे शरीर को ढांपने के बजाय

मानो अंग-अग का ढिंढोरा पीट रहे थे—हर मकान, हर मार्ग, हर पेड़, हर आने-जाने वाला इसमें डूबा हुआ स्पन्ज का टुकड़ा दिखाई दे रहा था।

एकाएक मैंने कहा था, "रत्ना ! जानती हो कि महीने-भर की छुट्टियां क्यों ली हैं ?"

तुम्हें पहले से ही आश्चर्य हो रहा था कि ये छुट्टियां लेने का रहस्य क्या था ? तुम कुछ उत्तर भी न दे पाई थीं कि मैंने फिर कह दिया था, "मैं अपनी बड़ी बहन के यहां जा रही हूं। महीना-भर वहीं रहूंगी।"

अब तुम्हारा आश्चर्य और भी बढ़ गया था, तुम बोलीं, "लेकिन पुष्पा ! तुम तो कहती थीं—मेरा मतलब है, मैं समझती थी कि संसार में तुम्हारा और कोई नहीं है।"

उस वक्त तो मैं तुम्हारी इस बात को गोल कर गई, क्योंकि जल्दी में समझ नहीं पाई कि तुम्हें क्या बताऊं लेकिन अब बताती हूं—

जब मैं दस वर्ष की थी, तो मेरी माताजी का देहान्त हो गया। वे मेरे पिताजी की दूसरी पत्नी थीं। उनकी पहली पत्नी से भी एक लड़की थी, जिसका नाम आशा था, और जो मुझसे सात साल बड़ी थी। मेरी माताजी का आशा से बहुत अच्छा व्यवहार रहा, परन्तु मैंने कभी उसे अपनी बहन नहीं समझा। वह मुझसे प्यार करती थी, और मैं उससे सौतेली बहन समझकर मन की गहराइयों में घृणा करती रही।

मेरी माताजी की मृत्यु के डेढ़ साल बाद तक पिताजी जीवित रहे। वे अपने पीछे हम दो बहनों को छोड़ गए थे। हम बिछुड़ गईं। मैं अपनी बुआ के पास रहने लगी, और आशा भी अपने किसी रिश्तेदार के यहां चली गई। वहीं उसकी शादी हो गई। मैंने उसकी शादी में भी भाग नहीं लिया, और न बाद में पत्र-व्यवहार ही रखा। यहां तक कि अपनी शिक्षा समाप्त कर लेने के बाद मैंने तुम्हारे कॉलिज में नौकरी कर ली।

लो ! तुम्हें अपनी जीवन-कथा सुना डाली। धीरे-धीरे विचार शुद्ध होने के साथ मुझे इस बात का आभास होने लगा कि आशा ऐसी बुरी तो नहीं थी। इसी दौरान आशा को मेरा पता मिल गया। उसने फौरन ही मुझे बड़ी प्यारी-सी चिट्ठी लिख भेजी। इस तरह पत्र-व्यवहार चालू हो

गया। यहां तक कि मैंने निश्चय कर लिया कि एक महीना बहन के पास ही रहूंगी। इसीलिए अचानक छुट्टियां ले लीं।

अब समझीं?

मैं यहां बहुत खुश हूं, बहुत-बहुत खुश हूं—यद्यपि दीदी मुझसे बहुत अधिक बड़ी नहीं हैं, परन्तु मुझे यूं लगता है जैसे मुझे फिर से मेरी मां मिल गई हो। हाय! कितने लम्बे समय तक इस पवित्र और अनोखे प्यार से वंचित रही। पत्र बहुत लम्बा हो गया है। अब समाप्त करती हूं। हां! सफर बहुत अच्छा कट गया। एक मामूली-सी दुर्घटना ज़रूर हुई थी। यदि एक भला आदमी न मिलता, तो काफी परेशानी होती—

तुम्हारी अपनी

पुष्पा

ऋषि नगर

२७ दिसम्बर, १९६६

प्यारी रमा,

गजब कर दिया तुमने! यह ठीक है कि जिस व्यक्ति ने मेरी सहायता की, मैंने उसे 'भला आदमी' कह दिया। इतनी-सी बात का तुमने बतंगड़ बना दिया। अब तुम सारी कथा सुने बिना नहीं मानोगी, तो लो, सुनो! कानपुर के स्टेशन पर मुझे गाड़ी बदलने के लिए उतरना पड़ा। दूसरी गाड़ी के आने में अभी दो घण्टे का समय था। मैंने कुली से कहा कि वह मेरा सामान वेटिंग-रूम में रख दे।

फर्स्ट क्लास के वेटिंग-रूम में प्राय: कम मुसाफिर होते हैं। उस समय वहां केवल एक आदमी उपस्थित था। शायद मैं उसकी ओर एक नज़र भी न डालती, परन्तु भीतर कदम रखते ही मेरा पांव कुछ टेढ़ा पड़ा कि उठ ही न सकी। मोच तो नहीं आई, परन्तु टखने की नसें बुरी तरह खिंच गईं और मैं वहां की वहीं बैठ गई। कुली जा चुका था। जब उस व्यक्ति ने हाथ बढ़ाकर सहारा देना चाहा तो मैंने उसकी ओर देखा। उसकी उम्र बत्तीस-तैंतीस वर्ष की होगी, और वह बड़ा गम्भीर लगता था। उसके हाथ बढ़ाने में भी एक वैभव था। मजबूरन मैंने उसके

बाजू का सहारा ले लिया। जब मैं आराम-कुर्सी पर बैठ गई, तो उसने पूछा, "मोच तो नहीं आई ?"

"सूजन कोई विशेष तो नहीं, परन्तु दर्द काफी है। नसें खिंच गई हैं।"

"यही बात होगी।"

इतना कहकर वह अपने बैग में से आयोडेक्स की शीशी निकाल लाया। मेरे कुछ कहने से पहले ही वह पांव के बल बैठकर दवाई मेरे टखने पर मलने लगा।

उसकी गम्भीरता को देखते हुए मुझे कुछ कहने का साहस नहीं हुआ। वह मालिश कर चुका तो बोला, "यह शीशी भी आप ही रख लीजिए, बाद में फिर कभी मालिश करनी पड़ेगी।"

यह सब कुछ मानो पलक झपकते में हो गया। अब वह मुझसे दूर हटकर कुर्सी पर जा बैठा, और एक फाइल खोलकर उसके पन्ने पलटने लगा।

लो बस ! केवल इतनी-सी घटना थी।

अब तुम यह भी जानना चाहोगी कि उसकी शक्ल-सूरत कैसी थी—बहुत सुन्दर था। देखने में पच्चीस-छब्बीस वर्ष का लगता था, परन्तु उसकी गम्भीरता से मैंने अनुमान लगाया कि वह तीस वर्ष पार कर चुका था—फिर भी कुंआरों की भांति वह चोरी से मेरी ओर देख लेता था—मुझे उसकी यह हरकत बुरी नहीं लगी।

बारह-पन्द्रह मिनट के बाद उसकी गाड़ी आ गई। सम्भवतः उसका सामान प्लेटफार्म पर ही कुली की निगरानी में रखा था। वह फौरन अपना बैग लेकर चल दिया।

दरवाज़े तक पहुंचकर वह रुका। मुड़कर मेरी ओर देखा, और फिर कुछ हिचकिचाते हुए बोला, "क्षमा कीजिएगा···मेरी ताक-झांक का बुरा न मानिएगा···वास्तव में आपकी शक्ल किसी और से बहुत मिलती-जुलती है···।"

वह चला गया।

रत्ना, हम स्त्रियां भोली तो बेशक होती हैं, परन्तु ये पुरुष हमें इन

कदर मूर्ख क्यों समझते हैं। कितना घिसा-पिटा और बेकार बहाना बनाया था उसने !

फिर भी मैं उसे क्षमा करती हूं'''बुरा तो नहीं था बेचारा।

क्या मुसीबत है। न तुम कुरेद-कुरेदकर बातें पूछतीं, और न मुझे इस विषय पर इतना कुछ लिखना पड़ता। आपस की तो कोई बात ही नहीं हुई।

जाओ, मैं तुमसे नहीं बोलती'''मेरा मतलब है कि अब और कुछ नहीं लिखूंगी।

तुम्हारी ही
पुष्पा

ऋषि नगर
२ जनवरी, १६६७

प्यारी रत्ना,

उफ ! सच बोलना भी पाप है क्या ?'''तुमने अपने पत्र में कैसी-कैसी चुटकियां ली हैं। यह शराफत तो नहीं, परन्तु जाओ, मैं गुस्सा थूक देती हूं।

सखी ! एक बार फिर उस भीगी दोपहर की कल्पना करो, जिसका जिक्र मैंने अपने पहले पत्र में किया था। न सिर्फ हमारे कपड़े और शरीर की जिल्द गीली थी, बल्कि यूं लगता था, जैसे पानी रोम-रोम में घुसकर हड्डियों में भी थरथराहट पैदा कर रहा हो। गीले कपड़े बदले बिना ही हमने पॉलमन कॉफी तैयार की थी और खिड़की के पास बैठकर पीनी शुरू कर दी थी। कितना मजा आ रहा था। तरबतर कपड़ों में लिपटे हुए शरीर के भीतर गर्म-गर्म कॉफी जाती, तो अनोखे आनन्द का आभास होता था। यह आनन्द केवल मुंह तक सीमित नहीं था, वरन् पूरे शरीर को ही इसका मजा आ रहा था।

तुमने कहा, "पुष्पा ! हर समय तुम्हारे गालों पर गुलाल-सा उड़ता रहता है, परन्तु इस समय यूं लग रहा है, जैसे बारिश की बूंदों ने इस

गुलाल को तुम्हारे गालों पर जमा दिया हो···"

तुम्हारी इस बात से ठण्डी हवा के झोंकों के बावजूद मेरे शरीर में एक शोला-सा भड़क गया···

कल ही की बात है। हम दोनों बहनें बड़े दर्पण के आगे खड़ी थीं। दीदी बोलीं, "पुष्पा ! हम दोनों की शक्लें कितनी मिलती-जुलती हैं। हमारी आंखें, होंठ, दांत बिल्कुल पिताजी जैसे हैं। हमें देखकर कोई भी कह सकता है कि हम दोनों सगी बहनें हैं। यह अलग बात है कि तुम अभी खिलती हुई कली हो···"

उन्होंने मेरे दोनों कन्धों पर हाथ रखकर मेरा मुंह चूम लिया, और फिर बोलीं, "अब तुम्हारी शादी शीघ्र से शीघ्र हो जानी चाहिए। बड़ी बहन होने के नाते से मेरा कर्तव्य है कि तुम्हारे विवाह की चिन्ता करूं। शरमाओ मत···अगर तुम्हारे दिल ने किसीको चुन लिया है, तो भी बिना संकोच के बता दो—"

सखी, मेरे हृदय में फूल ही फूल खिल गए। रात आंखों में कटी। तुम तो यही कहोगी कि दीदी को मन की बात बता दो—हट। यह मुझसे नहीं होगा। तुम्हारे पास आकर सोचेंगे। यदि तुम बहुत बल दोगी, तो दीदी को पत्र लिखकर···हाय ! यह क्या लिख दिया मैंने।

मगर वह है कौन ! कहां है !

तुम्हारी अपनी
पुष्पा

ऋषि नगर
७ जनवरी १९६७

प्यारी रत्ना,

नाश्ता करने के बाद तुम्हें पत्र लिख रही हूं। बच्चे अभी फुलवारी में चिल्ला-चिल्लाकर खेल रहे हैं।

तुम्हारी यह शिकायत बिल्कुल ठीक है कि मैंने जीजाजी के बारे में अभी तक एक भी शब्द नहीं लिखा···बात यह है कि···

लो ! फुलवारी से बच्चे एकदम पिताजी-पिताजी कहकर चिल्ला रहे हैं। यही जीजाजी हैं। अभी पत्र अधूरा छोड़ रही हू। थोड़ी देर के बाद इसे समाप्त करूंगी।

× × ×

पत्र लिखना बन्द करके मैं एकदम ड्रेसिंग-टेबुल के आगे जा खड़ी हुई। जल्दी से बालों की लटों को समेटा, साड़ी का आंचल सभाला, क्योंकि दीदी जीजाजी को लेकर इसी तरफ आ रही थीं।

पलटकर देखा'''और जीजाजी से आखें चार होते ही मैं चकित-सी रह गई।

हां रत्ना ! वे बाहर गए हुए थे। आज ही लौटे हैं। घर में उनकी कोई फोटो भी नहीं थी। तुम्हे उनके बारे में लिखती भी तो क्या लिखती ?

दीदी की तरह उनका व्यवहार भी बहुत स्नेहपूर्ण है, परन्तु सखी ! मैं संयोग के इस कठोर उपहास पर इतनी लज्जित-सी और परेशान हूं कि अब यहां एक पल भी नहीं रुक सकती।

तुम मुझे फौरन तार भेज दो। इस तरह मुझे यहां से निकलने का उचित बहाना मिल जाएगा।

देर मत करना, क्योंकि अब ऐसा लगता है जैसे मन को फिर वनवास मिल गया हो—पहले की भांति'''

तुम्हारी अपनी
पुष्पा

ज़िन्दगी का खुशबूदार मोड़

यूं तो दफ्तर का समय समाप्त होने तक श्री लतीफ बुरी तरह थक जाते थे, परन्तु साइकिल चलाते हुए जब घर पहुंचते तो उनके शरीर का अंग-अंग दुखने लगता। शायद यह थकान इतनी शारीरिक नहीं थी—जितनी मानसिक···माना वे चार बच्चों के बाप थे और एक पत्नी के पति, फिर भी न अपनी सूरत से कमज़ोर दिखते थे और न वास्तव में शक्तिहीन ही थे। वर्षों से जीवन की गाड़ी खींचते-खींचते बोर हो गए थे। वही सुबह दफ्तर जाना, शाम को थके-हारे लौटना, दिन ढले पत्नी की खुसर-पुसर, बच्चों की टें-टें, इन सभी कारणों से जीवन सपाट हो गया था उनका। उठते-बैठते उन्हें अपने घुटनों पर हाथ रखने पड़ते थे, चुनांचे अब भी जाकर कुर्सी पर बैठते समय उन्होंने न केवल घुटनों पर हाथ रखे बल्कि 'या अल्लाह' भी कहा। इसी समय घर के दरवाज़े पर टंगी तख्ती पर अरबी में लिखे 'या अल्लाह' पर उनकी नजर पड़ी। उनके होंठों पर एक फीकी-सी मुस्कराहट फैल गई। उनकी दादी ने कभी यह चौखटा वहां लटकाया था। यह पुरानी टाइप की वस्तु सजावट के लिए युवक लतीफ को पसन्द नहीं थी, परन्तु उस समय उन्होंने कभी कल्पना भी नहीं की थी कि एक समय वह भी आएगा जब उठते-बैठते उनके मुंह से अनायास ही 'या अल्लाह' निकल जाया करेगा।

वह ज़माना भी क्या ज़माना था! शायरी का शौक तो उन्हें लड़कपन से ही था। कैसे फुदक-फुदककर अपनी गज़लें पढ़ा करते थे। एक-

एक मिसरे पर वह स्वय कलेजा थामते और सुनने वाले भी दिल पकड़-कर बैठ जाते। पढ़ाई समाप्त हुई, नौकरी लगी। कान्वेण्ट की पढ़ी हुई छम-छम करती बेगम घर मे आई। जी हा, मुसलमानों में उनके खानदान वाले उन्नतिशील समझे जाते थे। इसीलिए उनकी पत्नी पर्दा नहीं करती थीं। जब कभी उनकी बेगम रेहाना को कहीं बहुत ही पुराने विचारों के रिश्तेदार के यहां जाना होता तो दिखावे को बुर्का ओढ लेती, खैर··· शादी के बाद बच्चे हुए, झमेले बढे, जिस तेज़ी से रहन-सहन का स्तर बढ़ा, उस तेजी से आमदनी नहीं बढी। फलस्वरूप अब भी साइकिल घसीटे जाते थे। दोस्तों ने कई बार कहा कि भई, एकाध लेम्बरेटा खरीद डालो···उनके पास रुपये भी थे, परन्तु यह सोचकर कि इतनी रकम किसी लड़की की शादी या बेटे का कारोबार चलाने के काम आएगी, वे अपनी पुरानी साइकिल से प्रीति निबाहे जा रहे थे।

बेगम ने सर्दी के कारण लोटे में थोडा गर्म पानी पास ला रखा, और इस विचार से कि मियां को उठने का कष्ट न करना पड़े, उन्होंने [illegible]

[illegible] नौकरानी से तौलिया झपटकर ले लिया।

बेगम उनके नाश्ते का ठीक प्रबन्ध रखती थी। उनमें अनपढ़ बीवियों वाला फूहड़पन नहीं था। जानती थी कि मियां दफ्तर से आकर जब तक नाश्ता न कर लें और फिर हुक्के के दो-चार कश न लगालें, तब तक उनकी थकान दूर नहीं होती थी। ट्रे में चाय का सामान, नाश्ते की छोटी-मोटी चीज़ों के अतिरिक्त बाज़ार के आटे की गरमागरम मीठी टिकिया लेकर बेगम खुद आईं और सब चीज़ें मेज पर टिका दीं। श्री नसीम को ये बाजरे की टिकिया बचपन से बहुत पसन्द थीं, हालांकि न उनकी बेगम की और न उनके मित्रों की समझ में कभी आया कि इन बाजरे की टिकियों में क्या रखा है जिनपर कि वे लट्टू थे?

ट्रे की एक प्लेट में उनकी डाक भी रखी थी। दो-तीन पत्रिकाएं और दो-तीन पत्र···सभी शौक छूट गए परन्तु गज़लें वे अब भी कहते थे, जिनका पारिश्रमिक तो कुछ न मिलता, अलबत्ता पढ़ने को कुछ

काएं मुफ्त में मिल जाती थीं।

कमरे के बाहर उनकी बेगम लौंडिया से हुक्का अन्दर ले जाने को कह रही थीं। चाय के घूंट भरते समय उन्हें चाय की खुशबू के साथ-साथ एक नई प्रकार की सुगन्ध भी महसूस हुई। अचानक वे सोचने लगे कि यह सुगन्ध कहां से आ रही है''इधर-उधर देखा तो पता चला कि उसी प्लेट में से आ रही थी जिसमें पत्र और पत्रिकाएं रखी थीं। उन्होंने पत्रों को उठाकर सूंघना शुरू किया तो पता चला कि एक हल्के गुलाबी रंग के लिफाफे से वह सुगन्ध आ रही थी। जिस ढंग से पता लिखा हुआ था, उससे उन्होंने अनुमान लगाया कि वह अक्षर किसी स्त्री के हाथ के लिखे हुए थे—इतने में ही उनकी बेगम किसी काम से अन्दर आई, उन्होंने झट से वह लिफाफा ज्यों का त्यों प्लेट में रख दिया। उनका हृदय इतने जोर-ज़ोर से धड़क रहा था जैसे वह चोरी करते पकड़े गए हों। परन्तु बेगम ने उनकी ओर ध्यान भी नहीं दिया, वे अपने छोटे-मोटे घरेलू कामों में मग्न थीं।

जब बेगम बाहर गईं तो उन्होंने झट से वह लिफाफा उठाकर अपनी कमीज़ की जेब में डाल लिया। पहले तो वे सदा ही बहुत धीमे-धीमे और मज़े ले-लेकर नाश्ता किया करते थे परन्तु अब उन्होंने जल्दी-जल्दी सब कुछ हलक के नीचे उतारा और फिर एक हाथ में डाक समेटते हुए और दूसरे हाथ में हुक्का थामे यह कहते हुए बाहर के बरामदे में निकल गए—"अच्छा बेगम ! मैं बाहर बैठता हूं। एक साहब मिलने आएंगे''' कहा तो था उन्होंने, देखिए आते हैं या नहीं'''।"

इस तरह बिना पूछे अपनी सफाई देते हुए वे बाहर बरामदे में जा बैठे। आजकल सर्दियों के कारण बरामदे का एक कोना तीन ओर से मोटे-मोटे लटके हुए टाटों से ढका हुआ था। मिट्टी की अंगीठी में कोयले दहकाकर उन तक पहुंचा दिए जाते। दफ्तर से लौटकर आध पौन घण्टा तो वे घर के अन्दर बैठते और फिर बरामदे में डेरा जमा देते। कोई न कोई मिलने वाले भी आ जाते, तो खाने के समय तक खूब गप्प उड़ती थी।

थोड़ी देर बाद लौंडिया कोयलों की अंगीठी भी रख गई और थो

उन्होंने महसूस किया कि अब वहां घर के किसी व्यक्ति के आने की आशा नहीं हो सकती। लिफाफा खोलकर पढ़ने का अभी मौका था। वे अपना हाथ कमीज की जेब तक ले गए, परन्तु लिफाफा बाहर निकालने की बजाय उन्होंने उसपर हाथ रखकर सीने से दबा लिया··· पल-भर को वे अपने आपपर मुस्करा दिए। कैसी बचकाना हरकत थी। यह जरूरी तो नहीं था कि वह पत्र किसी स्त्री की ओर से ही हो। फिर लिफाफे को छूने में उन्हें सकोच-सा हुआ। कहीं ऐसा न हो कि उस गुलाबी लिफाफे के कारण जो गुलाबी रंग उनके मन के दर्पण में भर गया था, वह लिफाफा खोलने से उड़ जाए···

कांपती हुई उंगलियों से उन्होंने धीरे-धीरे लिफाफा फाड़ा और फिर उंगलियों की चिमटी-सी बनाकर पत्र को थोड़ा-सा बाहर खींचा··· इसके साथ ही तेज सुगन्ध का एक भपका-सा उनकी नाक तक पहुंचा। कागज की तह खोलकर सबसे पहले उन्होंने पत्र के नीचे दृष्टि डाली, यह देखने के लिए कि वहां किसी पुरुष का नाम था या स्त्री का— 'नसीमा'···

अन्दर से बच्चों के लड़ने-झगड़ने और चिल्लाने की आवाजें आ रही थीं। कभी-कभी गुस्से में बेगम के बमकने की आवाज सुनाई दे जाती। कितना शान्त वातावरण था। ऐसे ही आदर्श वातावरण में वे बड़े इत्मीनान से पत्र पढ़ सकते थे। चुनांचे उन्होंने धीरे-धीरे पत्र की तहें यूं खोलीं जैसे नई-नवेली दुल्हन का घूंघट उठा रहे हों। पत्र उर्दू में लिखा था :

मुहतरम,

आदाब—आप एक अनजानी लड़की से यह चिट्ठी पाकर हैरान तो जरूर होंगे। सच पूछिए तो मुझे भी चिट्ठी लिखने में बहुत तामुल (सकोच) हो रहा था। लेकिन, आखिरकार आपको यह चिट्ठी लिखने पर मजबूर हो गई।

मैं आपकी गजलें अक्सर रिसालों में देखती रहती। मुझे वे गजलें इतनी पसन्द आती थीं कि जिस रिसाले में देखती, उसे फौरन खरीद लेती। मैंने एक फाइल भी बना रखी है जिसमें केवल आपकी गजलें काट-काटकर रख रखी हैं। कई दफा दिल चाहता था कि आपको चिट्ठी

लिखूं, फिर यह सोचकर रह जाती कि लिखूं भी तो क्या लिखूं। आखिर मैं बी० ए० में ही पढ़ती हूं। आप जैसे उस्ताद की तारीफ भी करूं तो उससे आपको क्या खुशी होगी। मैं कोई नक्काद (आलोचक) तो हूं नहीं कि मेरे तारीफ करने पर आप फख्र महसूस कर सकें।

इसी झिझक के सबब में इस चिट्ठी को टालती रही लेकिन परसों मैंने 'लालाजार' में आपकी जो गज़ल पढ़ी, तो कुछ न पूछिए कि मेरी क्या कैफियत हुई। उस गज़ल ने तो मुझे तड़पा दिया। मैंने उसे जबानी याद कर लिया है और दिन-रात शेरों को गुनगुनाती रहती हूं।

मेरी नज़र में आपका रुतबा मीर और गालिब से कम नहीं। हो सकता है कि आप मेरे इन विचारों को बचकाना समझकर टाल दें लेकिन मेरे दिल में आपका जो दर्जा है, वह बिना झिझक के मैं बता रही हूं।

चिट्ठी काफी लम्बी हो गई है, इसलिए अब मैं आपसे एक ही दरख्वास्त करती हूं कि मेहरबानी करके अपना एक फोटो जल्द से जल्द भेज दें; मैं अपने घर का पता नहीं लिख रही हूं क्योंकि आप जानते ही हैं कि घर वालों के हाथ आपकी चिट्ठी या फोटो पड़ जाए तो खामुखाह परेशानी होगी। इसलिए मैं अपने मोहल्ले के डाकखाने की मारफत फोटो मंगाना चाहती हूं। नसीमा की जगह आप नसीमअहमद लिख दीजिएगा। कुछ वक्त निकाल सकें तो फोटो के साथ अपने हाथ की चिट्ठी भी भेज दें।

आपकी,
नसीमा

पत्र पढ़ लेने के बाद लतीफ जी का दिमाग हवा में उड़ने लगा। इसी दशा में उन्होंने अपने पास आने वाले मित्रों से बातचीत की। इसी दशा में खाना खाया। इसी दशा में अपनी बेगम और बच्चों से हंसते-बोलते रहे…जब सोने का समय आया तब भी उनकी यही दशा थी। दिन-भर की थकी-हारी बेगम इधर-उधर की दो-चार बातें करके निद्रा के संसार में खो गईं, और मियां रोज की तरह दो पलंगों के बीच तिपाई

पर रखा हुआ टेबिल लैम्प जलाकर पढ़ने-लिखने के काम में जुट गए। बेगम ने लैम्प के तीव्र प्रकाश से आंखें बचाने के लिए करवट बदलकर उनकी ओर पीठ फेर दी। यह सुनहरा मौका पाकर मियां ने फिर खुशबूदार पत्र निकाला और एक बड़ी-सी पत्रिका खोलकर उसे बीच में जमा दिया। वह उस पत्र का एक-एक शब्द रस ले-लेकर पढ़ने लगे। यूं लगता था, जैसे एक-एक पंक्ति को सिजदा कर रहे हों। पत्र के कागजों में से उठने वाली सुगन्ध का नशा अलग से छा रहा था'''एकाएक उन्होंने कनखियों से अपनी बेगम के बल खाए हुए शरीर की ओर देखा, जिनके सिर में कोई-कोई चांदी का तार दिखाई देने लगी थी, परन्तु बाल अब भी शहद के छत्ते की तरह घने थे। शरीर इकहरा, रंग उजला, टखने और कलाइयां गदराई हुई। जब वह कान्वेन्ट में पढ़ती थीं, तो इन्हें उस चुलबुली लड़की से इश्क हो गया था। उन दिनों उनकी बेगम कॉलिज के ड्रामों में भाग भी लेती थीं, यूं भी उनका दिमाग बड़ा उपजाऊ था। उन्होंने अपने मियां को प्यारे-प्यारे और समझदार बच्चे दिए थे'''फिर भी न जाने क्यों अब पचास साल की उम्र में उन्हें अपनी बेगम उस मार्ग की भांति दिखाई देने लगी थीं जिसपर वे सैकड़ों बल्कि हजारों बार चल चुके थे। हंसी-मजाक में वे बेगम से यह बात कह भी देते। कोई अनाड़ी होती, तो बुरा मान जाती और घर में बवण्डर खड़ा कर देती, परन्तु पढ़ी-लिखी बेगम मुस्कराकर चुप हो रहतीं। जब बेगम ने देखा हर छः महीने या एक साल के बाद उनके मियां यही बात दोहरा देते हैं तो उन्होंने उत्तर देते हुए कहा—"जिस मार्ग पर हम रोज़ चलने के आदी हो जाते हैं, उसके गुणों की ओर हमारा ध्यान ही नहीं जाता। उस रास्ते के दायें-बायें फैले हुए दृश्यों की सुन्दरता से आनन्द लेना ही भूल जाते हैं।"

बेगम का यह उत्तर सुनकर मियां चुप रह गए, और इसके बाद सदा चुप ही रहे।

इसी प्रकार की बातें सोचते-सोचते मियां फिर मसीमा के पत्र की ओर लौट आए। पत्र में कई ऐसी बातें थीं जिनपर ज़रूरी सोच-विचार की जा सकती थी। जैसे मसीमा को पत्र का उत्तर देना, इस [illegible]

खिचवाकर भिजवाना, या भविष्य में उस खिलती हुई कली से मुलाकातें करना···आखिर एक सोलह-सत्रह वर्ष की लड़की एक पचास वर्ष के पुरुष में क्या दिलचस्पी ले सकती है। न जाने वह किस धोखे में यह पत्र लिख बैठी है। परन्तु जब वह उन्हें एक नज़र देख लेगी तो उसका यह आकाश को चूमता हुआ रंगमहल धड़ाम से नीचे आ गिरेगा···बिल्कुल उनके सिर पर···उन्होंने निचला होंठ दांतों से काटते हुए मन ही मन कहा कि न जाने आज से अट्ठारह-बीस वर्ष पहले नसीमा ने उन्हें पत्र क्यों न लिखा—इसका कारण तो बिल्कुल सीधा था···उस समय तक तो नसीमा ने इस संसार में जन्म ही नहीं लिया होगा।

एकाएक उन्होंने झुरझुरी-सी लेकर अपने आपको उभारा और मन को तसल्ली देने लगे कि अभी से नसीमा से मिलने की ज़रूरत ही क्या है। सबसे पहले तो पत्र लिखना होगा, फिर फोटो भिजवाई जा सकती है। आजकल के फोटोग्राफर शक्ल संवारने में ऐसे उस्ताद हैं कि भौंडे-भौंडे पुरुष को यूं संवार दें कि वह किसी फिल्म का नायक दिखाई देने लगे।···खैर, वह भी बाद की बात थी, सबसे पहले तो इस प्यारे से पत्र का प्यारा-सा उत्तर देना चाहिए।

मन ही मन में उन्होंने कई प्रकार के पत्र सोच डाले पर जंचा एक भी नहीं। इसी दुविधा में रात व्यतीत होने लगी। आखिर उन्होंने यही तय किया कि एक बार तो जो मन में आए सो ही पत्र में लिख देना चाहिए। यह कोई आवश्यक तो नहीं कि जो पत्र इस समय लिखा जाए, उसीको भेज दिया जाए। एक बार पत्र बन जाए, तो फिर उसमें हर प्रकार की कांट-छांट हो सकती है। अब वह बड़ी दृढ़ता से पत्र लिखने बैठ गए।

प्यारी नसीमा,

आदाब !

आपकी चिट्ठी का बहुत-बहुत शुक्रिया। आपको तो मालूम ही होगा कि नसीम हवा के झोंके को कहते हैं। आपका पत्र हवा के उसी झोंके की तरह है, जिसमें फूलों की खुशबू और सुबह की ठंडक मिली हुई है। हवा का यह झोंका इस कदर अचानक आया कि मैं इसकी महक से लड़-

बस गया।

आपने लिखा है कि आपकी तारीफ से भला मुझे क्या खुशी हो सकती है···आपका यह विचार ठीक नहीं है। हर फनकार को सदा इस बात से खुशी होती है कि इस दुनिया में उसे चाहने वाला···मेरा मतलब है, उसके फन को पसन्द करने वाला भी है। बेशक एक अच्छी सूझ-बूझ रखने वाला झूठी तारीफ से खुश नहीं हो सकता, क्योंकि झूठी तारीफ को वह घटिया खुशामद समझता है। परन्तु आपके पत्र में कोई ऐसी बात नहीं है, यूँ लगता है कि आपके लिखे हुए शब्द आपके दिल की गहराइयों से निकले हैं—जो बात दिल से निकलती है, असर रखती है।

मैं आपको बुद्धू भी नहीं समझ सकता, क्योंकि जब आप मेरा कलाम समझ सकती हैं, तो इससे पता चलता है कि आपने उर्दू शायरी का गहरा अध्ययन किया है इसीलिए आपकी तारीफ से मैं फूला नहीं समाता।

रही फोटो भिजवाने की बात···तो फोटो खिंचवाने में कुछ दिन तो लगेंगे, परन्तु मुझे उम्मीद है कि उससे पहले ही आप मेरी चिट्ठी का जवाब जरूर देंगी।

आपका,
लतीफ

यह पत्र लिखकर श्री लतीफ ने गहरी सांस ली। उन्होंने महसूस किया कि इस पत्र में कुछ शब्द काटने पड़ेंगे और कुछ बदलने पड़ेंगे। पहले ही पत्र में 'प्यारी नसीमा' लिखना उचित नहीं था, इसकी बजाय "डियर नसीमा" लिख देने में भी कोई हर्ज नहीं था।···खैर, यह तो अब पता है रहेगा। उन्होंने इस चिट्ठी वाली पत्रिका को दूसरी पत्रिकाओं के ढेर में दबा दिया और फिर खुद उठकर बड़े शीशे के सामने जा खड़े हुए और अपने चेहरे को फोटोग्राफर की दृष्टि से देखने लगे।

दूसरे रोज सुबह उठकर उन्होंने पत्र को काट-छाटकर ठीक किया, परन्तु भेजा फिर भी नहीं। उन्हें एक पुराने घाघ ने बातों ही बातों में इस बात की शिक्षा दी थी कि अपनी प्रेमिका को भी कभी प्रेमपत्र नहीं लिखना चाहिए क्योंकि बाद में किसी अवसर पर वह पत्र गैर के हाथ में पड़ जाए तो प्रेमी के लिए बहुत बड़ी परेशानी हो सकती है। लतीफ ने

मन में सोचा कि मैं तो उस लड़की का प्रेमी भी बनने के लायक नहीं क्योंकि मैं एक बेगम का शौहर और आधे दर्जन से कुछ कम बच्चों का बाप हूं''' कल को यह पत्र किसीके हाथ लग जाए तो दुनिया केवल यही कहेगी कि लड़की तो कम उम्र थी, नादान थी,

उन्होंने सोचा कि अगले दो-चार दिनों के अन्दर किसी ऐसे फोटोग्राफर की तलाश की जाए, जो उन्हें फोटो में तीस पैंतीस वर्ष की आयु का दिखा सके। यह भी बड़ी टेढ़ी खीर थी। उन्होंने बाज़ार में घूम-फिर कर कई फोटोग्राफरों को आंखों ही आंखों में जांचा-तौला।

आखिर उनको एक ऐसा ही फोटोग्राफर मिल गया। जब वे उसकी दूकान में पहुंचे तो वहां कुछ और लोग भी थे। इन भद्र पुरुष को देख कर फोटोग्राफर ने ज़रा जल्दी ही इनकी ओर ध्यान देते हुए पूछा—"कहिए साहब, मैं आपकी क्या सेवा कर सकता हूं?"

श्री लतीफ को उसके बोलने का ढंग पसन्द आया। पहले तो वे बतलाने लगे कि उन्हें अपना फोटो खिचवाना है, फिर सोचकर इरादा बदलते हुए बोले—"आप पहले अपने दूसरे ग्राहकों से फ़ुर्सत पा लीजिए, मुझे कोई जल्दी नहीं''' मैं आपकी दुकान में लगी हुई तस्वीरों को देखता हूं।"

फोटोग्राफर ने दूर दृष्टि से काम लेकर उनसे कोई और बात नहीं कही, और वह अपने दूसरे ग्राहकों का भुगतान करने लगा।

जब और सब ग्राहक चले गए तो फोटोग्राफर ने उनके पीछे से आकर कहा—"लीजिए, अब मुझे तो फ़ुर्सत हो गई।"

श्री लतीफ ने झिझकते हुए पूछा—"मुझे कुछ पेशगी देना होगा?"

"जी—वह तो बाद में होता रहेगा। पहले आप स्टूडियो में चलिए।"

स्टूडियो में पहुंचकर फोटोग्राफर ने पुराने प्रकार के बक्सनुमा कैमरे को स्टैण्ड पर टिकाया और फिर स्टैण्ड की टांगें आगे-पीछे करते हुए बोला—"आप उधर कोने में लगे हुए आइने में अपने कपड़े और बाल-बाल ठीक कर लीजिए। शीशे के आगे एक कंघी भी रखी है, ज़रूरत हो तो उसका प्रयोग भी कर सकते हैं।"

श्री लतीफ जान छुड़ाकर कद्दे आदम शीशे के सामने पहुँचे। वे मन ही मन फोटोग्राफर के आभारी थे कि उसने उन्हें सभलने का अवसर दिया।

शीशे में अपनी शक्ल देखी तो यूं लगा, जैसे कोई कैदी कैद से भाग कर आया हो। उन्होंने मन ही मन कहा—लाहौल विला कूवत'''यह मेरी क्या शक्ल बनी हुई है। नसीमा ने इस सूरत का फोटो देख लिया तो यही कहेगी कि बस दुम की कसर है।

शीशे के पास फूलदान में फूलों का एक गुलदस्ता पड़ा था। उन्होंने फूलदान के पानी में अपना रूमाल गीला करके निचोड़ा और उससे अपने चेहरे को रगड़-रगड़ कर पोंछा और फिर पल-भर के लिए मुस्काने की कोशिश की'''इस जबरदस्ती की मुस्कराहट से उनका चेहरा और भोंडा हो गया। वे फोटोग्राफर से कहना चाहते थे कि वे आज नहीं कल फोटो खिंचवाएंगे परन्तु इतने में ही फोटोग्राफर की आवाज सुनाई दी—आइए साहब, कैमरा तैयार है।"

इतना सुनकर लतीफ साहब ने जल्दी से कंघी हाथ में उठाई और बालों को समतल करने लगे। फिर नेक्टाई की गिरह ठीक करने लगे। उस समय उन्होंने देखा कि उस गिरह को टटोलती हुई उनकी उंगलियां कांप रही थीं।

कुर्सी पर बैठते ही उन्हें यह विचार सताने लगा कि कहीं उनकी फोटो में उनके चेहरे की गहरी होती हुई रेखाएं उसी तरह दिखाई देने लगीं जैसे कि शीशे में दिखाई दे रही थीं, तो उनके भविष्य का सर्वनाश हो जाएगा।

एकाएक ही श्री लतीफ घबराकर उठ खड़े हुए। फोटोग्राफर ने काली गुफा में से एकदम सिर बाहर निकालकर कहा—"अरे, आप खड़े क्यों हो गए?"

लतीफ साहब अपनी झेंप छिपाने की कोशिश करते हुए बोले—"देखिए बात यह है कि आप मेरा फोटो ऐसे खींचें कि चेहरा'''मेरा मतलब है, ऐसा दिखाई न दे जैसा कि दिखाई दे रहा है'''"

फोटोग्राफर पल भर को चकित रह गया फिर पास आकर उनके

कन्धे पर हाथ रख दिया और उन्हें नीचे को दवाकर कुर्सी पर विठाते हुए वड़ी गम्भीरता से वोला—"ओह ! उसकी फिक्र न कीजिए। आपके चेहरे से कम से कम वीस वर्ष उड़ा दूंगा।"

जब फोटो तैयार हो गई और श्री लतीफ ने उसपर एक दृष्टि डाली तो उन्हें फोटोग्राफर से घृणा-सी हो गई—कारण यह कि वह अपनी कला में उस्ताद निकला। उसने उनके चेहरे में ऐसा रूप भर दिया कि लगता था, जैसे वह अभी-अभी युनिवर्सिटी से पढ़ाई समाप्त करके आ रहे हों।

फोटोग्राफर ने अपनी आंखों पर मोटा-सा चश्मा चढ़ाया और गंजे सिर को हलके-हलके नीचे-ऊपर हिलाते हुए वोला—"कहिए, तस्वीर पसन्द आई !"

श्री लतीफ झेंप गए।

फोटो घर में ले गए और उसे कितनी-कितनी देर तक नसीमा की दृष्टि से देखते रहे···उस फोटोग्राफर के वच्चे ने उनकी सूरत को इतना सुधार कर उन्हें सबसे वड़ी हानि तो यही पहुंचाई थी कि अब उन्हें नसीमा के सामने जाने में संकोच होने लगेगा, क्योंकि इस फोटो को देख लेने के वाद जब नसीमा उन्हें देखेगी, तो उसके मन की क्या दशा होगी क्यों न नसीमा को फोटो के साथ एक पत्र में यह भी लिख दिया जाए कि नया फोटो खिचवाने की फुर्सत नहीं मिली इसलिए कुछ पहले की खिची हुई फोटो भेज रहा हूं।

अपने घाघपने पर उन्हें वड़ी खुशी हुई और उन्होंने खुद ही अपनी पीठ थपथपाई और फोटो भेज दी।

फोटो देखने के वाद नसीमा की जो चिट्ठी आई, उसे पढ़कर उनके पांव के नीचे से धरती खिसक गई। नसीमा ने लिखा था कि उनकी शक्ल की जैसी कल्पना की थी, फोटो में भी वैसी ही निकली। उन्होंने मन ही मन चीख कर कहा—या खुदा ! अब मैं नसीमा को अपना मुंह कैसे दिखा सकूंगा। कहीं वह मन में यह न सोचे कि वुलाया था लतीफ साहब को परन्तु चले आए उनके अब्बाजान।'

पत्र व्यवहार चलता रहा। श्री लतीफ पत्रों की सुगन्ध सूंघ-सूंघकर

अंगड़ाइयां तोड़ते रहे···धीरे-धीरे नसीमा ने मिलने की इच्छा प्रकट की। इस विचार से ही उनका हृदय ज़ोर-ज़ोर से धड़कने लगा। परन्तु वे नसीमा के सामने जाकर अपने सपनों की दुनिया में आग नहीं लगाना चाहते थे, इसलिए इधर उधर के बहाने करके टालते रहे। मगर कहां तक।

इस तरह जब कि प्रेम के इस गोरखधन्धे में उनकी जान इस बुरी तरह से फंसी थी, तो एक सज्जन से उन्हें ऐसी ही सहायता मिली जैसे द्रौपदी को चीरहरण के समय भगवान् कृष्ण से मिली थी।

वे सज्जन न लतीफ साहब के रिश्तेदार थे, न मित्र, न किसी और तरह से परिचित थे···उन्होंने तो रेस्टोरेण्ट में बैठे-बैठे पास की मेज़ से दो मित्रों को बातें करते सुन लिया था। उस समय श्री लतीफ कड़क चाय की कड़वाहट में अपने दुःखों को भुलाने की कोशिश कर रहे थे कि पास वाली मेज़ से एक सज्जन ने अपने मित्र को किसी विषय पर लम्बा भाषण देते हुए कहा—"अरे भाई, वे तो केवल स्कूलों और कालेजों की लड़कियां होती हैं, जिनके सपनों में नायक बसे होते हैं, वरना ज़रा-सी सूझ-बूझ रखने वाली लड़कियां केवल शक्ल और चमक दमक पर ही नहीं जातीं, वे तो पुरुष के मन की गहराइयों में उतरने की शक्ति रखती हैं। यह पुरुष ही इतना बेवकूफ होता है, जो केवल सूरत पर दीवाना होकर चरित्र को परखे बिना अपने गले में मुसीबत बांध लेता है और जीवन भर अपने भाग्य को कोसता रहता है···भगवान् ने स्त्री को पुरुष से अधिक बुद्धि दी है।"

यह भाषण न जाने कब तक चालू रहा परन्तु श्री लतीफ तो इतने भर सुनकर ही गद्गद हो उठे। निराशा की अंधेरी रात में उन्हें अपना मार्ग बिल्कुल उज्ज्वल-सा दिखाई देने लगा, इसलिए उन्होंने फौरन ही नसीमा को लिखा कि वे मुलाकात करने को तैयार हैं। मिलने के समय और स्थान का निश्चय करना उसका काम है।

नसीमा ने मुलाकात का स्थान शहर के बाहर एक पार्क में, और समय दिन ढले निश्चित किया। जिस रोज़ लतीफ मियां को वहां जाना था, उस रोज़ वे खूब बने ठने। रूप की कमी तो रह गई थी। उन्होंने

सोचा कि रास्ते में किसी दुकान से इत्र की कोई नन्ही-सी शीशी खरीद कर अपने कानों के पीछे और रूमाल आदि पर लगा लूंगा। बेगम ने काम करते-करते एकाएक उनकी ओर टकटकी बांधकर देखते हुए कहा—"आज तो बड़े छैला बने हैं आप !"

इतने खुशबूदार पत्र आ चुके थे परन्तु बेगम के मन में कोई सन्देह नहीं उत्पन्न हुआ, जिससे मियां का साहस बढ़ गया, चुनांचे बोले—"आजकल जिन्दगी के खुशबूदार मोड़ पर पहुंचा हुआ हूं।"

चलते-चलते लतीफ जी ने कहा—"बेगम, मैंने मज़ाक में बात कह दी, तुम कुछ और न समझ बैठना—मैं तो दफ्तर की एक मीटिंग में जा रहा हूं।"

श्री लतीफ ने बाज़ार से गुज़रते समय दो-चार दुकानों पर पूछताछ करने के बाद मन पसन्द इत्र की एक शीशी खरीदी, और फिर चलते रिक्शा में लोगों की आंख बचाकर इत्र को जहां जहां चाहते थे, लगाया। पार्क के निकट पहुंचे तो जेब में से छोटा-सा एक दर्पण निकाला, उसमें चेहरा देखते हुए एक जेबी कंघी से बाल ठीक किए और सोचने लगे कि शेव करने और पाउडर का प्रयोग के बाद अच्छा-सा सूट पहनकर तो ऐसा बुरा तो नहीं लगता।

नसीमा के बताए हुए मौलसरी के पेड़ के नीचे बिछी हुई बेंच पर जाकर बैठ गए। नसीमा तो अभी नहीं आई थी, परन्तु इसमें निराशा की भी कोई बात नहीं थी क्योंकि वे स्वयं निश्चित समय से पहले ही पहुंच गए थे। वे तो यह भी सोचे हुए थे कि शायद नसीमा को आने में देर लग जाए। किसी भी लड़की का दिन ढले घर से निकलना आसान तो नहीं था। न जाने बेचारी को क्या बहाना गढ़ना पड़े।

जब निश्चित समय भी गुजर गया तो श्री लतीफ बेचैन होकर दायें-बायें पहलू बदलने लगे। चारों ओर नजरें दौड़ा रहे थे कि न जाने किस दिशा से उनकी तकदीर का सितारा चमक उठे···पल बीतते गए···। लतीफ साहब के मन पर निराशा की घटाएं छाने लगीं। इतने में पार्क की एक साफ-सुथरी सड़क पर एक बुर्के वाली आती दिखाई दी। लतीफ जी का हृदय उछलकर गले में आन अटका। फिर उन्होंने मन ही मन

अपने को कोसा कि सम्भव है वह बुर्के वाली नसीमा न हो, अभी से इतने बेचैन होने से फायदा क्या…

परन्तु वह बुर्के वाली कुछ और आगे बढ़कर पल भर ठिठकी…और फिर सीधी उनकी ओर बढ़ने लगी।

लतीफ जी ने आगे-पीछे, दायें-बायें दृष्टि डाल कर देखा। खतरे की कोई बात दिखाई नहीं दी। युवक तो अपना समय रेस्टोरेण्टों, सिनेमा आदि में व्यतीत करना पसन्द करते हैं। पार्क में तो कुछ बूढ़े खूसट, कुन्हों पर हाथ धरे खरखराती खांसी खांसते हुए लड़खड़ाते कदमों से घूम-फिर रहे थे, वे भी बहुत दूर-दूर।

इतने में नसीमा उनकी बेंच के निकट पहुंच गई। उसने आते ही बुर्के में से दो-चार उंगलियां निकालकर और सिर को थोड़ा-सा झुका कर फुसफुसाते स्वर में कहा—"आदाब अर्ज…लतीफ साहब!"

लतीफ साहब हड़बड़ाकर उठ खड़े हुए और बेंच के एक कोने की ओर पहुंचकर बोले—"आदाब अर्ज़!"

वे दोनों बेंच के दोनों सिरों पर खड़े थे, एक इधर और दूसरा उधर; थोड़ी देर तक वे ज्यों के त्यों खड़े रहे जैसे कुछ भी न सूझ रहा हो…आखिर लतीफ साहब बोले—"तशरीफ रखिये।"

"पहले आप।" धीमी और फुसफुसी आवाज सुनाई दी।

"जी नहीं, लेडीज़ फर्स्ट…," लतीफ जी ने खूब झुककर कहा।

नसीमा बुर्का समेटकर बैठ गई, और लतीफ साहब भी पतलून की क्रीज़ चुटकी से दबाकर और सम्भलकर बैठ गए।

उन्हें इस बात की बड़ी खुशी हो रही थी कि उनको पहचानने में नसीमा को कोई कठिनाई नहीं हुई। जिसका अर्थ यह था कि उनके फोटो और स्वयं उनमें कोई अधिक अन्तर नहीं था। इस अवसर पर उन्होंने पहले की सोची हुई बात भी कह ही दी—"आपने मुझे पहचान लिया…मैं डर रहा था कि कहीं आपको मुझे पहचानने में दिक्कत न हो, क्योंकि जो फोटो मैंने आपको भेजी थी वह…"

नसीमा के दर्शन नहीं हुए। सोचा जाए तो उसकी आवाज भी सुनने को नहीं मिली। वह बहुत धीरे-धीरे बोलती रही। बिल्कुल फुसफुस

कर। वह शायद घबराई हुई थी, फिर चूंकि चेहरे से नकाब उठी नहीं थी इसलिए यह बात निश्चय तो कही नहीं जा सकती थी कि वह घबराहट में थी या नहीं। रही सूरत की बात, जिस लड़की को बोलने में इतना संकोच था, भला वह सूरत कैसे दिखाती। मुसलमान घरानों में जहां लड़कियां नौ-दस वर्ष की हुई, वहीं उनकी टोका टाकी आरम्भ हो जाती है। वहां न जाओ, इधर मत बैठो, उधर मत झांको। जवान होने तक लड़कियां इतनी सहम जाती थीं कि ज़रा-सी आवाज़ सुन कर चौंक पड़तीं। बुर्के सहित भी कोई मर्द देख ले तो उन्हें लगता है जैसे मर्द की आंखें उनके शरीर के आर-पार देख रही हों—ऐसे ही किसी घराने की लड़की होगी नसीमा। पहली मुलाकात में सूरत नहीं दिखाई तो न सही। जब मन ही डांवांडोल हो गया तो सूरत कब तक छिपी रह सकेगी।···हां, लतीफ जी ने बातचीत का खूब लम्बा-चौड़ा प्रोग्राम बना रखा था। कोमल शब्दों के कैसे-कैसे साहित्यिक वाक्य उन्होंने पहले से ही गढ़ रखे थे, परन्तु उन्हें कहने का अवसर ही नहीं मिला। कोई बात नहीं, नसीमा अपने प्रिय शायर से कब तक खुलकर बात नहीं करेगी। न जाने उसके मन में भी अपने प्रिय शायर से कैसे-कैसे प्रश्न के अरमान होंगे। आखिर पहली मुलाकात थी, घबराहट स्वाभाविक ही थी। यह क्या कम था कि कुंवारी लड़की सबकी नज़र बचाकर घर से निकल आई और अपने प्रिय शायर के दर्शन किये बिना न रह सकी।

कुछ दिनों बाद जब वे आपस में घुल-मिल जाएंगे तो अपनी इस पहली मुलाकात की कल्पना से ही कहकहे लगने लगेंगे।

वह कहेगा—आपने नकाब नहीं उठाई तो मैंने भी आपसे कुछ नहीं कहा।

"क्यों ?···क्या आपको डर था कि कहीं मेरी सूरत खराब न हो !"

"नहीं···ऐसा तो मैं सोच भी नहीं सकता था। ऐसे हसीन बयानों वाली लड़की बदसूरत कैसे हो सकती थी।···"

लतीफ जी अपना हाथ बढ़ाकर उसका नर्म, गोल मटोल और [illegible] अपने हाथ में ले लेते हैं। नसीमा चुप है, परन्तु उसका मुं[illegible] [illegible]-ना है, आंखें फैल गई हैं। उसे धीमी, गहरी और मधुर मर्दाना

आवाज सुनाई देती है—'नसीमा ! तुम जानती हो कि मैं तुमको कितना···?"

हां, हां, वह जानती थी, अच्छी तरह जानती थी···तभी तो वह फूलों की कोमल शाखा की तरह जरा-सा लचककर पीछे हटती है और फिर आगे को इस अन्दाज से झुकती है कि लतीफ जी के होंठ उसके घने बालों की घटाओं में अपना मार्ग भूल जाते हैं··

कहते हैं कि हम दुःख से इतना नहीं घबराते जितना दुःख की कल्पना से। परन्तु ऐसा भी होता है कि कल्पना बड़ी रंगीन और प्रसन्नतापूर्ण होती है और असलियत बड़ी कठोर और दुःखदायी होती है। लतीफ जी का यह विचार कि बाद की मुलाकातें पहली मुलाकात से कहीं अधिक न केवल लम्बी होंगी, बल्कि वह उस गुलाब के फूल के से चेहरे को देख भी पाएंगे, उस मुख से निकलते हुए संगीतमय शब्द भी सुन सकेंगे, परन्तु वास्तव में ऐसा नहीं हो पाया। बाद में तीन मुलाकातें··· छोटी-छोटी, सहमी-सहमी, उखड़ी-उखड़ी-सी हुईं। नसीमा का स्वर फुसफुसाहट से ऊपर नहीं उठा। कोई देख न ले, इस डर से चेहरे की झलक नहीं दिखाई। अन्तिम मुलाकात में वह फुसफुसाई—"यूं नहीं हो सकता कि···।"

"कि ?"

"कि हम ऐसी जगह मिल सकें जहां···?"

"जहां ?···" लतीफ जी का हृदय ज़ोर-ज़ोर से धड़क रहा था।

फिर फुसफुसाहट—"जहां किसीके ऊपर से आ जाने का डर न हो।"

वहां मैं नसीमा का चेहरा भी देख सकूंगा और उसकी आवाज भी सुन सकूंगा—लतीफ जी ने अपने मन में सोचा। वहां तो नसीमा किसी बात से इन्कार नहीं करेगी। इन्कार ही करना होता, तो वह ऐसा सुझाव ही क्यों देती।

होटल का कमरा ? नहीं। किसी कुंवारे दोस्त का घर ! नहीं : वहां ? अपना घर कैसा रहेगा ?

नसीमा को यह सुझाव पसन्द आया। ऐसा हो सकता था कि बेगम

और बच्चे किसी छुट्टी के दिन किसी रिश्तेदार के यहां चले जाएं, तो फिर इनके लिए मैदान साफ़ हो सकता था। और ऐसा होना असम्भव भी नहीं था, बल्कि सोचा जाए तो काफ़ी सरल था।

यही तय पाया कि जिस दिन भी ऐसा प्रबन्ध हो सके, उससे पहले नसीमा को सूचना मिल जाये। वह किसी सहेली के घर जाने का बहाना करके यहीं पार्क में उनसे मिलें और वे दोनों इकट्ठे उनके घर जाएं। सारा दिन एक-दूसरे को देखते रहें, फ़ुर्सत मिले तो खाना भी खाएं, चाय भी पिएं।

वह दिन भी आ गया•• या लाया गया। यह कोई बड़ी समस्या नहीं थी। शहर में कोई रिश्तेदार थे, जो बेग़म को बच्चों सहित आने के लिए कहते रहते थे। कुछ लतीफ जी ने हल्का-सा ज़ोर लगाया और एक इतवार को बेग़म ने खाना खाने के बाद बच्चों सहित जाने का प्रोग्राम बनाया, जिसका मतलब था कि वे रात का खाना खाकर ही लौट सकेंगे।

नसीमा को पत्र द्वारा इस बात की सूचना कर दी गई। बेग़म के जाने के बाद लतीफ जी ने कुर्सियों की धूल झाड़ी, अपने कमरे में फैली हुई पत्रिकाओं को जोड़कर रखा। अपनी मोटी सी बयास (वह नोट बुक, जिसमें उनके हाथ की लिखी हुई कविताएं थीं।) ऐसी जगह रख दी जहां से ढूंढ़ने में कोई परेशानी न हो। जाते-जाते उन्होंने कमरों में एक अंतिम दृष्टि डाली, ताकि कोई कमी रह गई हो तो उसे दूर कर दें। नसीमा के पास पहुंचने से पहले वह बाजार से नाश्ते के लिए कुछ मिठाई, केक, पेस्ट्री और नान खटाइयां ले आए। फिर खूब बन ठन कर वे नसीमा को लेने पार्क में पहुंचे।

हृदय धड़क रहा था कि कहीं ऐसा न हो कि नसीमा आ ही न पाये—परन्तु जब वहां पहुंचे तो दूर ही से नसीमा को खड़ी देखकर वे इस तरह चौंके जैसे कोई अनहोनी चीज देख ली हो। उन्होंने समझा था कि उन्हें सदा की तरह नसीमा की प्रतीक्षा करनी पड़ेगी, परन्तु लगता था कि वह भोली-भाली लड़की आज की मुलाकात के लिए उनसे भी अधिक उत्सुक हो रही थी।

निकट पहुंचकर लतीफ जी ने लम्बी-चौड़ी बात करना बेकार समझा, छूटते ही बोले—"दिन का वक्त है, यहा रुकना ठीक नही होगा। मैंने दो रिक्शों का प्रबन्ध किया है। एक मे मैं बैठ जाऊगा, दूसरे मे आप। आप मेरे पीछे-पीछे आइएगा। हमारे मकान के पिछवाड़े गली मे एक दरवाज़ा है। आप रिक्शा वही रोक लीजिएगा, जब मैं पिछवाड़े का दरवाज़ा खोलू, तो आप रिक्शा को दरवाज़े तक लाकर एकदम अन्दर घुस आइयेगा। रिक्शे वाले को किराया मैं खुद दे दूगा।"

घबराये हुए स्वर मे वे ये बातें कह चुके तो नसीमा ने सिर हिला दिया कि उनका अर्थ समझ गई।

जिस तरह तय किया था, उसी तरह वे दोनो आगे-पीछे मकान पर पहुंचे। रिक्शे रोक दिए गए, लतीफ जी ने अपने रिक्शे वाले को पैसे देकर विदा किया और नसीमा को इशारे से मकान का पिछला दरवाज़ा दिखा दिया।

और जब वे नसीमा को लेकर अपने कमरे मे पहुच गए तो बड़ी उत्सुकता से उनके मुह से पहली बात यही निकली—"अब तो मैं आपके चेहरे से नकाब हटा सकता हू ?"

नसीमा ने सिर हिला दिया।

लतीफ जी ने कांपती हुई उगलियो से नकाब उलट दी—बादल हट गया…

बेदम !

[illegible]

[illegible]

मुलाकातें हुई। मुलाकातें करने वाली खुद तुम थीं। तभी न सूरत दिखाई, न ज़ोर से बोलीं—यह मज़ाक था परन्तु कितना कठोर······ कितना भयानक !

बेगम, जो अपने शौहर को इतने बच्चे दे चुकी थी, जो कभी उनकी आंख की पुतली थी, जिसके सामने वे अक्सर जीवन के खुशबूदार मोड़ का ज़िक्र किया करते थे—वे इस बात की उम्मीद कैसे रखतीं कि ज़िन्दगी का साथी होते हुए भी वह उस खुशबूदार मोड़ को बिना बेगम के ही तय कर लेंगे !···क्या इसीलिए उसने अपनी जवानी, अपना सौन्दर्य···बल्कि सब कुछ उनपर···केवल उनपर निछावर कर दिया था !

इस कठोर वातावरण में वे यूं महसूस कर रहे थे, जैसे वे मनुष्य न होकर जंगली जानवर हैं, जो अंधेरे जंगल में घनी झाड़ियों की ओट लेकर एक दूसरे पर झपट्टा मारकर, एक दूसरे की जान ले लेना चाहते हों।

बच्चे अलग कमरे में सो रहे थे और उनके सपनों में रंगीन परियां नृत्य कर रही थीं।

कहना शुरू किया—"उस समय मैं बेकार था। रोजगार की कोई सूरत नज़र नहीं आती थी। भई, कभी-कभी तो भाग्य को मानना ही पड़ता है। कई ऐसे लोगों से जान-पहचान थी, जो मेरी मदद कर सकते थे, परन्तु उनसे कुछ कहते हुए भी शर्म-सी महसूस होती थी। और एक-आध दोस्त, जिनसे कोई पर्दा नहीं था, कोशिश में लगे हुए थे। उन्हीं दिनों एक शाम एक पुराने क्लासफेलो से मुलाकात हो गई···यह खुद एक दिलचस्प घटना है।"

यहां तक पहुंचकर देवराज फिर रुक गया और सिगरेट का लम्बा कश लेकर सीटी बजाने के अन्दाज़ से उसने होंठों को गोल किया और धुएं के गोल-गोल चक्कर बनाकर छोड़ने शुरू किए।

धुआं निकलता रहा, वह अपने ध्यान में और हम अपनी कुर्सियों में मग्न।

बात फिर शुरू हुई—मैं एक रेस्तरां में बैठा था।···रेस्तरां का नाम जानकर क्या करेंगे आप?···दूर कोने में मैंने एक अत्यन्त सुन्दर युवती को देखा। सुन्दरता को देखना कोई जुर्म तो नहीं, परन्तु लगातार देखते रहना निश्चय ही बुरी बात है।···हुआ यह कि मैं अपनी उलझनों में घिरा हुआ था, यानी मेरी नज़रें उस युवती की ओर थीं और दिमाग अपनी ही फिक्र में डूबा हुआ था।···उस युवती को यूं लगा, जैसे मैं उसे लगातार घूरे जा रहा हूं। यह बात उसने अपने पति से कही और वह उठकर मेरी ओर आया और पास पहुंचकर उसने मेरे कंधे पर हाथ रख दिया। मैंने घूमकर देखा, तो एक गुस्से से भरा चेहरा अपने सामने पाया, जो नाक के मासे के कारण और भी भयानक दिखाई दे रहा था। मैं कुछ न समझ सका। बोला—'पधारिए।' और यह कहने के साथ ही मैंने उसे पहचान लिया। हम कई वर्षों के बाद मिले थे। वह मुझे अपनी बगल में लिए अपनी बीवी के पास पहुंचा और कहकहा लगाकर बोला, 'भई, यह अपना देवराज है। लो, बैठो, यार! यह तुम्हारी भावज है। देखना है तो करीब से देखो, अच्छी तरह!' इस पर मैं शर्माया। उसकी बीवी सिर्फ सुन्दर और पढ़ी-लिखी ही नहीं थी, बल्कि वास्तव में सुघड़ युवती थी। मैंने क्षमा मांगते हुए कहा, 'इसमें

कोई संदेह नहीं कि हमारी भाभी देखने लायक है, परन्तु यकीन कीजिए कि मैं अपनी उलझनों में घिरा हुआ था। यह अलग बात है कि मेरा चेहरा आपकी ओर था'...मेरा दोस्त हसते हुए बोला, 'भई मैं यकीन करता हूं।' फिर अपनी बीवी से बोला, 'अरे, हम कालेज में साथ-साथ ही तो पढ़ते थे। बेचारे देवराज ने कभी कोई ऐसी हरकत नहीं की, क्योंकि शर्माने के मामले में यह लड़कियों से भी बढ़ कर था।' इसपर खूब कहकहे उड़े।"

वह फिर चुप हो गया। हम इस दिलचस्प घटना पर कहकहे लगाते रहे और देवराज को धुआं उड़ाने के लिए आजाद छोड़ दिया।

"...कुछ दिनों बाद फिर उसी दोस्त से मुलाकात हुई और मुझे पता चला कि वह सी० आई० डी० के ऐण्टीकरप्शन महकमे में मुलाजिम है।" देवराज ने फिर अपना किस्सा शुरू कर दिया—"हम दोनों ही एक रेस्तरां में बैठे थे और दो-दो मग बीयर के पी लेने के बाद मेरे दोस्त ने मेरी बेकारी के बारे में पूछताछ शुरू की। मैं हिचकिचा रहा था, लेकिन उसके ज़ोर देने पर सारा हाल बताना पड़ा। वह कुछ देर चुप रहा और फिर कहा, 'यार, तुम्हें एक तरकीब बताता हू, लेकिन शर्त यह है कि खामुखाह शराफत से काम न लेना।' मैंने यह शर्त मंजूर कर ली। वह बोला, देखो, जहां तुम रहते हो, वहीं पर सेठ धनीराम की कोठी है। तुमने उनकी काली-कुजग सूरत अक्सर देखी होगी। हमारे महकमे को खास जरिये से मालूम हुआ है कि सेठजी कई तरह के गुप्त व्यापार करते हैं और इन धन्धों में उन्होंने लाखों रुपया पैदा किया है। अब अगर तुम ज़रा हिम्मत से काम लो, तो आम के आम गुठलियों के दाम हासिल कर सकते हो।' मुझे बड़ी हैरानी हुई, पूछा कि आखिर मैं क्या कर सकता हू?' उसने कहा, 'दोस्त, तुम भी एक बार वैसा ही कुछ कर डालो।' 'वह कैसे?' 'यह मैं बताता हू।...सेठजी इतना तो जानते हैं कि तुम उन्हीके मुहल्ले के बाल-बच्चेदार भले आदमी हो। तुम एक रोज़ उनके पास जाओ कि तुम उनकी मदद से कोई रोज़गार शुरू करना चाहते हो। कह देना कि दस-पांच हजार रुपया है और अगर फायदे की सूरत नज़र आई तो इतना ही रुपया तुम और इकट्ठा कर सकते हो।...

जेल में जाएगा।'
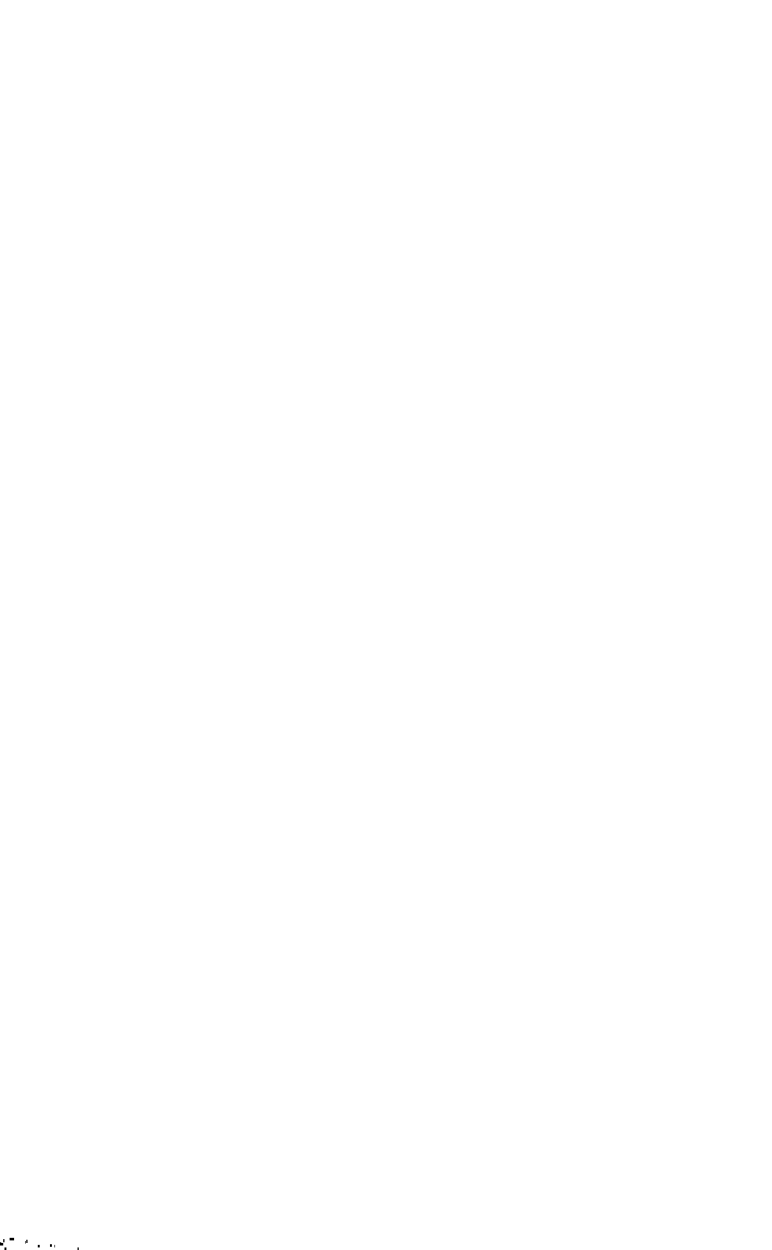
"'माफ करो, दोस्त, मुझसे यह न हो सकेगा।'

"'इसपर मेरे दोस्त को क्रोध आ गया। बोला, 'देखो, इस किस्म के लोग पब्लिक के दुश्मन होते हैं। उन्होंने देश को जो नुकसान पहुंचाया है, उसका तुम अन्दाज़ा तक नहीं लगा सकते। इनको सज़ा दिलवाना भी ऐसा ही है, जैसे प्लेग के चूहों को हलाल करना।'

"'यह सब ठीक है। मैं तुम्हारी मदद करने को तैयार हूं। लेकिन मैं किसीसे ठगी करने को तैयार नहीं हूं।'

"'भई, यह ठगी नहीं है, यह तुम्हारा हक है, तुम्हारी मेहनत का हक। हमको देखो, हम पब्लिक के दुश्मनों को चकमा देकर गिरफ्तार करते हैं और गवर्नमेण्ट हमको वेतन देती है। भई, अगर तुम्हारी मेहनत का हक मुजरिम की जेब से निकल आए, तो इसमें बुराई ही क्या है?'

'लेकिन दोस्त, यह तो सोचो कि मैं इस किस्म की तिकड़मबाज़ी में बिल्कुल ही कोरा हूं। भला मुझमें इतनी चालाकी कहां कि ऐसी लम्बी-चौड़ी स्कीम को कामयाब बना सकूं।'

"'तुम लम्बी-चौड़ी स्कीम की बात छोड़ो। पहले तो तुम्हें सेठजी के पास जाकर न्यौता देना है। समझे?'

"'मैं उसकी दलीलों के सामने ठहर न सका। सोचा, इसके कहने से मैं सेठजी के पास चला जाता हूं। सेठजी मुझ उल्लू के जाल में फंसेंगे नहीं। बस, वहीं पर बात खत्म हो जाएगी।"

देवराज कुछ देर के लिए फिर चुप हो गया। हमें उसकी कहानी में दिलचस्पी महसूस हो रही थी। हमने एक-एक सिगरेट जला लिया और उसके बोलने का इन्तज़ार करने लगे। आखिर उसने फिर अपनी कथा शुरू की—"मैं सेठजी के यहां पहुंचा, तो दिल धक्-धक् करने लगा। आवाज़ तक कांप रही थी। लेकिन अजीब बात यह हुई कि सेठजी ने बड़ी आसानी से मेरी बात मान ली। उनके मान जाने से मुझे खुशी होने के बदले उल्टी परेशानी हुई। जब मेरे दोस्त ने मेरी कामयाबी के बारे में सुना तो उछल पड़ा। बोला, 'बस, अब पौ-बारह समझो।'

उम्दा टैक्सी में बैठाया, और हम अपनी मंज़िल की तरफ़ रवाना हो गए। एडवर्ड रोड के आखिर में एक सुनसान-सी कोठी थी। वहां मुझे खास कमरा दिखाया गया, जो ड्राइंग-रूम के समान सजा था। दो कमरे और भी थे, जो छोटे थे। बाकी कमरों के बारे में मुझे बताया गया कि मैं सेठजी से कह दूं कि वे कमरे मेरे दोस्त बन्द करके चले गए हैं। ड्राइंग-रूम की दरी और गलीचों के नीचे ही नीचे से तार एक दूर वाले कमरे तक चला गया था। वहां सारी बातचीत को रिकार्ड करने का इन्तज़ाम किया गया था।

"जब मेरे दोस्त ने मुझे सारी बातें समझा दीं, तो कहा कि अब जाकर अपने टाइम पर लड़की को ले आना। उसे यहां छोड़कर सेठजी को भी ले आना। यहां के सब नौकर-चाकर और ड्राइवर अपने ही आदमी हैं। जिस चीज की ज़रूरत हो, बिना खटके इनसे कहो।

"रात के दस बजे तक मैंने इधर-उधर घूमकर समय गुज़ार दिया। ऐन दस बजे मैं टैक्सी समेत इण्डिया गेट पहुंचा। परन्तु वहां किसीको न पाया। इन्तज़ार करना जरूरी था। टैक्सी से उतरकर मैं इधर-उधर टहलने लगा। एक-एक क्षण पहाड़ हो रहा था। यह भी फ़िक्र थी कि कहीं यह महाशय न आए, तो बड़ी भद्द होगी।

"कोई आठ मिनट बाद वही साहब साइकिल पर सवार आते दिखाई दिए। अंधेरे में पहले तो उसे अकेला देखकर परेशानी हुई। परन्तु उसके पीछे कैरियर पर बैठी लड़की को देखकर जान में जान आई। लड़की का नाक-नक्शा देखकर बड़ी निराशा हुई, क्योंकि उसकी बहुत ही साधारण मूरत थी। शरीर गठा हुआ मालूम होता था। हाथों की बनावट अच्छी थी। रंगत भी बुरी नहीं थी। इधर हमारे सेठ साहब कौन परी के बच्चे थे! यह सोचकर मैंने अपने दिल को तसल्ली दी।

"वह आदमी देर के लिए क्षमा मांग रहा था। परन्तु मैंने उसकी बात की ओर ध्यान नहीं दिया। जल्दी से पच्चीस रुपये उसके हाथ में थमाए और बोला, 'अब और देर नहीं होनी चाहिए।'

"आदमी ने लड़की को आगे को धकेला, तो लड़की ऐसे बढ़ी, जैसे घर से मार-पीटकर जबरदस्ती लाई गई हो। टैक्सी चली, तो महाशय

हाथ उठाकर बोले, 'सुबह पाच बजे शार्प ।'

"'पाच बजे शार्प ।' मैंने जवाब दिया और टैक्सी चल दी ।

"रास्ते मे लडकी से कोई बातचीत नही हुई । उसके चेहरे पर गहरी उदासी छाई रही। उसका मेकअप भी बेपरवाही से किया गया था, अगरचे ज्यादा लीप-पोत नही कर रखी थी। वह बेहद अल्हड, शरीफ, नातजुरबेकार और घरेलू टाइप की मालूम होती थी। उसने एक-आध बार माथे पर गहरा बल डालकर मुझपर उचटती हुई नजर डाली, जैसे मैं भेडिया हू, जो भेड़ को उठाए लिए जा रहा हू ।

"मेरे दिल की दिल मे ही रही । यहा तक कि हम कोठी तक जा पहुचे । ड्राइवर हमे उतारकर सेठजी को लेने चला गया, क्योंकि उन्हे यहा का पता मालूम नही था ।

"हम ड्राइग-रूम मे पहुचे, तो देखा कि कमरे के एक किनारे पर मुलाजिम खडा है और मेज पर व्हिस्की की दो बोतलें और खाने के डोंगे रखे हैं। रेडियो बज रहा है और वातावरण सुहावना हो रहा है । लड़की एक सोफे पर बैठ गई । मैंने पानी आदि के बारे मे पूछा, तो उसने इंकार कर दिया ।

"नौकर का इशारा पाकर मैं बाहर गया, तो अपने मित्र को पुलिस के कुछ अफसरो के साथ गप्पें हाकते पाया। उसने कहा कि लड़की का चुनाव ज्यादा अच्छा नही है। मैंने मजबूरी जाहिर की। वह बोला, 'कोई हर्ज नही । शराब का दौर खूब जोर से चलना चाहिए । फिर सब कुछ सुन्दर नजर आने लगेगा । सेठ से खूब कुरेद-कुरेद कर बातें पूछना, ताकि पक्का सबूत मिल सके ।'

"इसके बाद मैं अपने कमरे मे घुस गया और वह पिछवाड़े वाले कमरे मे ।

"सेठजी के पहुँचने का वक्त करीब आ रहा था । मैंने कमरे में एक नजर दौड़ाई और महसूस किया कि सिवा उस लड़की के बाकी सब चीज़ें दुरुस्त थी। लड़की बिल्कुल ठस थी। उसकी भी बात तो यही अलग, लेकर ही बेबस हो रहे थे, और फिर मुह सुजाए, न दाएँ-बाएँ न मुस्कराते, न बहके ।

" इसी समय पोर्टिको में कार के रुकने की आवाज़ आई। मैं बाज़ू फैलाए बाहर निकला और सेठजी का स्वागत बड़े जोश से किया। सेठजी ने इधर-उधर देखकर कहा, 'अजी, बड़ी सुनसान जगह है। पर है सुहावनी।'

" 'जी, जी।' मैंने जवाब दिया।

" सेठजी बिल्कुल काले होने के अलावा बड़े बेडौल और बदसूरत भी थे। बहुत नाटा कद, गोल-मोल, काले-कलूटे। कल्ले में पान।

" मैंने सेठजी को भी उसी लम्बे सोफे पर बैठा दिया, जिसपर लड़की बैठी थी। सेठजी ने इधर-उधर के कुछ सवाल किए, जिनके गढ़े-गढ़ाए जवाब मौजूद थे।

" ह्विस्की का दौर शुरू हुआ। चार-चार पेग गले से उतर गए, लेकिन सेठजी बिल्कुल गंभीर और अटल बैठे रहे। न आंखें चढ़ीं, न बहके, न हंसे, न सिसके। सोफे के दूसरे सिरे पर लड़की चुपचाप बैठी थी। दोनों टस से मस नहीं हो रहे थे और इन दोनों के बीच में मेरी जान मुसीबत में थी। अजीब लोग थे ये।

" मैं कुछ देर के लिए दोनों को अकेला छोड़कर बाहर चला गया। अंधेरे में खिड़की की दरार में से अन्दर झांकता रहा। मगर दोनों चुपचाप थे। सेठजी पेग पर पेग ढाले जा रहे थे और सिगरेट का धुआं उड़ाए जा रहे थे। यूं कभी-कभार एक नज़र लड़की पर भी डाल लेते। लेकिन उन दोनों में एक बात तक नहीं हुई।

" तंग आकर मैं फिर अन्दर पहुंचा। लड़की ने शराब पीने से इंकार कर दिया था, लेकिन बहुत कहने-सुनने पर खाने में शामिल हो गई। अब मैंने बिज़नेस की बात शुरू की, परन्तु सेठजी कुछ न बोले। मैंने कुछ भोले-भाले तरीके के सवाल भी किए, परन्तु न सेठजी को खुलना था, न वे खुले। हर सवाल के जवाब में हूं-हां कहकर टाल देते। मैंने कहा, 'मैं मामूली आदमी हूं। किसी न किसी तरह से पन्द्रह-बीस हज़ार रुपया इकट्ठा किया है। अगर सफलता न हुई, तो बड़ी मुश्किल का सामना होगा।'

" सेठजी भोलेपन से कहते, 'जी हां, बिजनेस में ऐसा भी हो जाता

है।'

"मैंने लम्बी-चौड़ी बातचीत के बाद पूछा, 'तो सेठजी, आपसे क्या आशा रखूं।'

"जवाब मिलता, 'आशा तो भगवान् से रखनी चाहिए।'

"इस तरह से उन्होंने पुट्ठे पर हाथ न रखने दिया। न शराब ने कुछ काम किया, न लड़की ने।

"हर दाव और हर घात से काम लेकर भी जब सफलता प्राप्त न हुई, तो मैंने सोचा, यह तमाशा अब खत्म होना चाहिए। टैक्सी मे बैठते समय सेठजी धीरे से बोले, 'बहुत धन्यवाद। जो कुछ मेरे हाथ मे है, सो मैं आपके लिए जरूर करूंगा।'

"सेठजी के चले जाने के बाद मैं अपने मित्र और उसके साथियों से जा मिला। हम सेठजी के घाघपन का रोना रोते रहे और लड़की सोफे पर ऊंघती रही।

"पांच बजे से कुछ पहले मैंने लड़की को जगाया और टैक्सी मे बैठकर हम इण्डिया गेट की ओर चल दिए।

"रास्ते मे बात तो क्या, उसने मेरी ओर देखा तक नही; मुझे उसपर गुस्सा भी आ रहा था और रहम भी। और सबसे बढ़कर मैं अपने-आपको कोसता रहा।

"इण्डिया गेट के पास उसका साथी खड़ा था। टैक्सी रुकी। मैंने दरवाजा खोला, तो लड़की आग के शोले की तरह बाहर निकली और साथी से कहने लगी, 'अब आइन्दा तुमने ऐसा किया, तो जहर खा लूंगी।'

"टैक्सी चल दी।"

देवराज चुप हो गया, जैसी कि उसकी आदत थी।

हमें कहानी दिलचस्प तो जरूर लगी लेकिन बेतुकी-सी। हमारी ओर ध्यान दिए बगैर देवराज ने नया सिगरेट होंठों मे दबाया और मुस्कराकर बोला, "यह मेरा तीसरा सिगरेट है।...कहानी खत्म नहीं हुई, अभी कुछ बाकी है।"

"अच्छा?"...हमने एकसाथ आश्चर्य से कहा।

देवराज ने गहरे-गहरे कश लिए और कहना शुरू किया—"कुछ

महीने बाद मुझे नौकरी मिल गई। मुझे अपने नीचे काम करने के लिए एक आदमी की ज़रूरत थी। इसके लिए अखबारों में विज्ञापन दिया गया। काम टेकनीकल था। ज़्यादा अर्ज़ियां नहीं आईं। फिर भी मैंने आधे दर्जन उम्मीदवारों को इण्टरव्यू के लिए बुला लिया। इण्टरव्यू मुझे खुद ही लेना था।

"इण्टरव्यू वाले दिन मैं समय से ज़रा पहले पहुंच गया, ताकि कागज़ों पर एक नज़र दौड़ा लूं।

"दो सिगरेट पीकर मैंने चपरासी को पहला नाम बताया। तीसरा सिगरेट मेरे होंठों में ही था कि सामने वही महाशय, यानी वही लड़की वाले दिखाई दिए।

"नज़रें मिलते ही हम हैरान-से होकर रह गए।

"आखिर मैंने कहा, 'तुम पढ़े-लिखे और टेकनीकल काम में तजुर्बेकार मालूम होते हो।···परन्तु वह लड़की···'

"उसने धरती की ओर देखते हुए जवाब दिया, 'मेरी बहन थी।··· मेरा यकीन कीजिए कि वह उसका पहला मौका था और आखिरी।···मैं उसे आपके सामने ला सकता हूं।···वह खुद इस बात की गवाही देगी।···यह न पूछिए कि उस रात किस मजबूरी से···?'

"मैं नहीं पूछूंगा, मेरे दिल से बोझा-सा उतर गया। मैंने फिर कहा, 'देखो, उस रात भी किसीने उसे छुआ तक नहीं।

"उसकी आंखों में आंसू आ गए। मैंने धीरे से कहा, 'मैंने फैसला कर लिया है कि तुम्हींको चुनूंगा। अब जाओ।'

"वह सिसकियां भरता हुआ चला गया।"

फिर देवराज ने हम सबकी ओर देखकर मुस्कराते हुए कहा, "उस रोज़ तीसरा सिगरेट पीने का जो मज़ा आया, वह फिर कभी नहीं आया।"

एक ही नाव पर

मेरी आख देर से खुली, और जब खुली तो नजर अपने दोस्त कपूर के ओवरकोट पर पड़ी। पहले तो आश्चर्य हुआ, फिर खयाल आया कि रात जब हम पान खाने के लिए नीचे उतरे थे, तो वह वहीं से अपने घर को चला गया था। ओवरकोट का किसीको खयाल ही नही आया।

मैंने फिर आखें बन्द कर ली। इतवार की सुबह थी। छुट्टी का दिन था। भला विद्यार्थी इतवार को भी नींद के मज़े न लूटें, तो कब लूटें? एकाएक याद आया कि आज एक अंग्रेज़ी पिक्चर का दस बजे वाला शो देखना था। इसलिए ज्यादा सोने की गुंजाइश नही थी।

सुस्ती हटाने के लिए सिगरेट की तलाश हुई। तकिये के नीचे और करीब की तिपाई पर कहीं भी सिगरेट दिखाई नही दी। मजबूर होकर उठना पड़ा। कुर्सी की टेक पर लटके हुए ओवरकोट की जेब मे किसी बोझिल चीज़ से पाव टकराया। जेब टटोली, तो अन्दर से सोने का सिगरेट-केस निकला। खोला, तो उसमे सिगरेट भी मौजूद थे। "हुर्रे!" मैं खुशी से चिल्ला उठा।

सिगरेट जलाकर सिगरेट-केस देखना शुरू किया। सोचा, हमारे यार कपूर की भी क्या शान है। सिगरेट-केस भी स्पेशल आर्डर देकर बनवाया गया है। और फिर ओवरकोट देखिए। कैसा बढ़िया कपड़ा है, कैसी सुन्दर कटाई और सिलाई। बुद्धू से बुद्धू शख्स भी पहने, तो देखनेवालों पर रोब जम जाए। अच्छा हुआ कि वह कोट यहीं भूल गया, आज सर्दी

भी है। इसे पहनकर ठाठ से सिनेमा देखने जाऊंगा, और फिर लौटा दूंगा।

मुझे यकीन था कि मैं उसे पहनकर बहुत सुन्दर दिखाई दूंगा। शेव किया, और मुंह-हाथ धोकर उजली कमीज़ निकाली। सज-धज में जो कमी रह गई थी, वह ओवरकोट से पूरी हो गई। रास्ते में एक पनवाड़ी की दुकान पर अपनी शक्ल देखी। सचमुच रोब टपक रहा था।

जनवरी का महीना था। आकाश में बादल छाए हुए थे। अचानक गरज के साथ बिजली भी चमकी। मैं डरा कि कहीं सिनेमाघर पहुंचने से पहले ही बारिश न होने लगे। यह सोचकर, लम्बे-लम्बे डग भरता हुआ बढ़ा। इतने में बड़े ज़ोर की मोटी-मोटी बूंदें पड़ने लगीं। झट कनाट प्लेस की दुकानों के बरामदे में शरण ली। धरती से आकाश तक धुआंधार हो गया, और वर्षा का तार बंध गया।

वर्षा हो जाने के कारण मन खराब हो गया। लेकिन कोई उपाय न था। इतवार के कारण दुकानें बन्द थीं, और सड़कें सुनसान पड़ी थीं।

कुछ क्षण के बाद क्या देखता हूं, कि एक खम्भे के पीछे से बहुत अच्छे कपड़े पहने हुए एक सज्जन निकले। आयु लगभग छियालीस वर्ष, दाढ़ी-मूंछ सफाचट, होंठों पर मुस्कराहट। मुझसे आंखें मिलते ही बोले—"फाइन वेदर (अच्छा मौसम है)।"

"ओ, यस, वेरी फाइन (हां, बहुत अच्छा)।" मैंने जवाब दिया।

वे मेरे करीब आकर पतलून की जेब में हाथ डालकर खड़े हो गए। "खूब फंसे।" यह कहते-कहते उनका मुंह झप से खुला और सफेद मजबूत दांत दिखाई दिए।

मुझे कोई जवाब नहीं सूझा, तो मैंने अपना मुंह उनसे भी ज्यादा खोला, और दांत भी ज्यादा संख्या में दिखाए।

शायद वे खासे बातूनी थे। कहने लगे, "कहते हैं कि गीदड़ की मौत आती है तो शहर की तरफ भागता है। यही बात मेरे साथ हुई। मौसम अच्छा पाकर और पिक्चर शुरू होने में काफी वक्त पाकर मैंने मोटर रोड पर रुकवा दी। सोचा कि टहलता हुआ चला जाऊंगा। और फिर जहांआरा को भी एक मर्ज़ी से मिलने जाना था।"

इसके बाद उन्होंने मेरी ओर देखा और मेरे दिल की हालत भांप-

हर बोले, "शाहजादी जहाँआरा—मेरी बेटी—मेरी इकलौती बेटी।"

यह कहकर वे बड़े प्रेम से हँसे। फिर बोले—"और तमाशा देखिए, इधर मैं फँस गया हूँ, और उधर मेरी सेक्रेटरी मिस मित्तल सिनेमाघर में टिकट खरीदकर मेरा इन्तजार कर रही होंगी।···क्या आप भी···"

"जी, मैं भी सिनेमा जा रहा था।"

"ओह···क्या तमाशा, क्या तमाशा···एक ही बोट (नाव) पर··· हा-हा।"

क्षण-भर बाद उन्होंने फिर बोलना शुरू किया—"मैं अपना परिचय दे दूँ। मेरा नाम नवाब दोस्त मुहम्मद यार जंगबहादुर है।"

मेरी सिट्टी-पिट्टी गुम हो गई। उन्होंने बढ़कर मेरे कोट को बड़े ध्यान से देखा। "बहुत खूबसूरत कपड़ा है—वेरी कॉस्टली (बहुत कीमती)। कट भी बहुत बढ़िया है। कहाँ से सिलाया था आपने ?"

"ओह, ही-ही···" मुझे खुद भी मालूम न था। सौभाग्यवश कोट की अन्दर वाली जेब पर लगे हुए दर्जी के लेबिल पर नजर पड़ी। झट बोला—"रैंकीन एण्ड कम्पनी का सिला हुआ है।"

"वेरी गुड (बहुत अच्छा)।"

मैंने कुछ घबराकर जेब से सिगरेट-केस निकाला, जिसे देखकर नवाब साहब सचमुच रोब में आ गए। समझे कि यह भी कोई मामूली आदमी नहीं है। और उन्होंने मुझसे पूछ ही लिया, "आपकी तारीफ ?"

मैंने जवाब देने से पहले सिगरेट-केस आगे बढ़ाया, और दिमाग पर जोर डालकर सोचने लगा। सिगरेट जलाने के बाद, मैंने जवाब दिया—"बन्दे को कुँवर चन्द्रभानसिंह सूर्यवंशी कहते हैं।"

मेरा जवाब तो खासा नामाकूल था, परन्तु जब नवाब साहब ने आदाब करके कहा—"ओह, कुँवर चन्द्रभानसिंह सूर्यवंशी," तो मुझे तसल्ली हो गई कि तुक्के ने तीर का काम किया।

अब मुझे जो दूर की सूझी तो पूछ बैठा—"गवर्नमेंट ने रियासतें खत्म कर डाली हैं, और आप···"

उन्होंने मुझे कुछ आश्चर्य से देखा, फिर हँस दिए। कहा—"ओह, हमारी रियासत उनके पंजे से बाहर है। इस्पात के दक्षिण में मेरी आबाद

रियासत है।"

"अच्छा, अच्छा। समझ गया। खूब, खूब!" मैं नहीं चाहता था, कि मैं नवाब साहब की नज़र में बेवकूफ साबित होऊं।

नवाब साहब ने मुझसे पूछा—"अच्छा तो आपकी स्टेट का क्या हाल है?"

मैंने घबराहट में जवाब दिया—"मैं राज्य-प्रमुख बन गया हूं—मध्य भारत की कुल रियासतों का राज्य प्रमुख!"

"खूब, खूब!" कहते-कहते उन्होंने अपना धूप का चश्मा उतारकर, शीशे पर पड़े हुए पानी के छींटे साफ किए। उन्होंने फौरन चश्मा आंखों पर चढ़ाकर पूछा—"सिनेमा शुरू होने में कितना टाइम बाकी है?"

"अभी दस मिनट हैं।...आज खूब रश होगा। रीटा हेवर्थ की पिक्चर है।"

मैं दिल ही दिल में परेशान हो रहा था कि साढ़े दस आने के रियायती टिकट खत्म हो जाएंगे। यह बात याद ही नहीं रही कि मैं राज्य-प्रमुख हूं।

नवाब साहब बोले—"आप ठीक कहते हैं। मैंने रीटा हेवर्थ को देखा है। ओह, क्या हुस्न पाया है उसने! जब मैं जहांपारा को लेकर आगा खां से मिलने गया तो वे दूर ही से उछल पड़े। मैंने पूछा, कि क्या बात है, तो कहने लगे—'आपकी बेटी तो बिल्कुल रीटा हेवर्थ से मिलती-जुलती है। ओह, शी इज़ वेरी ब्यूटीफुल।'

फिर उन्होंने सिगरेट का गहरा कश लेकर पूछा—"यह कौन-सा सिगरेट है?" और फिर सिगरेट पर लिखे अक्षरों को पढ़ने की कोशिश करने लगे।

मैंने बताया—"यह अमेरिकन कम्पनी का कैमेल्स सिगरेट है। मेरे ख़याल में यह दुनिया का बेहतरीन सिगरेट है। मैं हमेशा यही पीता हूं, और दोस्तों से भी इसकी सिफ़ारिश करता हूं।"

"वेरी गुड (बहुत बढ़िया)।" नवाब साहब ने सिर हिलाते हुए कहा—"जब मैं अमेरिका में था तो वहां अच्छे-अच्छे सिगरेट पीने में आए, लेकिन मुझे मालूम नहीं था कि कैमेल्स सबसे अच्छा होता है। ओह, अमेरिका बहुत बड़ा देश है। उसकी सभ्यता ऊंची है। वह हर लिहाज़ से बड़ा

गया है। वहां सही माने में डेमोक्रेसी (जनतन्त्र) है।"

मैंने फिर शाहज़ादी का जिक्र छेड़ते हुए कहा—"शाहज़ादी साहिबा घर से निकलती, तो आपको इतनी तकलीफ न उठानी पड़ती।"

"ओ यस! भाई कुंवर साहब, आप शाहज़ादी जहांपारा से मिलकर खुश हो जाएंगे। वह बेहद मिलनसार और खुशमिज़ाज है—शरीर छोकरी!"

यह कहकर नवाब साहब फुदककर हंसे। फिर बोले—"नाज़ुक होने पर भी शिकार खूब खेलती है। जब मैं शेर के शिकार को जाता हूं तो राइफल लेकर मेरे साथ चलती है। अरे, साहब! वह शायरी भी करती है। ऑल राउण्ड टेस्ट है उसका। हालांकि उसकी पढ़ाई-लिखाई विलायत में हुई, लेकिन वह अपनी मातृभाषा नहीं भूली।···घड़ी दिखाइए।"

फिर झुंझलाकर कहा—"मिस मित्तल भी परेशान हो रही होंगी। वह बड़ी चार्मिंग है। उसके मंगेतर ने कहा, 'नवाब साहब की नौकरी छोड़ दो, नहीं तो तुमसे शादी न करूंगा, लेकिन उस वफा की पुतली ने इन्कार कर दिया।···सचमुच इन लोगों का कैरेक्टर बहुत ऊंचा होता है।"

मैं समझ गया कि नवाब साहब एक ही घाघ हैं। दुनिया का ऊंच-नीच खूब देखे हुए हैं। मैं दिल में सोच रहा था कि अपने बारे में क्या बताऊं। न मेरे पास कार, न शाहज़ादी जहांपारा, न सेक्रेटरी!

उन्होंने पूछा—"आजकल आप यहां तफरीह के लिए आए हैं क्या?"

"जी हां," मैंने बेपरवाही से नथुनों में से धुआं उड़ाते हुए उत्तर दिया—"शिकार को जा रहे थे देहरादून। सारी पार्टी आगे निकल गई। मैं यहां रुक गया। मुझे ज़रा पण्डित जी से मिलना था।"

"पण्डित जवाहरलाल नेहरू से?"

"जी हां।"

"तो अभी कुछ दिन रुकेंगे आप?"

"इरादा तो है।"

"तो फिर जहांपारा से आपकी मुलाकात ज़रूर हो जाएगी। और मुमकिन है कि वह आपके साथ शिकार पर जाने को तैयार हो जाए।"

अब मैं और घबराया। लेकिन फिर अपने होश कायम रखते हुए जवाब दिया—"यह भी मुमकिन है कि मैं शाहज़ादी से मिलने के बाद

हूं। साढ़े तीन महीने बाकी हैं। ओह! शी इज़ स्वीट—आप उससे मिलकर खुश होंगे।"

सिनेमा के पर्दे पर अब रीटा हेवर्थ नाचती, धूम मचाती आई तो नवाब साहब आपे से बाहर हो गए। हाथों को मरोड़कर उंगलियां चटकाने लगे। बोले—"देखिए इन लोगों की हेल्थ कितनी अच्छी होती है। व्हाट ए ब्यूटी!"

मैंने उत्तर दिया—"नवाब साहब, यह क्या है? पेरिस के स्टेज पर जो नाच होते हैं, उनके मुकाबले में तो यह कुछ भी नहीं।"

"सच?" नवाब साहब ने मुंह खोलकर मेरी ओर देखा।

"आप तो पेरिस कई बार गए होंगे," मैंने उन्हें याद दिलाया।

"यस, यस, गया हूं," नवाब साहब ने सम्भलकर जवाब दिया—"लेकिन ...हीं-हीं...आप जानते ही हैं कि शाहज़ादी मेरे साथ होती थी। भला उसके साथ मैं नाच वगैरह देखने कैसे जा सकता था?"

"ठीक है, ठीक है!"

मैंने पेरिस के बारे में सुनी-सुनाई बातों को याद करके उन्हें कई कहानियां सुनाईं। मालूम होता है कि औरतों की बातें सुनकर उनके जिस्म के रोंगटे खड़े हो गए। बेचैन होकर बोले—"उफ-उफ, बहुत मज़ा आता होगा तब तो।"

"बस, कुछ न पूछिए। बिल्कुल परिस्तान होता है।"

यह सुनकर नवाब साहब मेरे हाथ पर हाथ मारकर और एक आंख बन्द कर हंसे। फिर तो वे खूब खुलकर बैठे। उन्होंने आपबीतियां सुनाईं। कुछ मैंने कथा-कहानी गढ़कर उन्हें खुश किया। यहां तक कि जब सिनेमा खत्म हुई तो हमारे सम्बन्ध काफी गहरे हो चुके थे।

[illegible] से उतरते वक्त उन्होंने कहा—"कुंवर साहब, मेरी कार आई होगी। मैं आपको आपके निवास-स्थान तक छोड़ आऊंगा।"

मेरे पांव तले से ज़मीन खिसक गई। कुछ सूझ नहीं पड़ता था। परन्तु पीछे जाकर मालूम हुआ कि अभी कार नहीं आई। इसपर नवाब साहब खिन्न दिखाई देने लगे। बोले—"कुंवर साहब, डरता हूं कि कहीं अचानक किसी दुर्घटना में न फंस गई हो। यह मुमकिन नहीं कि वह देरी

इसके बारे में दर्जी से पूछा तो उसने बताया—"यह एक नवाब साहब का सूट है। वे कुछ दिनों से बाहर गए हैं। इसलिए ले नहीं गए।"

मैंने हैरानी से पूछा—"क्या आजकल आपसे नवाब भी सूट सिलाने लगे हैं?"

"अजी बाबूजी, आजकल मेरे पास एक बहुत बढ़िया कटर आ गया है। विलायत पास कटर का शागिर्द रह चुका है। कपड़े मे जान डाल देता है। अबे लड़के, जरा जुल्ले खा को बुला। नाप ले ले बाबूजी का। ...बाबू साहब, अब की आप अपना सूट देखकर हैरान रह जाएंगे।"

अब मैंने भी सारा किस्सा कह सुनाया—"अरे भाई, मैं एक दोस्त का ओवरकोट पहने था। सो एक नवाब साहब मुझे भी कहीं का राजा समझ बैठे। परसों मुझे चाय पर बुलाया है...."

"जुल्ले खां आ गया। जाइए, नाप दीजिए।"

मैंने घूमकर देखा। जुल्ले खां—अरे नवाब साहब!

मैं आश्चर्य की वजह से कुछ बोल न सका। मेरे सामने 'नवाब साहब' ढीला-ढाला पाजामा पहने खड़े थे। गले में मैला-कुचैला फीता लटक रहा था। मालिक ने फिर कहा—"आप ड्रेसिंग-रूम मे जाकर नाप दे दीजिए।"

आगे-आगे जुल्ले खां, पीछे-पीछे मैं। दोनों चुप।

ड्रेसिंग-रूम मे पहुंचते ही जुल्ले खा ने घूमकर मुझे फर्शी सलाम किया और बड़ी गम्भीरता से एक आख बन्द करके मेरी ओर देखते हुए फरमाया—"कुंवर चन्द्रभानसिंह सूर्यवंशी!"

मैंने और भी ज्यादा आदर के साथ आदाब अर्ज करते हुए जवाब दिया, "आला हजरत नवाब दोस्त मुहम्मद यार जगबहादुर!"

काली तित्तरी

काली तित्तरी चरी विच बोले
ते उड्डी नूं बाज पैं गया।

बड़े मजे में मौला ने चिलम में तम्बाकू और उसके ऊपर सुलगते हु
उपले के दो टुकड़े जमा दिए और फिर मारे सर्दी के दांत कटकटात
हुआ चारपाई पर चढ़ टांगों पर धुस्सा डाल मग्न हो गया।

रोटी खाने के बाद उसको हुक्के की बड़ी तलब होती थी। उस
आंखें मूंदकर दो-चार कश ही खींचे होंगे कि दरवाजे पर दस्तक सुना
दी। यह दस्तक उसे बड़ी बुरी लगी। उसने कड़े स्वर में पूछा—"कौ
है ?"

जवाब में फिर खट-खट की आवाज़ सुनाई दी।

पीर दा ठट्टा छोटा-सा गांव था। ठीक उसके सिर पर मौला क
कच्चा मकान था जहां वह अपनी बूढ़ी मां और एक विधवा बहन सहि
रहता था। गांव में घुसते समय उसका मकान सामने पड़ता था, इसलिए
राहगीर उसीसे किसीके मकान का पता या अगले गांव का रास्ता पूछने
के लिए दरवाजा खटखटाते थे। लेकिन उस समय आधी रात हो रह
थी। और फिर, जाड़ों के मौसम में तो शाम ही से गांव पर सन्नाट
छा जाता था। न जाने ऐसे बेवक्त कौन आ धमका था। जब मौला को
विश्वास हो गया कि उसे उठना पड़ेगा तब उसने हुक्के की नाल एक ओर

हराई और गुस्से को संभालता हुआ दरवाजे की ओर बढ़ा।

दरवाजा खोला तो देखा कि बाहर अंधकार में मझले कद का एक व्यक्ति खड़ा है। पगड़ी उसके सिर पर मोटे रस्से की तरह लिपटी हुई थी और उसके एक सिरे से उसने अपने चेहरे का, आंखों के अतिरिक्त, शेष भाग छिपा रखा था। उसका रंग सांवला था, भवें मोटी, घनी और लम्बी थीं। आंखें तेज और चमकीली। उसकी नाक की जड़ के पास आंखों के नीचे महीन और गहरी रेखाओं का जाल-सा बुना हुआ था।......

मौला कोई कटु वाक्य कहते-कहते रुक गया। उसने भारी तथा रुक्ष स्वर में पूछा—"तुम कौन हो?"

नवागन्तुक ने क्षण-भर उसकी ओर पैनी दृष्टि से देखा और फिर बोला—"मैं भवोड़ी गांव से आ रहा हूं।"

"भवोड़ी? वह तो यहां से बीस कोस की दूरी पर है। पर तुम ऐसे बात कर रहे हो जैसे पड़ोस के गांव से आ रहे हो..."

नवागन्तुक ने बेचैनी से पहलू बदलते हुए कहा—"मैं डाची पर आया हूं।"

मौला को उसका बोलने का ढंग पसन्द नहीं आया। उसने बेपरवाही से कहा—"खैर, मुझे इससे क्या मतलब। सवाल तो यह है कि तुम मेरे पास क्यों आए हो?"

"मुझे बग्गासिंह भवोड़ी वाले ने भेजा है।"

यह सुनकर मौला चौकन्ना हो गया। उसने हाथ बढ़ाकर नवागन्तुक का बाजू थाम लिया और जल्दी से बोला—"तो यहां खड़े क्या कर रहे हो। अन्दर चले आओ न?"

नवागन्तुक एक ही डग में अन्दर आ गया। वह बड़ा मजबूत दिखता था। उसने शरीर पर मोटा खेस लपेट रखा था।

मौला ने दहलीज़ में से झांककर बाहर की ओर देखा और इस बात का इत्मीनान कर लिया कि उसकी बहन और मां उसके पीछे वाली कोठरी में रजाइयों में दुबकी पड़ी हैं तो उसने अन्दर वाला द्वार बन्द कर दिया और नवागन्तुक से मुखातिब होकर बोला—"खैर दरवाज़ा बन्द

कर दिया है ताकि हमारी बातों की आवाजें अन्दर तक न पहुंचें।"

नवागन्तुक कुछ नहीं बोला। मौला ने तेज़ी से बाहर वाले दरवाज़े में से झांककर इधर-उधर निगाह दौड़ाई। फीकी चांदनी में दूर जोहड़ का पानी पिघले हुए सीसे की टिकली की भांति दीख रहा था। हवा बन्द थी। और दूर-दूर तक फैली झाड़ियां निश्चल खड़ी थीं। यह देखकर मौला ने अपने दांतों में अटकी हुई हुक्के की नाल को होंठों में दबोचकर बड़ी निश्चिन्तता से गुड़-गुड़ की आवाज़ की और फिर द्वार बन्द करके लौटा। नवागन्तुक ड्योढ़ी के अन्दर बनी हुई खुरली से टेक लगाए खड़ा था।

"भूख लगी हो तो बताओ। खाने-खूने का कुछ बन्दोबस्त करूं।"

"नहीं, मैं खाना खाकर आया हूं। पास के गांव से...बस अब काम हो जाना चाहिए।"

"क्यों, इतनी जल्दी भी क्या है?"

"मुझे फौरन लौटना होगा।"

"क्यों?"

"बग्गे ने यही कहा था। मेरा यहां रहना ठीक नहीं। किसीने देख लिया तो शक होगा, खामखाह।"

"डाची कहां है?"

"डाची को साथ वाले गांव में अपने एक दोस्त के यहां छोड़ आया हूं।"

"और बन्दूक?"

"बन्दूक मेरे पास है।"

मौला को आश्चर्य हुआ कि इतनी बड़ी बन्दूक इसने कहां छिपा रखी है।

इसपर नवागन्तुक ने तनिक झुंझलाकर खेस के नीचे से दुनाली बन्दूक दिखाई जिसकी दोनों नलियां अलग करके उसके कुन्दे सहित अंगोछे में लपेट रखी थीं और फिर उसपर रस्सी कसकर बांध दी थी।

अब मौला समझा। सिर हिलाकर बोला—"अच्छा, तोड़कर बांध रखी है।"

"हाँ, वैसे तो छिप नहीं सकती न।"

"ठीक।"

"अब जल्दी करो।"

"और कारतूस?"

नवागन्तुक के माथे पर बल पड़ गए। बिगड़कर कहने लगा—"देखो, मैं बिल्कुल तैयार होकर आया हूँ। बस अब मुझे मौके पर ले चलो।"

"अच्छी बात है।" यह कहकर मोला ने हुक्के के दो-तीन खूब गहरे-गहरे कश लिए। फिर धुस्से को शरीर पर खूब अच्छी तरह लपेटा और मुसकराकर बोला—"उस्ताद, तुम्हें मेरे घर का पता कैसे लगा? किसीसे पूछा था?"

"मैं ऐसा कच्चा नहीं हूँ कि किसीसे तुम्हारे घर का पता पूछता फिरूँ। इस तरह तो तुमपर शक किया जा सकता था। बंसी ने मकान का ठीक-ठीक पता और तुम्हारा हुलिया बता दिया था और कहा था कि यह तुम्हारी राह देखता होगा।"

"हाँ-हाँ क्यों नहीं।" मोला हँसकर बोला—"बल्कि यह काम किसी मामूली आदमी को नहीं सौंप सकता था···अच्छा तो लो, मैं चला। अभी दो-तीन और आदमियों को भी बुलाना है।

"बुला लाओ···पर मैं उनको अपनी सूरत नहीं दिखाऊँगा।"

"बेशक-बेशक! [illegible] भी क्या है?"

यह कहकर मोला चलने लगा तो नवागन्तुक बोला—"हुक्का लेते जाओ।"

"क्यों?"

"हुक्का गुड़गुड़ाने वालों को [illegible]"

"[illegible] नहीं [illegible]"

मोला ने हुक्का उठाया। [illegible]

[illegible]

नवागन्तुक ने उसके [illegible]

[illegible]

उपलों से भरी मिट्टी की अंगीठी दोनों टांगों के बीच रखकर बैठ गया।

मौला केचुओं की भांति बल खाती हुई सुनसान और तंग गलियों में से होता हुआ अन्त में एक पुराने कच्चे मकान के आगे खड़ा होकर आवाज़ें देने लगा—"सौदागरा ! ओए सौदागरा !"

कोई उत्तर न मिलने पर उसने फिर हांक लगाई—"ओह सौदागर ! सौदागरा होए !!"

फिर वह इत्मीनान से हुक्का गुड़गुड़ाने लगा। दिमाग में जो तरावट पहुंची तो उसका दिल नवागन्तुक को दुआएं देने लगा, जिसने हुक्का उसके साथ भिजवा दिया था।

मकान का दरवाज़ा खुला। भीतर से घने और काले बालों वाला एक नौजवान बाहर निकला। उसने पहले तो मौला की ओर स्वप्निल दृष्टि से देखा, किन्तु जब पहचाना तो उसकी आंखें पूर्ण रूप से खुल गईं।

मौला ने पीले-पीले दांतों का प्रदर्शन करते हुए कहा—"आवाज़ें दे-देकर मेरा तो गला भी बैठ गया। कहां···घुस पड़ा था लां के मीड़े ?"

इसपर दोनों हंसने लगे।

सौदागर ने पूछा—"हां बे बता।"

जवाब में मौला चुपचाप हुक्का गुड़गुड़ाता रहा, फिर उसने शरारत और अर्थपूर्ण ढंग से भौं ऊपर चढ़ाकर एक आंख इस तरह मारी जैसे ढेला खींचकर मार दिया हो।

सौदागर समझ गया।

"चलो।" मौला ने कहा।

"ठहरो, मैं ओढ़ने के लिए तो कुछ लाऊं अन्दर से।"

वह भागा-भागा भीतर गया और काले रंग की एक लोई शरीर पर लपेटता हुआ तुरन्त लौट आया।

दोनों वहां से आगे बढ़ गए। गांव पर पूर्ण निस्तब्धता छाई थी। कहीं-कहीं कोई खुजली की मारी कुतिया दांत निकालती हुई दुकान के एक तख्ते से निकलकर दूसरे तख्ते के नीचे दुबक जाती। या गारे के बने हुए मकानों की दीवारों के नीचे छछुंदरें जान छिपाती फिरती थीं।

दबे-दबे स्वर में बातें करते हुए वे दोनों बढ़ते चले गए। उन्होंने

...सिंह को उसके मकान से और लम्मू को ढोरों के तबेले से बुलाकर ...ने साथ लिया और मौला के मकान पर वापस पहुच गए।

भीतर से नवागन्तुक ने द्वार खोला। उसका चेहरा पगडी के शमले ...छिपा हुआ था। सौदागर, लम्मू और मेलासिंह अभी नौजवान थे। ...कामों मे नये-नये दाखिल हुए थे। नवागन्तुक का नकाब के पीछे ...ा हुआ चेहरा और जिन्न की भांति घनी भौहों के नीचे उसकी ...कती हुई आखों को देखकर उनके शरीर मे सनसनी की लहरें दौड ...।

नवागन्तुक ने जल्दी से उनके चेहरों का निरीक्षण किया। फिर उसने ...ं से हाथ निकालकर इशारा किया कि अब देर किस बात की है।

उसका हाथ भी काला था। उसपर मोटे-मोटे बाल उगे हुए थे।

मौला ने उत्तर दिया—"देर किसी भी बात की नही है।"

"तो अब चलो।"

"जरूर।"

मौला ने आगे कदम बढाया और शेष सब लोग उसके पीछे-पीछे ... लिए। नवागन्तुक के कदम बड़ी फुर्ती से उठ रहे थे और उसकी दोनों ...लिया क्षण-भर को भी एक जगह नही रुकती थीं, माला के दानों की ...ति खटाखट घूमती रहती।

दूर से कभी-कभार चौकीदार के चिल्ला उठने की आवाज यों सुनाई ...जाती थी मानो वह कोई भयानक स्वप्न देखकर बड़बड़ा उठा हो। ...न आवाज और अपने बीच काफी अन्तर रखते हुए वे बड़ी तेजी से बढ़ने ...ले जा रहे थे।

गाव से निकलकर लगभग पौन मील की दूरी पर स्थित पीरां वाले ...हट पर पहुचकर वे रुक गए। मौला के इशारे पर सौदागर ने रहट के ...कट वाले बाड़े मे घुसकर एक मरियल बैल को बाहर निकाला और ...कर वे उसे हांकते हुए तनिक दूर ले गए और गाव के एक बड़े महाजन ... खेत में उसे छोड दिया। वे स्वयं बबूल के पेड़ की छिदरी छाया के ...चे जा खड़े हुए।

आकाश पर पूर्णिमा का चांद चमक रहा था।

नवागन्तुक सिख ने फुर्ती से अपनी बगल में से बन्दूक का अंजर-पंजर निकाला। नलियों को उसके कुन्दे से जोड़ा और नीचे की ओर काठ की खपच्ची जमाई और हथेली की एक ही चोट से उसे अपनी जगह पर जमा दिया।

फिर उसने दोनों नलियों में ठोस गोलियों वाले कारतूस भरे और एक निगाह मरियल बैल पर डाली जो ठण्डी हवा में कान फड़फड़ाता और पतली तथा कमज़ोर दुम को हिलाता घास पर मुंह मार रहा था। फिर उसने निशाना बांधकर लबलबी दबाई। गोली खाते ही बैल बिना किसी संघर्ष के ज़मीन पर ढेर हो गया। यह गोली तो शेर को ठण्डा कर देने के लिए काफी थी, किन्तु बन्दूकची ने संतोष के लिए एक दूसरी गोली भी उसकी गर्दन में धंसा दी।

बैल का काम तमाम होते ही नवागन्तुक सिख ने अपनी और भी तेज़ी से चमकती हुई आंखों से मौला और उसके साथियों की ओर देखा, फिर भारी स्वर में बोला—"अच्छा, अब मुझे चलना चाहिए। सुबह से पहले वापस पहुंचना ज़रूरी है।"

मौला ने हाथ बढ़ाकर कहा—"अच्छी बात है।"

नवागन्तुक सिख चारों से हाथ मिलाते हुए एक बार फिर भारी स्वर में बोला—"साब सलामत।"

"साब सलामत।"

नवागन्तुक ने फिर अपनी बन्दूक को तोड़-तोड़कर उसपर कपड़ा लपेट दिया और फुर्ती से डग उठाता हुआ तनिक फीकी चांदनी में गायब हो गया।

वे चारों कुछ देर तक उसे जाते हुए देखते रहे, फिर वे बैल की ओर बढ़े और देखा कि वह बिल्कुल मर चुका है।

अब वे जल्दी-जल्दी गांव की ओर बढ़े और गांव के निकट पहुंचकर उन्होंने एकदम पकड़ो-पकड़ो की पुकार लगाई।

लोगों को डाकुओं का डर लगा रहता था। अतएव बहुत बड़ी संख्या में ग्रामवासी घरों से बाहर निकल आए। और तब उन्हें पता चला कि बेचारे मौला का बैल गोली से मार दिया गया।

मौना देर तक गोली मारनेवाले की मा और बहनों से अपना रिश्ता गाठता रहा और जब उसका गला बैठ गया तो सूर्योदय से पहले-पहले वह छः कोस परे थाने में इस बात की रिपोर्ट लिखाकर गाव लौट आया।

पीर का ठट्टा गाव छोटा था किन्तु यहा का सबसे धनी घराना मान्हा दूर-दूर तक मशहूर था। आस-पास के गावो मे भी उनके आसामी मौजूद थे। अब मान्हों का दबदबा कुछ कम हो गया था, क्योंकि पीर का ठट्टा और आसपास के कुछ गावो के बदमाशों ने मिल-जुलकर खामखाह मुकदमेबाज़ी के चक्कर मे डालकर उन्हें खोखला बना दिया था। और अब उनके लिए मौना ने एक नई मुसीबत खडी कर दी।

जाड़ों का सूर्य कुछ अधिक ऊचा नही होने पाया था कि इलाके के थाने से एक लम्बा-तडगा मुसलमान थानेदार घोड़े पर बैठा दो साइकिल सवार सिपाहियों को साथ लिए पीर का ठट्टा मे आ धमका।

गाव के बाहर एक बडे और वृद्ध पीपल के पेड के नीचे पहुचकर थानेदार घोडे पर से उतरा। सुनहरी कुलाह पर लिपटी हुई उसकी खाकी रग की कलफ लगी पगडी के लहराते हुए दामले दूर ही से दीखने लगे। अतएव गाव-भर के चमारो, भगियों और किसानों के बच्चे तथा कुत्ते गाव मे घुसते ही उसके पीछे हो लिए। और अब वे एक बडा-सा घेरा बनाए खडे थे। पीपल के नीचे बडी धूल थी जिसमें सूखे पत्ते और भूसे के तिनके मिले हुए थे।

घोडे की लगाम सिख सिपाही के हाथ मे थमाकर थानेदार ने दोनों ओर से वर्दी को खींचकर अपने सुडौल शरीर पर जमाया। उसका ऊचा कद कुलाहदार पगडी के कारण और भी ऊचा दिखता था। उसका दमकता हुआ माथा खूब चौडा था। और उसकी नाक जड़ ही से एकदम ऊपर को उठ गई थी। अपनी शानदार नाक के कारण वह बडा रौबदार दीख पडता था। अभी नौजवानी की अनुभवहीनता उसके चेहरे से स्पष्ट झलकती थी, किन्तु वह प्रतिभाशाली अवश्य था। अपनी हरे रग की पुतलियों के कारण देहातियों के कथनानुसार 'अंग्रेज' जान पड़ता था।

पहले उसने खुली हवा मे टहल-टहलकर दो-तीन गहरी सासें लीं

और फिर जेब टटोलकर एक खाकी रंग का कागज बाहर निकाला और उसे ध्यान से देखने लगा।

इसी बीच में गांव के लोग इकट्ठा होने लगे। उधर सिख सिपाही ने घोड़े की लगाम पीपल की जड़ से बांध दी।

कहीं से नम्बरदार को खबर मिली तो वह बेचारा सिर पर पांव रखकर भागा। जब वहां पहुंचा तो यह हाल था कि दम फूला हुआ और पगड़ी टांगों में उलझी हुई थी।

थानेदार ने टांगें अकड़ा-अकड़ाकर नज़र ऊपर उठाई और घेरे में खड़े हुए आदमियों में से एक को पास आने का इशारा किया।

वह बेचारा घबराकर इधर-उधर देखने लगा।

थानेदार ने आदेशात्मक स्वर में कहा—"मैं तुम्हींको बुला रहा हूं।"

"जी, मुझको!" उस आदमी ने अपनी छाती पर उंगली जमाते हुए पूछा। और सिपाही के स्वीकारात्मक ढंग से सिर हिलाने पर उसने हास्यापद ढंग से आंखों की पुतलियां दायें-बायें घुमाकर इधर-उधर देखा और पगड़ी संभालता हुआ थानेदार की ओर बढ़ा।

"तुम मौला का घर जानते हो?"

"आहो जी "आहो।"

"जाओ, उसे बुला लाओ।"

वह आदमी सरपट भागा लेकिन मौला हुक्का हाथ में लिए पहले ही से लुंगी उड़ाता चला आ रहा था।

थानेदार से आंखें चार होते ही उसने दूर ही से हुक्का ज़मीन पर रख दिया और ज़मीन पर झुककर फर्शी सलाम किया और फिर आगे बढ़कर बोला—"मोतिया वाल्यो। मैंने दूर ही से आपको देख लिया था। बस, हुक्का ताज़ा करने में देर हो गई।"

यह कह मौला ने बड़ी चापलूसी से हुक्के की नाल उसके मुंह से भिड़ा दी।

नम्बरदार आते ही चारपाई का प्रबन्ध करने के लिए उल्टे पांव लौट गया। बैठने का कोई उचित स्थान न पाकर थानेदार एक मुगदर पर बैठने लगा तो मौला ने बढ़कर अपना खेस बिछा दिया उसपर और

ललकारकर वहां खड़े लोगों से कहा—"ओए मायाव्यो ! भागकर मेरे घर से चारपाई और बिस्तर ले आओ ।"

उसकी बात सुनते ही दो-तीन आदमी भाग निकले ।

थानेदार ने पहले तो चुपचाप हुक्के के खूब गहरे-गहरे कश लिए और फिर मौला की ओर मुड़कर मुस्कुराते हुए बोला—"ओए भूतनी पलस्तर ! बात क्या है, आज चोरों के घर मोर पड़ गए ।"

"तौबा ! मेरी तौबा !" कहते-कहते मौला वहीं उसके कदमों में बैठ गया । "जबरजस्ती ! जभी तो कहते हैं कि बद अच्छा बदनाम बुरा ।"

"हां, खूब याद आया ।" सिपाही को सम्बोधित कर थानेदार बोला, "ओए अजैब सिंहिया ! जा जरा रामलाल मान्हे ते ओहदे लड़के को तो बुलाके ले आ ।"

पहले ही सधाए हुए सौदागर ने आगे बढ़कर हाथ जोड़ दिए और विनम्र स्वर में बोला—"खान साब ! बड़ा अनर्थ हुआ ए जी । बेचारे मौला की तो कमर ही टूट गई । किसान को बैल का बड़ा सहारा होता है ।"

मौला ने ठण्डी सांस भरकर मुंह नीचे को लटका दिया ।

इधर-उधर की बातें हो ही रही थीं कि रामलाल सफेद धोती और ऊपर सफेद कुर्ता पहने आ पहुंचा । उसके साथ उसका नर्म और नाजुक युवा पुत्र हीरालाल भी था जो पतलून पहने था ।

थानेदार ने बाप-बेटे को सिर से पांव तक देखा । बाप बेचारा अधेड़ अवस्था का गम्भीर पुरुष था लेकिन थानेदार को लड़के के खड़े होने के ढंग से विद्रोह की गंध आई थी । फिर उसने अपने को काफी सम्भालकर पूछा—"अबे लौंडे, अपना नाम बताइयो ।"

इसपर पढ़े-लिखे लड़के को कुछ गरमी आ गई । तनिक उत्तेजित हो अंग्रेजी में बोला—"यू मुड नाट बी रुड ।"

थानेदार को अंग्रेजी बस वाजिबी आती थी, इसलिए वह तनिक कठोर स्वर में बोला—"देख, ओए मुंडिया ! हमसे ज्यादा गिट-पिट नहीं करना'''जो कहना हो सो अपनी बोली में कहो जिससे कि सब लोग तुम्हारा बयान समझ सकें ।"

नवयुवक को उसकी यह बात भी पसंद न आई। बोला-
अफसर हैं, आपको ज़रा तमीज़ से बात करनी चाहिए।"

यह जवाब सुन थानेदार का खून खौल गया। उसकी अ
अंगारे निकलने लगे। उसने सिपाही को पास आने का इशार
और होंठ काटकर बोला—"अजैब सिंहिया! इस मुंडे को थोड़
दिखाओ।"

अजैबसिंह के दो-तीन झापड़ खाकर नवयुवक के दांत हि
उसके नथुनों में से खून निकलने लगा। थानेदार ने उसके चिक
के गुच्छे को हाथ में दबाकर कहा—"बेटा! मैं तुम्हारे ऐसे शरी
माशों को सीधे रास्ते पर लाना खूब जानता हूं।" फिर उपस्थि
की ओर देखकर बोला—"देखो जी, एक तो गरीब किसान का बै
से उड़ा दिया और ऊपर से धौंस जमाते हैं। कानून हमारे हाथ
दूध का दूध और पानी का पानी कर दिखाना हमारा काम है।

उपस्थित जनों में से अधिकांशों ने उसकी हां में हां मिलाई
दार गुर्राकर बोला—"ओए मौलिया!"

"जी मोतिया वाल्यो!"

मौला बगल ही से निकलकर हाथ बांध थानेदार के सामने
गया।

"बैल कहां पर मरा पड़ा है?"

"शहंशाह जी! वह तो मान्हों के खेत ही में पड़ा है। बेचारा
का मारा बाड़े से निकल इनके खेतों में जा निकला। बस, उठा के
दाग दी इन्होंने। भला दो डण्डे मारकर निकाल देते साले को,
का बैल तो बच जाता।" यह कहते-कहते मौला ने रोनी सूरत ब

मान्हा यह आरोप सुन सिटपिटा गया। किन्तु बेटे की दुर्ग
चुका था, इसलिए चुप हो रहा।

"हम मरा हुआ बैल मौके पर देखेंगे।"

"चल्लो मोतियां वाल्यो।"

अब आगे-आगे मोतियां वाला, साथ-साथ मौला, सौदागर,
इत्यादि, उनके पीछे मान्हे और सबके पीछे नाक सुड़सुड़ाते बच्चे अ

हिलाते हुए कुत्ते।

यह टोली खेत पर खेत लांघती जब मान्हों के खेत में पहुंची तो देखा कि सर्दी से अकड़ा हुआ बैल खेत में टांगें पसारे पड़ा है। मौला ने पहले ही से एक लौंडे को वहां बैठा दिया था जिससे कि मृत बैल के शव के पास गिद्ध या कुत्ते न आने पाएं।

खां साहब (थानेदार) ने बैल की अगली टांगों के नीचे और गर्दन में लगी हुई गोलियों के चिह्नों को ध्यान से देखा। गांव के तीन-चार आदमियों को भी देखने का हुक्म दिया। फिर गांव वापस आकर पीपल की छांव तले बिछी हुई चारपाई पर बैठ गए...उस समय उनके लिए मक्खन और लस्सी का कटोरा तैयार था।

मक्खन का गोला निगलकर ऊपर से लस्सी चढ़ाकर खां साहब ने बाछें झाड़नुमा रूमाल से साफ करते हुए कहा—"हां बे मौलू! अब बता सारा किस्सा। तेरा बयान लिखा जाएगा अब।"

मौला ने खांसकर गला साफ किया और बताना शुरू किया कि कैसे पिछली रात को वह अपने बाड़े तक यह देखने के लिए गया कि वह मोढा जो वहां मवेशियों की रखवाली के लिए रखा गया था, वहां मौजूद भी था या नहीं, क्योंकि उस साले का एक चमारिन से याराना था। मौका पाकर रातों को उधर भी खिसक जाया करता था।

"तुम अकेले थे या और भी कोई साथ था?"

"नहीं जी अकेला कैसे? मेरे साथ गुलागर, मेनू और मक्खू भी तो थे।"

"ये सब से तुम्हारे साथ थे?"

"पातशाहो! ये तो हर रोज मेरे साथ होते हैं। खाने-पीने से छुट्टी पाकर कभी ये मेरे पास आ जाते हैं और कभी मैं इनके पास चला जाता हूं, गप उड़ाने के लिए।"

"अच्छा-अच्छा, फिर क्या हुआ?"

"फिर शहंशाहो! अभी हम बाड़े से दूर ही थे कि धायं-धायं दो बार बन्दूक चलने की आवाज सुनाई दी। हम तो वहीं डर के मारे खेतों में छिप गए..."

"अच्छा ! तो तुम डर गए ?" खां साहब ने पूछा क्योंकि शक्ल ही से मौला उन आदमियों में से दिखाई देता था, जिन्हें डर कभी छूता भी नहीं।

"आहो जी ! हम डर गए।"

"अच्छा, फिर।"

"इतने में यह निक्का मान्हों गांव की तरफ भागता दिखाई दिया।"

खां साहब ने स्वीकारात्मक ढंग से यों सिर हिलाया, मानो वे इस मामले की तह तक पहुंच गए हों, "फिर ?"

"फिर जी, हम वाड़े की तरफ बढ़े। रास्ते में इन्हींके खेत पड़ते हैं। वहां हमें सफेद-सफेद चीज़ दिखाई दी। हम डरते-डरते पास पहुंचे तो देखा कि मेरा बैल मरा पड़ा है। मैंने तो सिर पीट लिया और नज़दीक से देखा तो गोलियों के निशान दिखाई दिए।"

थानेदार साहब ने मौला से अनेक प्रश्न किए। फिर मेलू, सौदागर और लभ्भू से जिरह की गई।

"अच्छा तो सौदागर ! तुमने अच्छी तरह पहचान लिया था कि वह रामलाल का बेटा हीरालाल ही था।"

"आहो जी !"

इसी तरह सबने अलग-अलग इस बात की पुष्टि की। अब खां साहब फिर हीरालाल की ओर आकृष्ट हुए—"देखो हीरा ! सच-सच बता दो कि आखिर बात क्या है, नहीं तो याद रखो कि मैं मुजरिमों का बहुत सख्त दुश्मन हूं। थाने पहुंचकर दो कानों के बीच सिर कर दूंगा तुम्हारा..."

अब हीरालाल ताव में आने के मूड में नहीं था। अभी पहली मार से ही उसकी नाक जल रही थी और होंठों पर सूजन आ गई थी। उसने धीमे स्वर में कहा—"यह इल्ज़ाम बेबुनियाद है। मैं तो खाना खाकर घर से बाहर तक नहीं निकला।"

खां साहब ने उसके बाप की ओर देखकर कहा—"लाला ! तुम्हारा लौंडा ज़रा कड़ा दाना मालूम होता है। लेकिन हमारा काम भी भूले-भटकों को रास्ते पर लाना है। समझा लो अपने बेटे को, नहीं तो एक

गर मैंने हाथ उठा दिया तो पहचान नही पाओगे कि इसका सिर किधर को था और मुंह किधर को।"

रामलाल मुकदमेबाजी से तंग आ चुका था। हाथ जोड़कर बोला—"खां साहब! अभी लड़का ही तो है। शायद'''मैं बैल की कीमत देने को तैयार हूं।"

"बैल की कीमत!" मौला ने चिल्लाकर कहा—"गरीब के बैल की जान ऐसी सस्ती नही होती कि जब जी चाहा मार दिया और फिर पैसे की धौंस जमाने लगे।"

खां साहब बोले—"चुप रहो जी तुम। बकवास बन्द करो।"

"नहीं सरकार! मेरी क्या मजाल है?" मौला हाथ जोड़कर अलग खड़ा हो गया।

"अच्छा लाला! अपनी बन्दूक तो मंगवाओ जरा।"

बन्दूक हाजिर की गई।

हीरा बोला—"देखिए, बन्दूक की नाली में ग्रीस लगाकर मैंने अलग रख छोड़ी थी।"

खां साहब ने हीरा की तरफ घूमकर देखा और जोर से सिर हिलाकर बोले—"सब समझता हूं। यह ग्रीस तो आज ही की लगी मालूम होती है।"

थोड़ी देर तक बन्दूक का निरीक्षण किया गया। फिर उन्होंने सिपाही से कहा—"अजैबसिंह! कागज लाओ तो बन्दूक की रसीद लिख दूं।"

इसके बाद सबके बयान पूरे किए गए और फिर थानेदार ने कहा—"बन्दूक थाने में जमा होगी। बेटा हीरा! चलो थाने, फिर देखो कि मैं हीरा का घटेरा कैसे बनाता हूं।"

रामलाल बेटे के लिए बड़ा परेशान था। हाथ बांधकर बोला—"खां साहब, दया कीजिए। मैं बैल की कीमत और जुर्माना देने को तैयार हूं।"

"ये तो बाद की बातें हैं'''मालूम होता है कि तुम्हारी जेब में रुपये उछल रहे हैं लाला!"

रामलाल ने मुश्किल से थूक निगलते हुए पूछा—"क्या ज़मानत नहीं हो सकती ?"

"यह सब थाने पहुंचकर तय होगा।"

यह कहकर खां साहब घोड़े पर सवार हो गए। जब वे हीरा को लेकर चलने लगे तो रामलाल की आंखों में आंसू आ गए। वह जानता था कि लड़के ने जोश में आकर गुस्ताखी की है, इसलिए उसकी कुशल नहीं। कुछ सोचकर आगे बढ़ा और हाथ जोड़कर बोला—"खां साहब, एक बात कहूं।"

खां साहब ने घोड़ा रोक लिया।

"बात यह है कि मौला के बैल को गोली मैंने मारी थी।"

खां साहब ने हंसकर घोड़े को एड़ लगाई और बोले—"लाला! लड़के को बचाने के लिए झूठ बोल रहे हो। ज़रा गवाहों से तो पूछो। हम तो कानून के बन्दे हैं।"

जब थानेदार साहब उन सबकी दृष्टि से ओझल हो गए और बन्दूक भी अपने साथ ले गए तो मौला ने भी अपने घर की ड्योढ़ी में पहुंचकर पहले आकाश की ओर देखा और फिर भारी स्वर में बोला—"या मौला!" इसके बाद सौदागर को सम्बोधित कर उसने कहा—"देख वे सुदागर! घोड़ी पर सवार होकर सीधा भंवोड़ी चला जा और बग्गासिंह से कह दे कि धांय-धांय बोलने वाली चिड़िया पिंजड़े में बन्द हो गई है।"

अभी सूरज ढल ही रहा था कि एकदम इस ज़ोर की आंधी उठी कि ज़मीन से आसमान तक धुआंधार हो गया। ऐसा लगता था, मानो पृथ्वी की छाती फट गई है और चारों ओर के बादल गगनचुम्बी पहाड़ों की तरह झूम-झूमकर उठ खड़े हुए हैं। और धूल का यह समुद्र घास-फूस और मिट्टी को उड़ाता, उमड़ता चला आ रहा है।···सूर्य अकस्मात् छिप गया। चारों ओर धुन्ध फिर अन्धकार बढ़ने लगा और धुंधले आकाश में आनेवाली आंधी का समाचार देनेवाले चीलों के झुंड भी इस असाधारण धुंधलाहट में विलीन हो गए।

लकड़ी के बने हुए भारी-भारी चरखड़ो वाले रहट के ऊपर छाए हुए कुनाह के पेड़ो के झुंड मे से कपूरासिंह ठट्टे वाला एक आग उगलती थूथनी वाली सिर से पाव तक काली और मजबूत घोडी पर सवार बाहर निकला। उसने पहले पीर का टट्टा की ओर देखा और फिर दूर-दूर तक फैले हुए खेतों पर निगाह दौडाई। किन्तु उसकी दृष्टि दूर तक नहीं जा सकी क्योंकि आधी प्रति क्षण बढती आ रही थी। खेतो की फसलें धूमिल वायु के आगमन से एक बडे तालाब के मैले गदले पानी की भांति हिलोरें लेती दीख रही थी।

कपूरा ठट्टे वाला, जिसे आमतौर से लोग काला तीतर कहते थे, अपने गाव से निकाल दिया गया था। कई वर्ष से उसने गाव मे प्रवेश करने का साहस नही किया था। किन्तु एक सप्ताह पूर्व वह चोरी छिपे अपनी बहन से मिलने के लिए गया। केवल एक रात रहकर और यह मालूम करके कि ससुराल मे लाए हुए गहने कहा पर रखती है, वह चुप-चाप लौट आया था। आज उन गहनों और उनके साथ अडोस-पड़ोस वालो पर हाथ साफ करने का उसने निश्चय किया था।

उस विशालकाय पुरुष का रग काला भुजग था, कुटिलता और धूर्तता नस-नस में भरी हुई थी। उसका हृदय दयाहीन और स्वभाव क्रूर था।

अभी वह दूर-दूर तक दृष्टि दौड़ा ही रहा था कि खेतों मे कुछ पर-छाइया दिखाई पड़ी जो उसकी ओर बढ़ रही थी।

आंधी का वेग बढने लगा।

गाव के चारों ओर फैली हुई धूल पर पहले तो हल्की गर्द की चादरें लहलहाई, फिर भारी गर्द ऊपर को उठने लगी और तालाब के पानी की सरसराते हुए सापों की तरह नन्ही-नन्ही लहरें करवटें लेने लगी। तोते, चीलें तथा अन्य घरेलू पक्षी पीपल और धरेक के पेड़ो मे दुबक गए।

खेत-खेत चलते हुए वे आदमी जब निकट पहुचे तो कपूरे ने उन्हें पहचान लिया। आगे-आगे मौला था और उसके पीछे-पीछे सौदागर, लभू तथा मेलासिंह।

उन्हें देखते ही कपूरा कठोर स्वर मे बोला—"तुम लोग कहा थे?"

"यही तो थे।" सौदागर ने हसकर जवाब दिया।

कपूरे को सौदागर की हंसी बिल्कुल पसन्द न आई। उसने उसकी ओर कड़ी दृष्टि से देखा। वह स्वयं बहुत कम हंसता था। प्रकट तो यह होता था कि वह सौदागर के मुंह पर उल्टे हाथ का झापड़ देगा, किन्तु फिर खून का घूंट पीकर रह गया और मौला से बोला—"मौला !"

"हूं।"

"सब ठीक ?"

"हम तो सब ठीक ही हैं···तैयारी तो तुम्हारी होनी चाहिए।"

उसे मौला की हाज़िर जवाबी भी पसन्द नहीं आई। लेकिन उस समय गुस्से का मौका नहीं था। और कुछ नहीं तो डाके का मामला चौपट हो जाने का डर था। फिर भी उसने कटु स्वर में कहा—"हमारी तैयारी से तुम्हारा मतलब ! तुम अपनी कहो।"

"हमारा काम तो कभी का हो चुका। गांव में एक बन्दूक थी सो अब थाने में है।"

"किसी तरफ से कोई बात निकली तो नहीं ?"

"नहीं।"

"कोई अफवाह ? शक-शुबहा ?"

"कुछ नहीं।"

कपूरे की घोड़ी शायद आंधी में कई प्रकार की गंध पाकर बेचैन हो-होकर बिदकती और बेचैनी से जमीन पर दुम झाड़ती थी। किन्तु वह उसपर खूब जमकर बैठा था।

अन्धकार क्षण प्रति क्षण बढ़ता जा रहा था। कपूरे की दाढ़ी के लोहे की तारों के समान कड़े बाल लहराने लगे। खेतों से भागकर लोग-बाग अपने-अपने घरों में घुस गए थे। चोर प्रसन्न थे। आज भगवान् भी उनकी सहायता करने पर तुले थे।

उन्हें कई साथियों का इन्तजार था, जो दूर-दूर अर्थात् पटियाले तक से आने वाले थे। कपूरे ने सोचा कि यदि आंधी का यही हाल रहा तो उन्हें अपनी कार्यवाही जल्दी शुरू करनी होगी।

कपूरा बोला—"अच्छा, अब मैं चलता हूं।'

"अभी बाकी लोग तो नहीं आए होंगे ?'

"आ गए होंगे । चलकर देखता हूं । तुम लोगों को खोजने में मेरा बहुत समय खराब हुआ ।"

"हम तुम्हें देखते रहे । तुम कहीं दिखाई ही नहीं दिए ।"

"रहट पर मिलने का वादा था । मैं सीधा इसी जगह पहुंच गया था ।"

"पहले हम भी रहट पर गए थे । फिर हम खेतों में चले गए ।"

"क्यों ?"

"हमने सोचा कि कहीं रहट पर हमें कोई साथ-साथ देख न ले ।"

"यह अच्छी हरकत की तुमने । इस प्रकार की बुद्धिमानी करोगे तो आप भी फसोगे और हमें भी फसाओगे ।"

मौला बोला—"अच्छा जो होना था, सो हो गया । हम अपनी जगह से तुम्हें देखने की कोशिश करते रहे पर आंधी के कारण तुम दिखाई नहीं दिए···भई ! आगे को ख्याल रखेंगे । ऐसी गलती नहीं होगी ।"

इसपर कपूरा खुश हो गया ।

"देखो, हम आकर पहले इसी जगह रुकेंगे । अगर कोई ऐसी-वैसी बात हो तो हमें खबर कर देना ।"

"अच्छी बात है ।"

"मौला ! तुम्हारा घर तो बिल्कुल सामने पड़ता है ?"

"आहो !"

"तो फिर ज़रा निगाह रखना जिससे कि जब हम यहां पहुंचें तो तुममें से एक आदमी हमें यहां आकर मिले । समझे ?"

"लेकिन आंधी बढ़ती जा रही है । न जाने कब तक इसका ज़ोर रहे । थोड़ी देर में हाथ तक न सुझाई देगा । तुम लोग इतनी दूर से कैसे दिखाई दे सकते हो ?"

कपूरे ने कुछ सोचा फिर बोला—"यह भी ठीक है पर अब करें क्या ?"

"तुम यह बताओ कि सबको लेकर कबतक लौटोगे ?"

कपूरे ने तनिक सोचने के बाद उत्तर दिया—"भई पटियाले और जीन्द तक से जवान [illegible] हैं, अगर सब पहुंच गए तो हम एक घण्टे

अब रात भीगने का इन्तजार तो करेंगे नहीं हम।

अंधेरा छा जाएगा कि बस तबीयत खुश हो जाएगी।"

बला।"

पूरे ने घोड़े को एड़ दी और बवंडर की-सी तेजी के

धुंधलाती हुई झाड़ियों में विलीन हो गया।

तने भी न पाया था कि पीर का ठट्टा पर ऐसा घोर

कि पहले कभी देखने में नहीं आया था।

उसके साथी घोड़ों तथा सांडनियों पर सवार अन्धाधुंध

तीव्र वायु मानो उनके कपड़े नोचकर उनके शरीर से

हती थी। उनकी दाढ़ियां और मूंछें धूल से अट गई

लकें एक-दूसरी से चिपकी जा रही थीं। यदि कपूरा

न करता तो वे कभी रास्ता न खोज पाते।

मुसलमान और सिख सभी लोग शामिल थे। उनके

इफलें थीं जिनकी नलियों के मुंह उन्होंने कपड़े की डाटों

थे जिससे कि धूल भीतर न जाने पाए। लारी के स्टिय-

की एक बन्दूक भी थी। इनके अतिरिक्त उन सबके पास

ाठियां और जफाजंग भी थे।

र से पीर का ठट्टा मरे हुए भैंसे के समान दीख रहा

र सन्त दतारसिंह जी की टूटी हुई समाधि की ऊंची

ग खड़े हुए दैत्य के समान दीख रही थीं। जर्जर दीवार

पानी की एक खाई थी जिसकी सतह पर हरे रंग की

और दीवार की दरारों में जंगली बेलें लटक आई थीं

यां पानी की सतह को चूमा करती थीं।

ागर को कपूरे के आदेशानुसार मौके पर भेज दिया था।

सौदागर रेत के टीले की ओर [illegible]

सिर दोनो घुटनो में बीच दाब बैठा था। [illegible]

आगे एक छोटा-सा छेद बना छोड़ दिया [illegible]

दिखाई दे सकता था। [illegible]

मे घोड़ों के सुमों की टपाटप और [illegible]

आई तो उसने चौकन्ना होकर गर्दन [illegible]

काने मे उसके सिर पर थ।

इस अधकार मे छवियों की मन्द-मन्द चमक [illegible]
दौड़ रही थी।

आधी के शोर मे आवाज गूजी—"कौन ?"

"सुदागर !" सौदागर ने जल्दी मे जवाब दिया। [illegible] कहीं उत्तर देने मे देर हो और उसका सिर छवि के [illegible] कर अलग जा गिरे।

"सुदागर कौन ?"

अब सौदागर के हाथ-पाव फूल गए। चिल्लाकर बोला—"ओए मै सुदागर टट्टू वाला। कपूरा किथे ए ?"

उसी समय कपूरे की घोड़ी मचलकर आगे बढ़ी—"सुदागर !"

"हाव कपूरिया !"

"ओए अपना ही मुण्डा।" कपूरे ने साथियों से कहा। फिर सौदागर को सम्बोधित कर पूछा—"सौला भी है ?"

"नही, वह घर पर है।"

"बाकी सब ठीक है ?"

"सब ठीक-ठाक है।"

इस बीच मे धूल-भरी हवा तूफानी वेग से बहती रही। घोड़े तथा साडनियां बेचैनी से नाचती रही।

नवागन्तुक डाकुओं ने कुछ क्षण आपस मे विचार विनिमय किया और फिर कपूरा सौदागर से बोला—"सुदागर बच्चू ! अब हमें रहट की तरफ से ले चलो।"

सौदागर कुछ कहे बिना उठा और रहट की ओर चल पड़ा। वे सब

उसके पीछे-पीछे हो लिए।

कपूरे ने रहट के निकट पहुंचकर कहा—"सौदागर! तबेला तो खाली है।"

"हाव, बिल्कुल खाली है।"

"ऐसा न हो कि कोई बाहर का आदमी घुसा हो।"

"अरे नहीं।"

रहट पर पहुंचकर वे घोड़ों और सांडनियों से नीचे उतरे। जानवर को तबेले में बन्द करके सौदागर को रखवाली [illegible] छोड़ दिया अ स्वयं सारे साज सामान सहित गांव की ओर च

मौला के घर का द्वार अधखुला था। उसने तख्तों को एक जगह जमा दिया था और वह हुक्का पी रहा था। मेलासिंह अलग बैठा दाढ़ी

उन्होंने दरवाज़े में से डाकुओं के गिरोह को पा पास आ गए तब उन्होंने देखा कि उनमें सबके-सब तिरछे शामिल थे।

मौला तहमद झाड़कर उठ खड़ा हुआ और बोला—"

"साब सलामत एजी?" दबे-दबे मिले-जुले स्वर सुन।

मौला बढ़कर ड्योढ़ी तक गया। उसने देखा कि उस आगे भांति-भांति की आकृतियां खड़ी हैं। उन्होंने पगड़ियों के कर चेहरे ढांप रखे थे। सिवाय आंखों के उनके चेहरों का दिखाई नहीं पड़ता था। उनके शरीर नंगे थे और सरसों के तेल के न केवल चमक रहे थे बल्कि तेल की हल्की-हल्की गंध भी फैल र

मौला ने गिरी हुई लम्बी मूंछों पर उंगलियां फेरते हुए "आज ता अल्लाह दा बड़ा फजल है जी।"

"हाव।"

मौला ने कपूरे की नंगी पीठ पर हाथ रखकर कहा—"आमा! पानी-पूनी पी लो सारे।"

कपूरे ने सिर को नकारात्मक ढंग से हिलाते हुए कहा—"नहीं भई! वक्त घट ए। पानी-पूनी की बात छड़।"

मौला ने इधर-उधर देखा

"जारो ! सवारी बिना आ गए ओ ।"

"नई, घोड़े-डाचिया तबेले में छोड़ आया हूं ।"

"पर यार ! घोड़े कुछ नजीक रखो । भागन समय जरूरत पड़ेगी··· और फिर कपूरिया ! तुम्हें किसीने पहचान लिया तो आफत ही आ जाएगी । अपनी घोड़ी बहुत नजीक रखना ।"

कपूरे को मौला की बात पसन्द आई । उसने मुस्कराकर एक साथी के कान में कुछ कहा और वह 'हाव' कहकर तबेले की ओर रवाना हो गया ।

"मौलिया ! अब देर मत करो ।" कपूरे ने मौला से कहा—"बस, चलो । ऐसा मौका फिर कभी हाथ नहीं आएगा ।"

"बहुत अच्छा ।"

मौला ने फूंक मारकर दिया बुझाया तो उसकी लम्बी-लम्बी मूछें फड़कीं ।

अब वे एक लम्बी पंक्ति के रूप में एक-दूसरे के साथ लगे-लगे बढ़ने लगे ।

भीवर के डेरों, पोखरों और अरहटियों के निकट से होते हुए वे गली में घुस गए ।

आंधी के कारण भयानक शोर उत्पन्न हो रहा था । ऐसे अवसर पर कुत्ते भी तन्दूरों में दुबके हुए थे । एकाएक दबे स्वर में भौंका भी तो उसकी आवाज आंधी के शोर में दबकर रह गई ।

उनकी राइफलें भरी हुई थीं । उन सबके हथियार बिल्कुल तैयार थे । प्रत्येक महत्त्वपूर्ण मोड़ पर कपूरा एक आदमी खड़ा कर देता ।

मौला की अभी तक बग्गासिंह से कोई बात नहीं हुई थी । बग्गा बहुत कम बोलता था । मौला यह बात जानता था इसलिए उसने भी कोई बात नहीं की । वह बग्गे के साथ-साथ चला जा रहा था । बग्गा ताड़ की तरह लम्बा था । उसकी आंखें भीतर की ओर धंसी हुई थीं किन्तु उनमें हिंसक पशु की आंखों की-सी चमक और जिज्ञासा थी । वही उन सबका सरदार था ।

उसके पीछे-पीछे हो लिए।

कपूरे ने रहट के निकट पहुंचकर कहा—"सौदागर! तबेला तो खाली है।"

"हाव, बिल्कुल खाली है।"

"ऐसा न हो कि कोई बाहर का आदमी घुसा हो।"

"अरे नहीं।"

रहट पर पहुंचकर वे घोड़ों और सांडनियों से नीचे उतरे। जानवरों को तबेले में बन्द करके सौदागर को रखवाली के लिए छोड़ दिया और स्वयं सारे साज सामान सहित गांव की ओर बढ़े।

मौला के घर का द्वार अधखुला था। उसने दरवाज़े में ईंट फंसाकर तख्तों को एक जगह जमा दिया था और वह स्वयं लभ्भू के साथ बैठा हुक्का पी रहा था। मेलासिंह अलग बैठा दाढ़ी कुरेद रहा था।

उन्होंने दरवाज़े में से डाकुओं के गिरोह को पहचान लिया। जब वे पास आ गए तब उन्होंने देखा कि उनमें सबके-सब मज़बूत और लम्बे तिरछे शामिल थे।

मौला तहमद झाड़कर उठ खड़ा हुआ और बोला—"साब सलामत।"

"साब सलामत एजी?" दबे-दबे मिले-जुले स्वर सुनाई पड़े।

मौला बढ़कर ड्योढ़ी तक गया। उसने देखा कि उसके दरवाजे के आगे भांति-भांति की आकृतियां खड़ी हैं। उन्होंने पगड़ियों के शमले घुमाकर चेहरे ढांप रखे थे। सिवाय आंखों के उनके चेहरों का कोई भाग दिखाई नहीं पड़ता था। उनके शरीर नंगे थे और सरसों के तेल के कारण न केवल चमक रहे थे बल्कि तेल की हल्की-हल्की गंध भी फैल रही थी।

मौला ने गिरी हुई लम्बी मूंछों पर उंगलियां फेरते हुए कहा—"आज ता अल्लाह दा बड़ा फजल है जी।"

"हाव।"

मौला ने कपूरे की नंगी पीठ पर हाथ रखकर कहा—"आमा! पानी-पूनी पी लो सारे।"

कपूरे ने सिर को नकारात्मक ढंग से हिलाते हुए कहा—"नहीं भई! वक्त घट ए। पानी-पूनी की बात छड़।"

मौला ने इधर-उधर देखा

"जारो ! सवारी बिना आ गए ओ ।"

"नहीं, घोड़े-टाविया तबेले में छोड़ आया हूं ।"

"पर यार ! घोड़े कुछ नजीक रखो । भागते समय जरूरत पड़ेगी... और फिर कपूरिया ! तुम्हें किसीने पहचान लिया तो आफत ही आ जाएगी । अपनी घोड़ी बहुत नजीक रखना ।"

कपूरे को मौला की बात पसन्द आई । उसने मुस्कुराकर एक के कान में कुछ कहा और वह 'हाव' कहकर तबेले की ओर गया ।

"मौलिया ! अब देर मत करो ।" कपूरे ने मौला से कहा—"चलो । ऐसा मौका फिर कभी हाथ नहीं आएगा ।"

"बहुत अच्छा ।"

मौला ने फूंक मारकर दिया बुझाया तो उसकी लम्बी-लम्बी मूछें फड़की ।

अब वे एक लम्बी पंक्ति के रूप में एक-दूसरे के साथ लगे-लगे चलने लगे ।

गोबर के ढेरों, पोखरों और अरूड़ियों के निकट से होते हुए वे गली में घुस गए ।

आंधी के कारण भयानक शोर उत्पन्न हो रहा था । ऐसे अवसर पर कुत्ते भी तन्दूरों में दुबके हुए थे । एकाएक दबे स्वर में भौंका भी तो उसकी आवाज आंधी के शोर में दबकर रह गई ।

उनकी राइफलें भरी हुई थीं । उन सबके हथियार बिल्कुल तैयार थे । प्रत्येक महत्त्वपूर्ण मोड़ पर कपूरा एक आदमी खड़ा कर देता ।

मौला की अभी तक बग्गासिंह से कोई बात नहीं हुई थी । बग्गा बहुत कम बोलता था । मौला यह बात जानता था इसलिए उसने भी कोई बात नहीं की । वह बग्गे के साथ-साथ चला जा रहा था । बग्गा ताड़ की तरह लम्बा था । उसकी आखें भीतर की ओर धंसी हुई थीं किन्तु उनमें हिंसक पशु की आंखों की-सी चमक और जिज्ञासा थी । वही उन सबका सरदार था ।

डाकू लम्बे कनखजूरे की भांति दीवारों से लगे-लगे बढ़ रहे थे।

बग्गे ने मौला से पूछा—"मकान है कहां?"

"गांव के बीचों-बीच!"

यह सुनकर बग्गे के माथे पर बल पड़ गए। उसने दबे स्वर में कहा—"यदि लोग-बाग जाग पड़े तो इस अंधियारी और आंधी में गांव से बाहर निकलने के लिए बड़ी सावधानी और होशियारी की जरूरत पड़ेगी।"

मौला ने तनिक बेपरवाही से कहा—"ओए आ! तुम लोगों के सामने कौन टिका रह सकेगा। चाहे सौ आदमियों से भी टक्कर क्यों न हो जाए।"

बग्गे पर मौला की इस बात का कोई विशेष प्रभाव नहीं पड़ा। वह जानता था कि वे लोग गांव वालों का भली-भांति मुकाबला कर सकते हैं किन्तु वह एक छटा हुआ अनुभवी डाकू था। उस समय सवाल मुकाबला कर सकने या न कर सकने का नहीं था। बल्कि असल सवाल यह था कि गिरोह का हर आदमी बचकर निकलना चाहिए, नहीं तो एकाध भी पुलिस के हत्थे पर चढ़ गया तो सारे गिरोह पर आफत आ जाएगी। इतनी तीव्र आंधी, अंधियारी और शोर में यह सारा काम कुशलतापूर्वक पूरा हो जाना उतना सरल नहीं था जितना कि मौला को लग रहा था।

सहसा बग्गू एक ओर रुक गया और उसके पीछे सबके सब डाकू रुक गए।

अन्धकार में सामने से उन्हें एक बहुत ही काली छाया दिखाई पड़ी। लगता था कि कोई आदमी जल्दी-जल्दी कदम उठाता बढ़ा चला आ रहा है।

वे सब पलक झपकते में दीवार की छाया से लगकर खड़े हो गए।

वह व्यक्ति शरीर पर काली चादर लपेटे तेजी से बढ़ता आ रहा था। क्षण-प्रतिक्षण वह उनके निकट पहुंच रहा था।

डाकू दम साधे खड़े थे। संयोग से उस दीवार पर एक छज्जा बढ़ा हुआ था इसलिए वे बिल्कुल अंधेरे में खड़े थे। यों आसानी से पास

मरा हुआ आदमी भी दिखाई नहीं देता था। यह तो केवल बगू की पैनी दृष्टि ने ही आगन्तुक को आते देख पाया था।

कुछ क्षणों के बाद वह व्यक्ति उनके पास से गुज़रने लगा। उस बेचारे को इस बात का तनिक भी पता नहीं था कि वह हथियारबन्द डाकुओं की छवियों के साये के नीचे से गुज़र रहा है। यदि कहीं उसके मुंह से चूं की आवाज़ निकल जाती तो उसका सिर तन से जुदा हो जाता।

डाकू एकदम सांस रोके खड़े थे। वे उस पतले-दुबले से आदमी की छाया को अपने पास से गुज़रते देख रहे थे। आखिर वह उनसे आगे बढ़ गया। उसके जाने के बाद सबने इत्मीनान की सांस ली क्योंकि वे उस समय खून-खराबा नहीं करना चाहते थे। यदि कहीं उसकी बहुत तेज़ चीख निकल जाती और उस चीख को सुनकर गांव में शोर मच जाता तो उन्हें खाली हाथ वापस भागना पड़ता।

गांव के अन्दर वाले चौराहे पर पहुंचे तो देखा कि ऊंचे चबूतरे वाले बड़े कुएं की मुंडेर पर पानी निकालने की ऊंची-ऊंची चर्खड़ियां सिर झुकाए उदास मुद्रा में खड़ी हैं। और उन चर्खड़ियों के चरणों में ऊबड़-खाबड़ पेंदे वाले लोहे के डोलने हवा के ज़ोर से हिल-हिलकर एक शोर-सा उत्पन्न कर रहे थे और चबूतरे के निकट खड़े पेड़ मानो उन्हें रोष-पूर्ण दृष्टि से देख रहे थे।

वे सब तुरन्त पेड़ों के झुण्ड के नीचे चले गए जिससे कि आपस में सलाह कर लें।

कपूरे ने घूम-घूमकर सबकी संख्या मालूम की फिर सन्तुष्ट होकर कहा—"इस जगह कम से कम तीन जवान खड़े रहने चाहिए।"

"वह क्यों ?" उनमें से एक ने जो लुधियाने के इलाके का ज़रा हथछुट जवान था, आपत्ति की।

कपूरे को उसका यह सवाल पसन्द नहीं आया। उसने माथे पर गहरे बल डालकर उसकी ओर देखा और अपने दृष्टिकोण को स्पष्ट करने लगा।

"इस जगह से सिर्फ एक तंग गली आगे को जाती है जो मकानों

के अन्दर ही खत्म हो जाती है। हमारे भाग निकलने का सिर्फ यही एक रास्ता है।

"ओए, अपने को इसकी परवाह नई। अपना कौन मुकाबला कर सकता है?" नवयुवक ने बाज़ू हवा में लहराकर बेपरवाही से उच्च स्वर में कहा।

अब तो कपूरे का जी चाहा कि उसकी गर्दन मरोड़कर रख दे। उसके ये तेवर देखकर नौजवान भी बिफरने लगा। नौजवान मज़बूत और जोशीला ही सही किन्तु कपूरे के मुकाबले में खड़ा होना तो सरासर उसकी मूर्खता थी।

शायद उनके दो-दो हाथ हो भी जाते किन्तु बग्गे ने युवक को आंख दिखाई तो वह ठण्डा पड़ गया। फिर बग्गा कपूरे को सम्बोधित कर बोला—"हां तो क्या कह रहे हो तुम?"

"उधर जो तंग गली तुम देख रहे हो उसीके अन्दर हमें जाना है। वह मकान, जिसपर हमारी नज़र है, किले के समान मज़बूत और सुरक्षित है। पहले तो वहां पहुंचने का किसी डाकू को आज तक साहस ही नहीं हुआ। हमारी यह पहली चढ़ाई है। यदि हम वहीं कहीं घिर गए तो बड़ी कठिनाई का सामना करना पड़ेगा। हमारी भलाई इसीमें है कि हम यहां से सबके सब सही सलामत निकल जाएं···सिर्फ यही एक खुली जगह है। खतरे के मौके पर हमारा एक आदमी तुरन्त गली के अन्दर आकर हमें खबर कर सकता है। हमारी यह कोशिश होनी चाहिए कि पहले तो हमें मुकाबला करना ही न पड़े लेकिन यदि ऐसा हो भी तो यहीं खुली जगह में हो।"

बग्गे ने समर्थन में सिर हिलाया।

कपूरे ने फिर कहना शुरू किया—"यह आंधी हमारी सहायता भी कर सकती है और नुकसान भी। यदि कोई गड़बड़ हो गई तो इस हुल्लड़बाज़ी, आंधी और अंधेरे में हम अपने साथियों की गिनती भी नहीं कर पाएंगे।"

बग्गा उसके एक-एक शब्द से सहमत था।

अतएव तीन आदमी वहां पर छोड़कर वे लोग आगे बढ़े।

नग गली में पहुंचकर उन्हें ऐसा अनुभव हुआ मानो वे कब्र में हों। आंधी और हवा का ज़ोर कम था किन्तु इस गजब का शोर था कि कानों के पर्दे फटे जाते थे।

महगा वग्गा एकदम रुक गया। उसके साथ ही सबके कदम रुक गए और वे अपनी थुथनियां उसके करीब ले आए जिससे कि उसकी बात सुन सकें।

वग्गे ने साहगी की ओर देखकर पूछा—"बांस नहीं लाए ?"

"अरे ! वे तो भूल गए !"

"वाह ! ओह भैया' 'तो क्या अब' ' 'के सहारे चढ़ोगे छत पर ?"

"बांस कौन दूर है ? मौला के घर ही से तो लाना है। भेलू, जा तू भाग के जा और मौलू की ड्योढ़ी के भीतर आंगन के कोने में एक लम्बा बांस धरा होगा' ' 'बस उठाकर तुरन्त वापस आना' '।"

भेलू ने थुथनी घुमाई और नाक की सीध में लम्बे-लम्बे डग भरता हुआ चल दिया।

वे सब फिर आगे बढ़े। कुछ दूर जाकर गली बायें हाथ को घूम गई थी। मोड़ से कुछ कदम आगे दाहिने हाथ को एक अधूरा मकान था जिसकी नींव भरने के बाद न जाने उसे क्यों छोड़ दिया गया था। अब वहां बड़े-बड़े सूखे झाड़ और मनछटी (कपास की छड़ियां) के अम्बार अगले मकान की दीवार के साथ टिके हुए थे। जब किसी कुतिया को बच्चे जनने होते तो वह चीखती, कराहती, यहीं आकर शरण लेती। एक कोने में भड़भूजे का चूल्हा था, जिसमें उस समय बालू भरी थी।

वहां रुककर उन्होंने उस मकान के पिछवाड़े का निरीक्षण किया जिसके अन्दर उन्हें सबसे पहले घुसना था।

छत से परे बिजली चमक-चमककर आंखें दिखा रही थी। घनघोर घटाएं अपने काले आंचल लहराती असीम सेना की भांति आकाश के विस्तार में फैलने लगीं। आंधी के वेग में कमी तो न आई थी किन्तु हवा में पहली-सी धूल बाकी न रही थी।

कपूरे के द्वारे पर वे फिर रुक गए। उनकी दाढ़ियां फिर एक दूसरे के निकट आईं। उसने कहा—"सब लोग यहीं पर रुकें। मैं वग्गे

को लेकर मकानों की अगली तरफ से देख लूं ज़रा।"

वे दोनों कुछ ही कदम पर पहुंचकर उन सबकी दृष्टि से ओझल हो गए।

सांहसी ने मकान की ओर देखा और फिर मन ही मन अनुमान लगाने लगा कि उसपर बांस की सहायता से चढ़ना सम्भव भी है या नहीं। उनमें से एक बोला—"भऊ! मकान ज़रा ऊंचा मालूम होता है।"

"हां, है तो।"

"अगर तुम बांस के ज़ोर से फांदकर उसपर न चढ़ सके तो इधर-उधर से ऊपर जाने का कोई रास्ता या सहारा भी तो नहीं दिखाई देता। फिर तो आगे वाले दरवाज़े से ही जाना पड़ेगा।"

सांहसी चुपचाप दांतों तले मूंछ का एक सिरा चबाता रहा। फिर यों बोला मानो अपने-आप ही को सम्बोधित कर रहा हो—"मैं आगे बढ़कर दीवार के नीचे से अन्दाज़ा लगा सकता हूं।"

यह कहकर वह आगे बढ़ा और दीवार के निकट पहुंचकर मनछरी के एक ढेर के पीछे गुम हो गया।

कुछ क्षण बाद बग्गा और कपूरा भी वापस आ गए। बग्गा बोला—"पहले तो कपूरे की बहन पर हाथ साफ करना होगा, इसके बाद पड़ोस के कुछ घर भी अच्छे हैं। उनपर भी जल्दी से हाथ फेर दिया जाए··· अपना सांहसी यार किधर गया?"

"वह दीवार की ओर गया है, आता ही होगा। अंधेरे में उसे भी कुछ सूझ नहीं रहा है।"

कुछ क्षणों के पश्चात् सांहसी आ गया।

उसे देखते ही बग्गे ने कहा—"मकान तो ऊंचा है भऊ!"

"हां भऊ!" सांहसी ने फिर एक बार मकान पर दृष्टि दौड़ाई और फिर तनिक व्यग्रता से हाथ मलने लगा। शायद उसके हाथ बांस पकड़ने के लिए बेचैन हो रहे थे।

"फिर?" बग्गे ने सवाल किया।

सांहसी ने उसकी ओर देखे बिना उत्तर दिया—"कोशिश करने में

क्या हानि है ?"

बग्गा को उसके जवाब से सन्तोष नहीं हुआ किन्तु उस समय इसके सिवा और कोई उपाय भी तो नहीं था।

इतने में भैलू हाथ में लम्बा बास लिए इस प्रकार चलता हुआ आया मानो बड़ी दिलेरी का काम करके आ रहा हो।

साहसी ने बढ़कर बास थाम लिया। पहले लचका-लचकाकर उसकी मजबूती का अनुमान किया और रास्ता टटोल-टटोलकर आगे बढ़ा और फिर उसने मकान की छत की ओर निगाह दौड़ाई। मटियाले आकाश पर काले बादल गदले धब्बों के समान दीख रहे थे।

अब सांहसी ने अपनी कमर में एक लम्बा रस्सा लपेटा और जमीन पर हाथ मारकर दो ढेले कमरबन्द में ठूस लिये और सिर घुमाकर मन्द स्वर में साथियों से कहा—"अच्छा अब मैं कोशिश करता हूं। छत पर सही सलामत पहुंच गया तो ये दो ढेले तुम्हारी तरफ फेंकूगा।'

इसके बाद उसने लम्बे बास को सभाला। उसे दोनों हाथों में तौला और फिर दो-चार बार पाव के पंजों पर नाचकर तेजी से भाग निकला'''सहसा उसके कदमों की आवाज बन्द हो गई।

सबने उसे पर फड़फड़ाते हुए बड़े चमगादड़ की भांति हवा में उड़ते देखा। अनुमान से लगता था कि वह छत पर पहुंच गया है।

यदि बिजली चमक जाती तो वे उसे देख लेते, नहीं तो'''तड़ाक से दो ढेले उनके पास आ गिरे। एक तो भैलू की टाग पर लगा।

"ओए मांयाव्या!" वह टाग पकड़कर बैठ गया। लेकिन चोट बिलकुल मामूली थी। ढेला कच्ची मिट्टी का था।

अब बग्गे ने कुछ अन्तिम निर्देश देते हुए कहा—"देखो! अब हमें यह सारा काम जल्दी से खतम करना है। इस गांव में कुछ अच्छे तकड़े जवान रहते हैं जो जान की बाजी लगा सकते हैं। इसलिए हमें चुस्ती-फुर्ती से अपना उल्लू सीधा करके नौ दो ग्यारह हो जाना चाहिए, समझे ?"

"हाव भऊ!" सबने एक स्वर में उत्तर दिया।

कपूरे ने भैलू के कन्धे पर हाथ रखकर धीमे स्वर में आदेश दिया

गई। मिट्टी का दीया उसके हाथ से गिरकर टूट गया।

बग्गा ने फुर्ती से आगे बढ़कर उसे थाम लिया। वह बेहोश हो गई। उन्होंने उसके मुह में उसीकी चुनरी ठूस-ठासकर उसके हाथ-पाव बाध वहीं कोने में डाल दिया।

आगन में पहुचे तो देखा, एक ओर ड्योढ़ी है और दूसरी ओर घर पसारा लगता था कि जिस दरवाज़े से बाहर निकलकर लड़की आई थी उसका कुण्डा उसने बाहर से चढ़ा दिया था जिससे कि वायु के वेग के कारण दरवाज़ा न खुले। अन्दर रोशनी हो रही थी और घर वालों की बातें करने की आवाज़ें सुनाई दे रही थीं।

बग्गा और साहसी दरवाज़े के दोनों ओर अपने-अपने हथियार सभाल-कर खड़े हो गए और कपूरा काफी साथियों को लिए गली का दरवाज़ा खोलने को ड्योढ़ी की ओर बढ़ा। ड्योढ़ी में मवेशी बधे थे। एक बैल तो उसे इतना पसन्द आया कि उसके मन में एकदम यह लोभ समाया कि उसे भी वह अपने साथ लेता जाए किन्तु उस रात यह बिल्कुल असम्भव था।

ड्योढ़ी का द्वार खोलकर उसने गली में झाका तो कुछ नज़र न आया। अतएव उसने बैल हाकने के अन्दाज़ में हट-हट करके दो-तीन आवाज़ें निकालीं तो कुछ साये उसकी ओर बढ़े जैसे काली दीवारों ने उन्हें जन्म दिया हो।

कपूरे ने एक जवान को बन्दूक सहित घर के पिछवाड़े सनछटी के अम्बारों के पास रहने को भेज दिया और बाकी लोगों को अन्दर ले आया।

दो घड़ी बाद वे सब लोग दरवाज़े के सामने खड़े थे। बग्गे ने छवि बढ़ाई और दरवाज़े के कुण्डे में उड़साकर जब धक्का दिया तो कुण्डा बड़ी आवाज़ से खुलकर गिरा और तड़तड़ बजने लगा। दरवाज़े के दोनों तख्ते ज़ोर-ज़ोर से पत्ता झनने लगे।

घर के लोग समझे कि लड़की ससटी का दरवाज़ा बन्द करके लौटी है। वे कुछ देर तक उसके अन्दर आने का इन्तज़ार करते रहे लेकिन जब कोई सूरत न दिखाई पड़ी तो एक पुरुष जल्दी से बाहर-निकल आया। पहले वह दरवाज़े के दोनों ओर खड़े बग्गू और साहसी को नहीं

देख पाया। जब उसने लड़की को आंगन में न पाकर गर्दन घुमाई तो बग्गू और सांहसी दीख पड़े। उसने घबराकर पूछा—"आप कौन हैं?"

इसी बीच में बाकी आदमी भी ड्योढ़ी में घुस आए और दरवाज़े में से उनकी भयानक आकृतियां दीखने लगीं। वे दोनों चुपचाप खड़े रहे। पीछे से कपूरे ने उसकी गुद्दी पर उल्टे हाथ का ऐसा झापड़ दिया कि वह लड़खड़ाकर ज़मीन पर गिर पड़ा।

यह सब कुछ पलक झपकते में हो गया। वे सब तुरन्त मकान के अन्दर घुस गए। लालटेन की रोशनी में उनके हथियार जगमगा उठे। जान के डर से घर के किसी आदमी ने शोर नहीं मचाया। उनका भी वही इलाज किया गया जो पहली लड़की का किया गया था।

कपूरा तनिक छिपा-छिपा सा रहा जिससे कि उसे कोई पहचान न ले। वह बग्गे को भीतर वाले कमरों में ले गया और उनकी पूंजी की ओर इशारा किया। देखते ही देखते सब कुछ समेट लिया गया। फिर वे सब आंगन में आ गए। बग्गू ने एक निगाह में साथियों की संख्या जांच ली और फिर वे दो हिस्सों में बंटकर पड़ोस के मकानों की ओर बढ़े जिनके सेहन एक दूसरे के साथ मिले हुए थे।

इतने में बाहर से गोली चलने की आवाज़ सुनाई दी। उनके कदम रुक गए। कान खड़े हो गए। फिर धड़ाधड़ दो गोलिया चलने की आवाज़ें सुनाई दीं। इसके साथ आंधी के शोर में पुरुषों के ललकारने की आवाज़ें सुनाई पड़ीं।

मौके की नज़ाकत समझते हुए वे बाहर की ओर भागे।

जिस नौजवान निशानेबाज़ की ड्यूटी कपूरे ने बन्दूक सहित मकान के पिछवाड़े लगाई थी, उसने हड़बड़ाहट में ये गोलियां चला दी थीं। हुआ यह है कि आंधी के ज़ोर से मनछटी और झाड़ के अम्बार हिलने लगे और लुढ़कते हुए उसकी ओर बढ़े तो वह घबड़ा गया और उसने न जाने क्या समझकर एक के बाद एक तीन गोलियां चला दीं।

इसी बीच गांव के विभिन्न भागों से खतरे की आवाज़ें आने लगीं। चर्खड़ियों वाले कुएं की ओर से 'ऐली-ऐली' का शोर उठा जिसका मत-

तब यह था कि उनके साथी उन्हे खतरे का आभास दे रहे थे। अब ...
भेलू को आगे लगाया और सरपट भागे।

चर्खडियों वाले कुए तक पहुचे तो वहा अन्धाधुध लाठिया चल रही
थी गाव के मनचले भी जल्दी मे जैसा हथियार मिला लेकर मुकाबले पर
आ जुटे किन्तु अन्धकार और आधी ने उन्हे कुछ भी करने न दिया।

उधर बग्गू के सधाए हुए साथी गाव वालों के कन्धों से कन्धे भिड़ाते
हुए बडी सफाई से इधर-उधर बिखरकर सही-सलामत गाव से निकल
गए।

इतने में कपूरे को अपनी काली घोडी दिखाई दी। वह तुरन्त फलाग
कर उसकी पीठ पर सवार हो गया।

उसका विचार था कि जब वह अपनी मुहज़ोर घोडी को एड देगा
तो वह गाव की भीड को काई की तरह चीरती हुई निकल जाएगी।
लेकिन ठीक उसी समय बिजली चमकी तो गाव वालो मे से कुछ ने उसे
पहचान लिया और आधी के भयानक शोर मे "काला तित्तर, काला
तित्तर" का शोर घुलमिल गया।

एड दिए जाने पर घोडी सिमटकर जो उछली तो गाव के मनचले
युवक ने उसकी लगाम पर झपट्टा मारा। इसपर घोडी हिनहिनाकर
पिछले पाव पर खड़ी हो गई। उसकी आखे फट गईं, कान फडफड़ाये
और आयल लहराये···सवार ने होंठ काटकर अपनी लम्बे हत्थेवाली
कुल्हाडी ऊपर उठाई किन्तु घोडी के अगले पाव ज़मीन पर लगने भी न
पाए थे कि एक छवि चमकी और कपूरे के पेट की आतें उधेडती हुई
उन्हे पेट से बाहर निकाल लाई।

वह बड़े मगरमच्छ की तरह बल खाकर औंधे मुह ज़मीन पर गिरा।
पेट के खून का फव्वारा छूटा और क्षण-भर मे ज़मीन उसके गाढे खून
से लाल हो गई···

फिर बारिश की मोटी-मोटी